
इकाई संख्या-01

(वैज्ञानिक विधि व अनुसंधान में वैज्ञानिक विधि का प्रयोग :
अर्थ, क्षेत्र, महत्व एवं उद्देश्य, (Scientific
Method and Application of Scientific
method in Research: Meaning, Scope,
Significance and Purpose,)

- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 उद्देश्य
- 1.3 वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय
- 1.4 वैज्ञानिक उपागम का अर्थ
- 1.5 वैज्ञानिक अनुसंधान का अर्थ
- 1.6 वैज्ञानिक खोज अनुसंधान
- 1.7 वैज्ञानिक अनुसंधान की विशेषतायें
- 1.8 ज्ञान की वैज्ञानिक विधि
- 1.9 वैज्ञानिक विधि के सोपान
- 1.10 सारांश
- 1.11 संदर्भ पुस्तके
- 1.12 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1.1 प्रस्तावना –

आज शिक्षा का क्षेत्र हो या कृषि या उद्योग सभी में वैज्ञानिक शोध के आधार पर नई-नई तकनीकों को अपनाकर देश का विकास किया जा रहा है। जिसके कारण आज भारत सरकार व राज्य सरकारों द्वारा भी शोध कार्यों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। यु०जी०सी० द्वारा अनेक शोध कार्यों हेतु प्रोजेक्ट प्राध्यापकों को प्रदान किये जाते हैं जिनके आधार पर शिक्षा से सम्बंधित नई नीतियां सरकार द्वारा बनयीं जाती हैं। लेकिन इन सब में सबसे महत्वपूर्ण यह कि दिव्यांग बालको के लिये सरकार द्वारा किस प्रकार के शोध कार्य किये जा रहे हैं। सरकार शोध के माध्यम से उनको क्या सुविधाएँ प्रदान कर रही है। शोध के माध्यम से हम किसी भी प्रकार की विकलांगता से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। आज हम देख रहे हैं कि भारतीय पुनर्वास परिषद द्वारा भी अनेक कार्यक्रम दिव्यांग बालको के लिये चलाये जा रहे हैं। यह दिव्यांग बालकों की शिक्षा के साथ-साथ शोध पर भी अपना ध्यान दे रही है। यहाँ अनुसंधान से हमारा अभिप्राय यह है कि अनुसंधान एक ऐसा व्यवस्थित तथा नियंत्रित वैज्ञानिक अध्ययन है जिसके अंतरगत सम्बंधित चरों व घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्धों का अन्वेषण तथा विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकीय विधि तथा वैज्ञानिक विधि के द्वारा किया जाता है, इससे प्राप्त परिणामों से वैज्ञानिक निष्कर्षों, नियमों तथा सिद्धांतों की रचना, खोज व पुष्टि की जाती है। इसका ध्यान वैज्ञानिक ज्ञान की परिधि को अधिक से अधिक विस्तृत तथा विशुद्ध करना होता है साथ ही साथ उपलब्ध नवीनतम वैज्ञानिक उपकरणों तथा कठोरतम वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा पूर्व-स्थापित तथ्यों नियमों तथा सिद्धांतों की विश्वनीयता, परिशुद्धता तथा वैधता का पुनर्परीक्षण व पुष्टिकरण करना होता है तथा उसमें यथा सम्भव नये सम्बन्धों की स्थापना करना होता है। इस प्रकार अनुसंधान से प्राप्त ज्ञान विशुद्ध, संगठित तथा क्रमबद्ध होता है। ऐसे विशुद्ध व व्यवस्थित ज्ञान को ही हम वैज्ञानिक ज्ञान की संज्ञा देते हैं।

1.2 उद्देश्य Objectives –

1. विशेष भावी शिक्षकों को शोध के प्रति जागरूक कराना।
2. विशेष भावी शिक्षकों को शोध के विभिन्न तथ्यों से अवगत कराना।
3. विशेष भावी शिक्षकों को शोध की वैज्ञानिकक्रमबद्धता से परिचित कराना।
4. छात्रों को शोध के परिणामों व महत्त्व को समझना।
5. छात्रों में शोध के प्रति वैज्ञानिक सोच को बढ़ाना।

1.3 वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय -

प्रत्येक विज्ञान के अध्ययन की अपनी ही वैज्ञानिक पद्धति होती है। अतः साधारणतः प्रत्येक व्यवस्थित, नियन्त्रित तथा वस्तुनिष्ठ अध्ययन पद्धति वैज्ञानिक कहलाती है। मैक्गुईगन के शब्दों में भी, वैज्ञानिक पद्धति एक ऐसा क्रमबद्ध प्रक्रम है, जिसके माध्यम से समस्त विज्ञान अपने प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करते हैं।

परम्परागत अर्थ में, वैज्ञानिक पद्धति शब्द से एक सापेक्षिक अर्थ का बोध होता है, अथवा एक वैज्ञानिक विधि कितनी वैज्ञानिक है, इसका निर्णय सम्बन्धित समस्या व उसके क्षेत्र से होता है। दूसरे शब्दों में, एक समस्या के अध्ययन के लिए एक अध्ययन विधि वैज्ञानिक विधि हो सकती है, परन्तु दूसरी समस्या के लिये वही विधि सापेक्षिकतर अवैज्ञानिक हो सकती है। अतः वैज्ञानिक विधि क्या है, इस प्रश्न का उत्तर आधुनिक तकनीकी अर्थ में इस कसौटी पर किया जाता है कि एक अध्ययन पद्धति में स्वतन्त्र चर के प्रभाव को कितनी अधिक मात्रा तक नियन्त्रित किया जा सकता है, तथा उसमें कितना जोड़-तोड़ सम्भव है, स्पष्टतः ऐसी व्यवस्था केवल प्रायोगिक विधि के अन्तर्गत ही पायी जाती है। अतः आधुनिक अर्थ में तथा तकनीकी कसौटी पर, वैज्ञानिक पद्धति प्रायोगिक पद्धति अथवा प्रायोगिक पद्धति ही वैज्ञानिक पद्धति कहलाती है।

परन्तु परम्परागत रूप एवं व्यावहारिक रूप से, केवल प्रायोगिक पद्धति को ही वैज्ञानिक पद्धति कहना एक कठोर व संकुचित दृष्टिकोण को ही प्रस्तुत करना है। वास्तव में अनुसन्धान साहित्य में वैज्ञानिक पद्धति से न केवल एक अध्ययन पद्धति का बोध होता है, बल्कि एक दार्शनिक विचारधारा का भी पता लगता है जिसमें कुछ अध्ययन सम्बन्धी विशेष तत्व अन्तर्निहित रहते हैं रू जैसे लुण्डबर्ग² के शब्दों में, वैज्ञानिक विधि के अन्तर्गत आँकड़ों का क्रमबद्ध प्रेक्षण, वर्गीकरण तथा विवेचन निहित रहता है। इसी प्रकार कार्ल पीयरसन के शब्दों में वैज्ञानिक पद्धति में निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट रूप से पायी जाती हैं।

1. तथ्यों का सावधानीपूर्ण तथा यथार्थ वर्गीकरण, ;पद्ध तथ्यों में व्याप्त सह-सम्बन्ध व अनुक्रम का अवलोकन।
2. सर्जनात्मक कल्पना द्वारा वैज्ञानिक नियमों की खोज।
3. उनकी अध्ययनकर्ता द्वारा स्वयं आलोचना ।
4. अन्त में, ऐसी सर्वोत्तम कसौटी की रचना करना जो कि समस्त सामान्य व्यक्तियों के लिए सामान्य रूप से वैध रहती है।

टाऊनसैण्ड के शब्दों में, “ वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय चिन्तन व व्यवहार के उन कठोरतम प्रत्यक्ष तथा प्रबल साधनों से है, जिनके माध्यम से तथ्यों को संकलित तथा संगठित किया जाता है।”

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है, कि वैज्ञानिक पद्धति एक ऐसा क्रमबद्ध प्रक्रम है जिसमें एक समस्या पर आधारित परिकल्पना से सम्बन्धित आँकड़ों का संकलन, व्यवस्थापन व विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकीय पद्धति द्वारा इस आशय से किया जाता है, जिससे परिकल्पना की सत्यता की जाँच कठोरतम् तथा वस्तुनिष्ठ मापदण्ड पर की जा सके तथा उपलब्ध परिणाम के आधार पर एक वैज्ञानिक तथ्य की स्थापना अथवा पुष्टि की जा सके।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वैज्ञानिक पद्धति का स्वरूप स्थायी नहीं होता, बल्कि गतिशील रहता है। इसके स्वरूप में जैसे-जैसे परिशुद्धता व कठोरता की मात्रा में वृद्धि होती जाती है, वैज्ञानिक पद्धति का स्वरूप और अधिक विशुद्ध होता चला जाता है।

1.4 वैज्ञानिक उपागम का अर्थ-

कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर प्रायोगिक पद्धति को ही वैज्ञानिक पद्धति कहते हैं परन्तु कुछ विज्ञान ऐसे होते हैं कि जिनकी विषय-सामग्री प्रायोगिक अध्ययन के लिए प्रायः उपयुक्त नहीं होती, परन्तु फिर भी उनमें उच्च श्रेणी के वैज्ञानिक अध्ययन होते रहते हैं। उदाहरणार्थ, शिक्षा तथा समाजशास्त्र ऐसे विज्ञान हैं कि जिनमें प्रायोगिक पद्धति का उपयोग व्यापक रूप से नहीं होता, परन्तु फिर भी इन क्षेत्रों के अध्ययनों में वैज्ञानिक विधि-तन्त्र का यथासम्भव कठोरता पूर्वक अनुसरण किया जाता है व उनमें उपयुक्त वैज्ञानिक नियन्त्रण अवश्य रहता है, तथा सम्बन्धित आँकड़ों का संकलन व विश्लेषण भी विशुद्ध सांख्यिकीय विधियों पर आधारित रहता है। अतः अनुसन्धान की ऐसी पद्धति को कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर, वैज्ञानिक पद्धति न कहकर, वैज्ञानिक उपागम ही कहा जाता है।

1.6 वैज्ञानिक अनुसंधान का अर्थ Meaning of Scientific Research

ज्ञान प्राप्ति ही मनुष्य को जैविक प्राणी से सामाजिक व आध्यात्मिक प्राणी बनाता है। ज्ञान की संरचना, ज्ञान प्राप्त करने की विधियाँ, ज्ञान की विश्वसनीयता व वैधता का क्रमबद्ध अध्ययन ज्ञान मीमांसा कहलाता है। मानव ज्ञान की प्राप्ति बहुत सारी विधियों से करता है जों निम्नलिखित हैं-

- I. मान्यताएं Tenacity
- II. सत्ता Authority

-
- III. प्रागअनुभूति
 - IV. पञ्चअनुभूति
 - V. व्यक्तिगत अनुभूति
 - VI. निगमन विधि
 - VII. आगमन विधि
 - VIII. वैज्ञानिक खोज अन्वेषण

1.7 वैज्ञानिक खोज अनुसंधान :- (Characteristics of

Scientific Research) - यह ज्ञान प्राप्त करने की सबसे वैध व विश्वसनीय विधि है।

ज्ञान डब्ल्यू वैस्ट ने वैज्ञानिक विधि व अनुसंधान को समानार्थी बतलाया है। उनके अनुसार अनुसंधान वैज्ञानिक विश्लेषण की अधिक औपचारिक, सुव्यवस्थित एवं गहन प्रक्रिया है।

शिक्षा में अनुसंधान विधियां एवं सांख्यिकी

अमेरिका के सुप्रसिद्ध दार्शनिक चार्ल्स सैंडर्स पियर्स के अनुसार श्अपनी शंकाओं के समाधान के लिए एक ऐसी विधि को खोजा जाय जिसमें विश्वासों को मनुष्येतर तत्वों द्वारा निर्धारित किया जा सके। विधि को ऐसा होना चाहिए कि सभी मनुष्य अंत में एक ही निष्कर्ष पर पहुँचे। यही विज्ञान की विधि है। इस विधि की मौलिक मान्यता है कि चीजें वास्तविक हैं और उनकी विशेषतायें लोगों की उसके बारे में दी गयी रायों पर नहीं निर्भर होती है।

1.8 वैज्ञानिक अनुसंधान की विशेषतायें (Characteristics of Scientific Research)

वैज्ञानिक अनुसंधान की मुख्य विशेषतायें निम्नवत हैं-

- I. वस्तुनिष्ठता (Objectivity) व्यक्तिगत पक्षपातों से मुक्त ज्ञान। किसी भी वस्तु, घटना या स्थिति को उसी तरह देखना जिस तरह वह है न कि अवलोकनकर्ता के व्यक्तिगत राय के आधार पर इसका आकलन।
- II. परिमाणात्मकता (Quantification) मात्रात्मक आंकड़ों के आधार पर ज्ञान का सत्यापन।
- III. विश्वसनीयता (Reliability) संगतपूर्ण परिणाम।
- IV. वैधता (Validity) उद्देश्यपूर्णता की उपस्थिति
- V. आत्म संशोधनीयता (Self Correction) बार-बार सत्यापित कर भूल सुधार की गुंजाइश।
- VI. परिकल्पना या समस्या का संभावित हल का प्रयोग जो कि समस्या के स्थायी समाधान को ढूँढने में मदद करता है।

वास्तव में वैज्ञानिक विधि ज्ञान प्राप्त करने का आधुनिक साधन है। वैज्ञानिक विधि में आगमन व निगमन दोनों विधियों का प्रयोग किया जाता है। इस विधि में विमर्शी चिंतन प्रणाली को अपनाया जाता है। शैक्षिक प्रयोजनवाद के पिता जॉन ड्यूव ने अपने पुस्तक में वैज्ञानिक विधि में प्रयुक्त विभिन्न सोपानों का वर्णन किया है। ड्यूव के अनुसार वैज्ञानिक विधि में प्रयुक्त सोपान निम्नलिखित हैं-

- I. समस्या की पहचान
- II. उद्देश्यों का निर्धारण
- III. परिकल्पना का निर्माण

-
- IV. आंकड़ों का संकलन
 - V. आंकड़ों का विश्लेषण
 - VI. परिकल्पना की स्वीकृति या निष्पत्ति
 - VII. निष्कर्ष (समस्या समाधान)

हिचटनी ने वैज्ञानिक प्रक्रिया में निहित सात अवयवों को रेखांकित किया है जो निम्नवत हैं-

1. उद्देश्यपूर्ण निरीक्षण
2. विश्लेषण एवं संश्लेषण
3. चयनात्मक प्रत्याह्वान
4. परिकल्पना
5. संपुष्टि एवं प्रयोगात्मकता
6. तर्क
 - i. सहमति द्वारा
 - ii. असहमति द्वारा
 - iii. सहपरिवर्तन द्वारा
 - iv. अवशेष भागी विधि द्वारा
 - v. सहमति एवं असहमति की संयुक्त विधि द्वारा
7. निर्णय

ज्ञान विज्ञान के सभी क्षेत्रों में अनुसंधानधरोध की वैज्ञानिक प्रणाली का प्रयोग हो रहा है। वैज्ञानिक प्रणाली ज्ञान की किसी भी शाखा में नवीन सिद्धान्तों, नियमों एवं तथ्यों की खोज में

महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस वैज्ञानिक अनुसंधान की विधि ने शिक्षा और मनोविज्ञान सहित सभी व्यावहारिक विज्ञानों के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाकर लोगों की चिंतन धारा को मोड़ दिया है। वैज्ञानिक पद्धति में जिस प्रक्रिया को अपनाते हैं वह ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों में व्यवहार में आती है तथा अध्ययन को सफल बनाने एवं नवीन ज्ञान को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होती है।

1.9 ज्ञान की वैज्ञानिक विधि (Scientific Method of Knowledge)

मानव जाति के ज्ञान संवर्द्धन एवं समस्या समाधान के कार्य में आगमन विधि की असफलता ने वैज्ञानिक तर्क विधि को जन्म दिया। इस विधि को अगमन व निगमन विधियों का सम्मिश्रण कहा जा सकता है। बेकन के द्वारा प्रतिपादित निगमन विधि के द्वारा अनियन्त्रित सूचनाओं का अम्बार लगने के कारण विश्वसनीय ज्ञान प्राप्त करने की व्यावहारिक विधि का प्रतिपादन करने की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। न्यूटन, गैलीलिओ, मैण्डल, डार्विन आदि वैज्ञानिकों ने अगमन व निगमन तर्क विधियों को मिलाकर एक नये स्वरूप में प्रस्तुत किया। निरीक्षण तथा तर्क की इस मिश्रित व्यवस्था ने वर्तमान में प्रचलित वैज्ञानिक तर्क विधि को जन्म दिया। इस विधि में पहले विशिष्ट उद्देश्यों के आधार पर परिकल्पित सामान्यीकृत निष्कर्ष निकाला जाता है एवं तत्पश्चात् विशिष्ट स्थितियों में उसका सत्यापन किया जाता है। स्पष्ट है कि इस विधि का प्रथम भाग अगमन तर्क पर आधारित है एवं दूसरा भाग निगमन तर्क पर आधारित होता है। लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व प्रतिपादित इस विधि को आज भी ज्ञान प्राप्त करने की आधुनिक विधि स्वीकार किया जाता है। यह कहना तनिक भी गलत नहीं होगा कि आधुनिक समय का समस्त ज्ञान व विज्ञान इस विधि के प्रयोग का प्रतिफल है। अरस्तू की निगमन विधि एवं बेकन की अगमन विधि का एकीकृत रूप उन्नीसवीं शताब्दी में चार्ल्स डार्विन के कार्यों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जब अपने प्रारम्भिक कार्यों में अगमन विधि का प्रयोग करने पर वह मानव विकास की कोई सन्तोषप्र व्याख्या प्रस्तुत नहीं कर

सका था, तब थॉमस माल्थस के लेख (Essay on Population) में परिलक्षित अस्तित्व के लिए संघर्ष की अवधारणा ने उसे जीवों की उत्पत्ति में प्राकृतिक चयन की परिकल्पना बनाने एवं अध्ययन द्वारा उसका परीक्षण करने के लिए प्रोत्साहित किया था। परिणामों के द्वारा अपनी परिकल्पना की पुष्टि होने पर ही उसने अनुकूलतम की उत्तरजीविता (Survival of fittest) नामक अपना प्रसिद्ध सिद्धान्त प्रस्तुत किया था। उसके द्वारा प्रयुक्त अगमन-निगमन विधि को आधुनिक वैज्ञानिक विधि के प्रयोग का एक स्पष्ट उदाहरण कहा जा सकता है। स्पष्ट है कि अगमन तर्क के विशिष्ट व कुछ चुने हुए उद्घरणों के आधार पर निष्कर्ष निकालकर पहले परीक्षण हेतु परिकल्पना बताई जाती है फिर उसे निगमन तर्क की तर्ज पर सत्यापित किया जाता है। दूसरे शब्दों में निगमन तर्क के मुख्य आधार-वाक्य को परिकल्पना के रूप में प्रस्तुत करके उसका बाद में अगमन विधि के द्वारा अवलोकित सूचनाओं के संकलन व विश्लेषण से परीक्षण किया जाता है। इस प्रकार परिकल्पना निर्माण, परिकल्पना परीक्षण व परिकल्पना सत्यापन से प्राप्त परिणाम ज्ञानार्जन करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। वैज्ञानिक विधि में सम्मिलित विभिन्न सोपानों को जॉन डीवी ने निम्नवत् पाँच भागों में विभक्त करके प्रस्तुत किया है-

- I. समस्या की पहचान तथा उसकी परिभाषा करना।
- II. परिकल्पना का निर्माण करना।
- III. सूचनाओं का संकलन, संगठन तथा विश्लेषण करना।
- IV. निष्कर्ष प्राप्त करना।
- V. विशिष्ट परिस्थितियों में परिकल्पना का सत्यापन करना।

वैज्ञानिक विधि के उपरोक्त वर्णित विभिन्न सोपान पाठकों के अगले पृष्ठ पर सारणी 1ण01 में प्रस्तुत किये जा रहे एक सरल उदाहरण से भली-भाँति स्पष्ट हो सकेंगे। निरूसन्देह वैज्ञानिक अध्ययन

उस कठिनाई या समस्या का अभाव होने से प्रारम्भ होता है जिसका समाधान खोजना होता है। समस्या के पारिभाषीकरण के द्वारा समस्या को व्यावहारिक कार्यरूप (Function of Form) में प्रस्तुत करके सुस्पष्ट किया जाता है। समस्या के चिन्हित व स्पष्ट हो जाने के उपरान्त उसके निदान हेतु कुशल अनुमान (Education of Guess) लगाकर तत्सम्बन्धी परिकल्पना बनाई जाती है। तत्पश्चात् परिकल्पना के परीक्षण हेतु आवश्यक साक्ष्यों को संकलित करके उनका संश्लेषण-विश्लेषण किया जाता है। अन्त में साक्ष्यों के संश्लेषण-विश्लेषण से प्राप्त परिणामों के आधार पर परिकल्पना को स्वीकार, अस्वीकार या परिमार्जित किया जाता है। परिकल्पना परीक्षण के द्वारा देखा जाता है कि क्या साक्ष्य परिकल्पना के पक्ष में है अथवा नहीं। वैज्ञानिक विधि का उद्देश्य परिकल्पना को शत-प्रतिशत प्रमाणित करना या निरस्त करना नहीं होता है वरन् देखना होता है कि साक्ष्य किस सीमा तक उसकी पुष्टि कर रहे हैं। यही कारण है कि अनुसंधान कार्यों में कभी-कभी परिकल्पना को संशोधित करके परिमार्जित परिकल्पना बनाई जाती है। परिकल्पना का परीक्षण करने की प्रक्रिया तब तक दोहरायी जाती है जब तक समस्या का समाधान करने के लिए स्पष्ट निष्कर्ष प्राप्त नहीं हो जाते हैं। वैज्ञानिक विधि की इस सोपानिकी (भूमतंतबील) के अन्तर्गत निरूसन्हेह परिवर्तित सोच (Reflective Thinking) को अपनाया जाता है। यही कारण है कि यह विधि ज्ञानार्जन में काफी उपयोगी है। परन्तु यहाँ यह इंगित करना उचित व आवश्यक ही होगा कि बनाई गई परिकल्पना कार्यपरक (Functioniional) होनी चाहिए एवं इसका निर्माण सदैव ही पूर्व ज्ञान या अनुभव से नहीं होता है। कभी-कभी अन्तरूपज्ञा (Insight) अथवा कल्पना (Imagination) के आधार पर भी परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। वैज्ञानिक विधि से प्राप्त ज्ञान की सात प्रमुख विशेषताएँ क्रमशः वस्तुनिष्ठता (Objectivity), सुव्यवस्थता (Systematicness), प्रमाणीयता (Verifiability), परिशुद्धता (Accuracy), सार्वभौमिकता (Universality), भविष्य-कथन

क्षमता (Predicatability) एवं गत्यात्मकता (Dynamism) है। इन सभी पदों के अर्थ तथा आशय अपने-आप में सुस्पष्ट होने के कारण यहाँ पर इनकी व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है।

ज्ञान प्राप्त करने की उपर्युक्त वर्णित पाँचों विधियाँ मानव जाति के क्रमिक विकास की साक्षी रही है। तथा इन्हें मानव जाति के विकास की अवस्थाएँ भी कहा जा सकता हैं। मानव विकास प्रक्रिया के अनुक्रम में जैसे-जैसे मानव मस्तिष्क का विकास होता गया जैसे-तैसे वह ज्ञानार्जन की अधिक अच्छी विधियाँ खोजने में सफलता प्राप्त करता गया। निरूसन्देह वर्तमान में ज्ञानार्जन की सर्वाधिक श्रेष्ठ विधि वैज्ञानिक विधि ही मानी जाती है एवं यह सम्पूर्ण विश्व में प्रचुरता से प्रयुक्त की जा रही है। ज्ञान प्राप्त करने की विधियों को कुछ विद्वान विश्वास विधि (Tenacity Method), प्राधिकार विधि (Autonomy Methods), अन्त-प्रज्ञा विधि (Intution Method), तथा वैज्ञानिक विधि (Scientific Method), के रूप में भी वर्गीकृत करते हैं। विश्वास की विधि वस्तुतः विश्वास पर आधारित सत्यों को ज्ञान मानती है, प्राधिकार की विधि विशेषज्ञता को स्वीकार करती है, अन्तर प्रज्ञा की विधि मनन-चिन्तन के दौरान अचानक प्राप्त सूझ पर आश्रित होती है, जबकि विज्ञान की विधि प्रमाणों व उनके सत्यापन को स्वीकार करती है।

सारणी – 1.01

1.10 वैज्ञानिक विधि के सोपान (Steps of Scientific Method)

पद 1 : समस्या की पहचान व पारिभाषीकरण - पढ़ने की मेज पर रखे विद्युत लैम्प का खटका खोलने पर प्रकाश का न होना।

पद 2: परिकल्पना का निर्माण- पद 1 में वर्णित समस्या के सम्भावित कारणों पर विचार करने पर निम्न परिकल्पनाएँ एक-एक करके बनाई व परीक्षित की जा सकती हैं-

- i. विद्युत आपूर्ति बाधित है।

- ii. सॉकिट में लैम्प का प्लग ठीक [ग] से नहीं लगा है।
- iii. बल्ब फ्यूज हो गया है।

पद 3 : सूचनाओं का संकलन, संगठन तथा विश्लेषण - पद 2 पर बनाई गई परिकल्पना के परीक्षण हेतु आवश्यक सूचनाएँ एकत्रित की जा सकती हैं। उपरोक्त तीनों परिकल्पनाओं के लिए वाँछित सूचना निम्नवत् हो सकती हैं-

1. अन्य घरों, कमरों व विद्युत उपकरणों से विद्युत आपूर्ति की स्थिति ज्ञात करना।
2. सॉकिट में लैम्प को पुनरू लगाकर स्विच ऑन करना।
3. बल्ब के फिलामेण्ट का निरीक्षण करना।

पद 4 : निष्कर्ष प्राप्ति - पद 3 में संकलित सूचना के विश्लेषण से वस्तुस्थिति के बारे में निष्कर्ष प्राप्त किया जा सकता है। इस उदाहरण में वर्णित तीनों परिकल्पनाओं से सम्बन्धित निष्कर्ष निम्नवत् हो सकते हैं-

- i. अन्य घरों, कमरों, व उपकरणों से विद्युत आपूर्ति ठीक है।
- ii. लैम्प का प्लग सॉकिट में ठीक [ग] से लगा है।
- iii. बल्ब का फिलामेण्ट टूटा हुआ है।

पद 5 : विशिष्ट परिस्थितियों में परिकल्पना का सत्यापन -

इस प्रकार प्राप्त निष्कर्ष से बनाई गई परिकल्पना को सत्य, असत्य या आंशिक सत्य होने के सम्बन्ध में सत्यापन किया जा सकता है। उपरोक्त तीनों परिकल्पनाओं के लिए निम्न स्थिति हो सकती है-

1. अन्य उपकरणों के ठीक काम करने पर - निरस्त या असत्य
2. सॉकिट में प्लग को पुनरू लगाने पर लैम्प का न जलना - निरस्त या असत्य
3. बल्ब का फिलामेण्ट टूटा नजन आना - स्वीकृत या सत्या

1.10 सारांश (Summary) -

एक विषय कितना वैज्ञानिक है, इसका निर्णय इस कसौटी द्वारा निर्धारित होता है कि वह विषय किस सीमा तक प्रायोगिक विधि का प्रयोग अपने क्षेत्र के नियमों तथा सिद्धान्तों की रचना व खोज में करता है। स्पष्टतः इस मापदण्ड पर भौतिक विज्ञानों में होने वाले अनुसन्धान, प्रायः पूर्णतः वैज्ञानिक कहे जा सकते हैं, और सामाजिक विज्ञानों में होने वाले अनुसन्धान, यदि प्रायोगिक विधितन्त्र पर आधारित नहीं हैं, तब उनको उच्च वैज्ञानिक स्तर का अनुसन्धान कहना कठिन ही होगा। परन्तु यहाँ एक स्मरणीय तथ्य यह है कि एक विषय में उच्च कोटि के अनुसन्धान हो सकते हैं, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि ऐसे अनुसन्धानों से उच्चकोटि का वैज्ञानिक ज्ञान भी उपलब्ध होता हो। एक कठोर वास्तविकता यह है कि प्रत्येक विषय की विषय-सामग्री तथा अनुसन्धान पद्धति की अपनी ही विशेषताएँ होती हैं। कुछ विषयों में प्रायोगिक पद्धति का सरलतापूर्वक उपयोग किया जा सकता है, और कुछ में नहीं। कुछ विज्ञान ऐसे भी हैं, जिनमें केवल क्षेत्र प्रेक्षण का उपयोग भी सम्भव है, जैसे नक्षत्रशास्त्र तथा मानव विज्ञान। परन्तु फिर भी इन विषयों में उच्च श्रेणी के अनुसन्धान होते

रहते हैं। नक्षत्रशास्त्र में तो केवल क्षेत्र-प्रेषण के आधार पर ही उच्चकोटि के भविष्यकथन सदैव होते रहते हैं।

अतः उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए एक तर्क-संगत प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि अनुसन्धानों में केवल प्रायोगिक विधि के प्रयोग को ही वैज्ञानिकता की कसौटी मानना कहाँ तक न्यायोचित है। व्यावहारिक दृष्टिकोण में विभिन्न विज्ञान का इस कसौटी के आधार पर पदानुक्रम विभिन्न विज्ञानों के विकास के लिये स्पष्टतः अहितकर होगा तथा उनके श्रेणीबद्ध हो जाने से उनमें पारस्परिक श्रेष्ठता के प्रश्न पर भी अनेक वाद-विवाद उठने की आशंका रहती है। अतः विभिन्न विज्ञानों में एकता, अनुरूपता तथा निरन्तरता बनाये रखने के लिये अनुसन्धानों को स्थूल रूप से केवल दो भागों में विभाजित कर दिया गया है।

1. प्रथम श्रेणी में मौलिक अनुसन्धान आते हैं। मौलिक अनुसन्धान की विशेषता यह है कि इनमें प्रायोगिक पद्धति की अनुप्रयुक्ति पूर्ण रूप में उचित व उपयुक्त रहती है।
2. दूसरी श्रेणी में, व्यावहारिक अनुसन्धान आते हैं, जिनमें प्रायोगिक विधि का उपयोग प्रायः बहुत उपयुक्त नहीं होता है। ऐसे अनुसन्धानों को पद्धतिपरक अनुसन्धान भी कहा जाता है।

1.11 संदर्भ पुस्तके-

- राय, पारसनाथ. (2008) : *शिक्षा में अनुसंधान*: एक परिचय, आगरा: साहित्य मंदिर.
 कौल, लोकेश. (2011) : *शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली*, नई दिल्ली: विकास पब्लिकेशन्स.
 शर्मा, आर० ए० (2008) : *शैक्षिक अनुसंधान*, मेरठ: आर० लाल० पब्लिकेशन्स.
 कपिल, एच०के० (2012): *अनुसंधान विधियाँ*. आगरा: भार्गव बुक डिपो.
 गुप्ता एस० पी० (2017) : *अनुसंधान संदर्शिका*. इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन.

1.12 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

प्रश्न 1. वैज्ञानिक पद्धति से आपका क्या अभिप्राय है? वैज्ञानिक अनुसंधान की विशेषतायें का विस्तार से वर्णन कीजिय?

प्रश्न 2 वैज्ञानिक उपागम का अर्थ बताएँ। ज्ञान की वैज्ञानिक विधि का विस्तार से वर्णन कीजिय?

प्रश्न 3 शोध से आप क्या समझते हो? वैज्ञानिक विधि के सोपान को लिखिय।

इकाई संख्या- 02

शैक्षिक अनुसंधान: अर्थ, क्षेत्र, महत्व एवं उद्देश्य, (Research : Concept, Definition and Purpose,)

इकाई की रूपरेखा

- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 उद्देश्य
- 2.3 अनुसंधान का अर्थ
- 2.4 अनुसंधान की विशेषताएं
- 2.5 शिक्षा अनुसंधान का अर्थ
- 2.6 शैक्षिक अनुसंधान की विशेषताएं
- 2.7 शिक्षा अनुसंधान का क्षेत्र
- 2.8 शिक्षा अनुसंधान का महत्व
- 2.9 शिक्षा अनुसंधान के उद्देश्य
- 2.10 सारांश
- 2.11 शब्दावली
- 2.12 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
- 2.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
- 2.14 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना:

मानवीय सभ्यता का विकास अनुसंधान का ही परिणाम है। किसी भी समस्या का समाधान शोध कार्यो द्वारा किया जाता है। शोध कार्यो द्वारा ज्ञान वृद्धि के साथ मानव विकास तथा कल्याण को महत्व दिया जाता है। शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालकों के व्यवहार में विकास एवं परिवर्तन करना है। अनुसंधान तथा शिक्षण क्रियाओं द्वारा इन लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सकती है। शिक्षण की समस्याओं तथा बालक के व्यवहार के विकास संबंधी समस्याओं तथा बालक के व्यवहार के विकास संबंधी समस्याओं आ अध्ययन करने वाली प्रक्रिया को शिक्षा अनुसंधान कहते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में

नवाचार को लाने के लिए अनुसंधान बहुत ही आवश्यक है। शिक्षण –अधिगम प्रक्रिया को अधिक से अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए अनवरत शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता है। अतः इसके लिए सर्वप्रथम शैक्षिक अनुसंधान को समझना आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई में आप शैक्षिक अनुसंधान का अर्थ, क्षेत्र, महत्व एवं उद्देश्य के बारे में अध्ययन करेंगे। इस इकाई में शिक्षाशास्त्र को एक पृथक अनुशासन क्यों माना जाता है इसके बारे में भी आप अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- शैक्षिक अनुसंधान का अर्थ बता पायेंगे।
- शैक्षिक अनुसंधान के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- शैक्षिक अनुसंधान के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।
- शिक्षाशास्त्र को एक पृथक अनुशासन क्यों मानते हैं इसको स्पष्ट कर सकेंगे।

2.3 अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Research) :

अनुसंधान एक व्यवस्थित तथा सुनियोजित प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है तथा मानव जीवन को सुगम तथा प्रभावी बनाया जाता है। अनुसंधान वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान की एक प्रभावशाली विधि है। अनुसंधान के द्वारा उन मौखिक प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया जाता है जो अनुत्तरित हैं। अनुसंधान में नवीन तथ्यों की खोज की जाती है तथा नवीन सत्यों का प्रतिपादन किया जाता है। शोध कार्यो द्वारा प्राचीन प्रत्ययों तथा तथ्यों का नवीन अर्थापन किया जाता है।

शोध कार्यो द्वारा चरों का सहसंबंध का विश्लेषण किया जाता है। यह संबंध विशिष्ट परिस्थितियों पर निर्भर करता है। प्रत्येक शोध के चरों का सहसंबंध विशिष्ट अवधारणाओं पर आधारित होता है। विकासात्मक शोध कार्यो में चरों की प्रभावशीलता का अध्ययन किया जाता है।

जॉन डब्लू बैस्ट के अनुसार, “अनुसंधान अधिक औपचारिक, व्यवस्थित तथा गहन प्रक्रिया है जिसमें वैज्ञानिक विधि विश्लेषण को प्रयुक्त किया जाता है। अनुसंधान में व्यवस्थित स्वरूप को सम्मिलित किया जाता है जिसके फलस्वरूप निष्कर्ष निकाले जाते हैं और उनका औपचारिक आलेख तैयार किया जाता है।”

डब्लू0एस0 मुनरो के अनुसार, “अनुसंधान की परिभाषा समस्या समाधान के अध्ययन विधि के रूप में की जा सकती है जिसके समाधान आंशिक तथा पूर्ण रूप में तथ्यों एवं प्रदत्तों पर आधारित होते हैं। शोध कार्यों में तथ्य-कथनों, विचारों ऐतिहासिक तथ्यों आलेखों पर आधारित होते हैं, प्रदत्त प्रयोगों तथा परीक्षाओं की सहायता से एकत्रित किये जाते हैं। शैक्षिक अनुसंधानों का अंतिम उद्देश्य यह होता है कि सिद्धान्तों का शैक्षिक क्षेत्र में क्या उपयोगिता है? प्रदत्तों का संकलन तथा शोध कार्य नहीं है, अपितु एक प्राथमिक आवश्यकता है।”

रेडमेन एवं मोरी के अनुसार, “नवीन ज्ञानकी प्रप्ति के लिए व्यवस्थित प्रयास ही अनुसंधान है।”

2.4 अनुसंधान की विशेषताएं (Characteristics of Research) :

वास्तव में अनुसंधान वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान की एक प्रभावशाली विधि है। उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर अनुसंधान की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है-

- i. अनुसंधान एक तार्किक प्रक्रिया है।
- ii. अनुसंधान जानने का एक वैज्ञानिक विधि है।
- iii. अनुसंधान की प्रक्रिया से नवीन ज्ञान की वृद्धि एवं विकास किया जाता है।
- iv. इसमें सामान्य नियमों तथा सिद्धान्तों के प्रतिपादन पर बल दिया जाता है।
- v. शोध प्रक्रिया व्यवस्थित व सुनियोजित होती है।
- vi. इसमें वस्तुनिष्ठ तथा वैध प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है।
- vii. अनुसंधान की प्रक्रिया में प्रदत्तों के आधार पर परिकल्पनाओं की पुष्टि की जाती है।
- viii. अनुसंधान कार्य को धैर्यपूर्वक संपन्न करना होता है।
- ix. इसमें आत्मनिष्ठता का परित्याज करना होता है।
- x. शोध कार्य में गुणात्मक तथा परिमाणात्मक प्रदत्तों की व्यवस्था की जाती है और उनका विश्लेषण करके निष्कर्ष निकाले जाते हैं।
- xi. शोध कार्य का आलेख सावधानी पूर्वक किया जाता है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए :

1.अनुसार, “नवीन ज्ञानकी प्रप्ति के लिए व्यवस्थित प्रयास ही अनुसंधान है।”
2. अनुसंधान जानने का एक..... विधि है।
3. शोध कार्य में..... का परित्याज करना होता है।
4. शोध कार्य में..... प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है।

2.5 शिक्षा अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Educational Research) :

‘शिक्षा’ एक स्वतंत्र अध्ययन तथा शोध का अनुशासन है। अनुसंधान की प्रक्रिया द्वारा इस अध्ययन क्षेत्र का विकास किया जा सकता है। शैक्षिक अनुसंधान से शिक्षा से संबंधित मौलिक प्रश्नों का उत्तर दिया जा सकता है तथा समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इसके परिणाम स्वरूप नवीन ज्ञान की वृद्धि की जा सकती है। शिक्षा अनुसंधान के प्रमुख मानदंड निम्नलिखित हैं -

- i. शिक्षा के क्षेत्र में नवीन ‘तथ्यों’ की खोज, नवीन सिद्धांतों तथा सत्यों का प्रतिपादन करना अर्थात् नवीन ज्ञान की वृद्धि करना।
- ii. शिक्षा के क्षेत्र में नवीन ज्ञान की व्यावहारिक उपयोगिता होनी चाहिए, जिससे शिक्षण अभ्यास में सुधार तथा विकास करके उसे प्रभावशाली बनाया जा सके।
- iii. शिक्षा अनुसंधान की समस्या क्षेत्र-पाठ्यक्रम, प्रभावशाली शिक्षण विधियों इत्यादि का विकास करना।
- iv. शिक्षा अनुसंधान की समस्या का स्वरूप इस प्रकार हो, जिसका प्रत्यक्षीकरण किया जा सके व उसकी उपयोगिता हो सके।

बहुत से विद्वानों द्वारा दी गयी शिक्षा अनुसंधान की अनेक परिभाषायें उपलब्ध हैं परन्तु यहाँ पर आपके लिए कुछ महत्वपूर्ण तथा व्यापक परिभाषाओं का उल्लेख किया गया है ताकि आप शैक्षिक अनुसंधान के स्वरूप को समझ सकें।

मुनरो के अनुसार, “शिक्षा अनुसंधान का अंतिम लक्ष्य शैक्षिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना और शिक्षा के क्षेत्र में नवीन प्रक्रियाओं का विकास करना है।”

डब्लू0एम0टैवर्स के अनुसार, “शिक्षा अनुसंधान वह प्रक्रिया है जो शैक्षिक परिस्थितियों में व्यवहार विज्ञान का विकास करती है।”

एफ0एल0 भिटनी के अनुसार, “शिक्षा अनुसंधान का उद्देश्य शिक्षा की समस्याओं का समाधान करके उनमें योगदान करना है जिसमें वैज्ञानिक विधि, दार्शनिक विधि तथा गहन चिन्तन का प्रयोग किया जाता है। वैज्ञानिक स्तर पर विशिष्ट अनुभवों का मूल्यांकन और व्यवस्था की जाती है, इसके अंतर्गत परिकल्पनाओं का प्रतिपादन किया जाता है। इनकी पुष्टि से सिद्धान्तों का प्रतिपादन होता है, इसमें निगमन चिन्तन (deductive thinking) किया जाता है। दार्शनिक शोध विधि में व्यापक सामान्यीकरण किये जाते हैं जिसमें सत्य एवं मूल्यों का प्रतिस्थापन किया जाता है।”

वास्तव में शिक्षा अनुसंधानों का अंतिम लक्ष्य शिक्षण सिद्धान्तों तथा अधिनियमों का प्रतिपादन करना है और शिक्षा की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाना है।

2.6 शैक्षिक अनुसंधान की विशेषताएँ (Characteristics of Educational Research) :

शिक्षा के क्षेत्र में नवीन ‘तथ्यों’ की खोज, नवीन सिद्धान्तों तथा सत्यों का प्रतिपादन करना अर्थात् नवीन ज्ञान की वृद्धि करना ही शैक्षिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य है। शैक्षिक शोध या अनुसंधान अपने आप में बहुत सारी विशेषताओं को अपने अंदर समाहित किए हुए होती है। उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर शैक्षिक अनुसंधान की विशेषताएँ को निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया जा सकता है :

- i. शैक्षिक अनुसंधान कार्य-कारण संबंधों पर आधारित होता है।
- ii. यह अन्तर-विषयात्मक पद्धति पर आधारित होता है।
- iii. इसमें प्रायः निगमनात्मक तर्क पद्धति का सहारा लिया जाता है।
- iv. शैक्षिक अनुसंधान में व्यवहृत व क्रियात्मक शोध पद्धति का प्रयोग अधिकता के साथ होता है।
- v. यह शिक्षा के क्षेत्र में सुधार करता है तथा उसके विकास के लिए समस्याओं का समाधान करता है।
- vi. यह सूझ तथा कल्पना पर आधारित होता है।
- vii. इसमें उस सीमा तक शुद्धता नहीं होती है जितनी प्राकृतिक विज्ञानों संबंधी अनुसंधान में होती है।
- viii. शैक्षिक अनुसंधान केवल विषय-विशेषज्ञों द्वारा ही नहीं किया जाता अपितु शिक्षकों, शैक्षिक प्रशासकों, समुदाय सदस्यों व समाज सेवियों द्वारा भी किया जा सकता है।

-
- ix. शैक्षिक अनुसंधान में इन्द्रियानुभविक विधियों का प्रयोग अधिक नहीं किया जा सकता।
 - x. इसे यांत्रिक नहीं बनाया जा सकता।
 - xi. इस प्रकार के अनुसंधान बहुत खर्चीले नहीं होते।
 - xii. यह शिक्षा के स्वस्थ दर्शन पर आधारित होता है।
 - xiii. शैक्षिक अनुसंधान समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र व अन्य मानविकी विषयों के शोध निष्कर्षों पर आधारित होता है।
-

2.7 शिक्षा अनुसंधान का क्षेत्र (Scope of Educational Research) :

शिक्षा अनुसंधान का क्षेत्र बहुत ही व्यापक है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सन्निहित सभी अवयवों को अनुसंधान के माध्यम से प्रभावशाली बनाया जा सकता है। शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र निम्नवत हैं जिन्हें शोध या अनुसंधान के माध्यम से प्रभावशाली बनाया जा सकता है और समस्त शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाया जा सकता है -

- i. शिक्षक व्यवहार
- ii. छात्र व्यवहार
- iii. शैक्षिक तकनीक
- iv. पाठ्यक्रम निर्माण
- v. पाठ्यक्रम मूल्यांकन
- vi. शिक्षण विधियों, प्रतिधियों व कौशल का विकास
- vii. शिक्षणशास्त्र के सिद्धांतों का निर्माण व उनका मूल्यांकन।
- viii. शैक्षिक प्रशासन सिद्धांत का निर्माण व उसका मूल्यांकन।
- ix. विद्यालय प्रबंधन का मूल्यांकन करना व नवीन प्रणाली का विकास करना।
- x. अधिगम सिद्धांतों का विकास व मूल्यांकन
- xi. शिक्षा दर्शन का समस्त क्षेत्र।
- xii. शिक्षा मनोविज्ञान का समस्त क्षेत्र।
- xiii. शिक्षा-समाजशास्त्र का समस्त क्षेत्र।
- xiv. पर्यावरण शिक्षा, जनसंख्या शिक्षा, विशिष्ट शिक्षा, समावेशी शिक्षा, जीवन पर्यंत शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, मक्त व दूरस्थ शिक्षा इत्यादि।

2.8 शिक्षा अनुसंधान का महत्व (Significance of Educational Research) :

शिक्षा अनुसंधान दो शब्दों- शिक्षा तथा अनुसंधान से मिलकर बना है। शिक्षा की प्रमुख क्रियाएँ- शिक्षण (Teaching), प्रशिक्षण (Training), अनुदेशन (Instruction) तथा प्रतिपादन (Indoctrination) है और इसका कार्य क्षेत्र कक्षा शिक्षण है। अनुसंधान की प्रक्रिया द्वारा समस्याओं का समाधान ज्ञात किया जाता है। शिक्षा की समस्यायें उपरोक्त क्रियाओं तथा कक्षा-शिक्षण से संबंधित होती है। शिक्षा अनुसंधान से सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्षों में वृद्धि या परिवर्तन किया जाता है तथा नवीन प्रवृत्तियों का अनुशीलन भी किया जाता है। शिक्षा अनुसंधानों के निष्कर्षों की उपयोगिता होती है। यह शिक्षा अनुसंधान की प्रमुख विशेषता है। शिक्षा अनुसंधान से मानवीय ज्ञान में वृद्धि होती है और विकास की क्रियाओं में सुधार तथा परिवर्तन किया जाता है। मानवीय ज्ञान की तीन अवस्थाएँ होती हैं।

- ज्ञान का संचयन (Preservation of Knowledge) (पुस्तकालय द्वारा)
- ज्ञान का प्रचार एवं प्रसार (Transmission of Knowledge) (शिक्षा संस्था द्वारा)
- ज्ञान में वृद्धि (Advancement of Knowledge) (शिक्षा अनुसंधान द्वारा)

आधुनिक युग में ज्ञान के प्रचार एवं प्रसार में इंटरनेट प्रणाली का उपयोग किया जाता है। सभी प्रकार की जानकारी तथा शोध अनुसंधानों के संबंधों में विश्वस्तरीय साहित्य उपलब्ध हो जाता है। शिक्षा अनुसंधान एक औपचारिक ज्ञान वृद्धि तथा समस्या समाधान की प्रक्रिया है। इसलिए शिक्षा की सभी प्रक्रियाओं तथा कक्षा शिक्षण के सभी पक्षों पर अनुसंधान की आवश्यकता है। शिक्षा अनुसंधान के महत्व का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है-

1. मौलिक प्रश्नों का उत्तर ज्ञात करने हेतु शिक्षा के क्षेत्र में नवीन सिद्धांतों का विकास करना व अभी तक के अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तर देना शिक्षा अनुसंधान के माध्यम से ही किया जा सकता है। जैसे शिक्षा में दर्शन क्यों पढ़ाया जाए? शिक्षा में मनोविज्ञान क्यों पढ़ाया जाय? कक्षा में शिक्षक विविध प्रकार की क्रियाएँ क्यों करता है ? इत्यादि।
2. शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों की मौलिक समस्याओं तथा स्थानीय समस्याओं के समाधान हेतु अनुसंधान की आवश्यकता है।

3. शिक्षणशास्त्र के सिद्धांतों का मूल्यांकन करना और नवीन सिद्धांतों का प्रतिपादन करना। इन नवीन सिद्धांतों का संबंध शिक्षणशास्त्र के अभ्यास तथा शिक्षणशास्त्र में आस्था एवं विश्वास से होता है।
4. भारतीय शिक्षा का प्रारूप पश्चिमी देशों की देन है। भारतीय शिक्षा पर ब्रिटेन का विशेष प्रभाव है। इसलिए अन्य देशों के नवीन प्रवर्तनों, नियमों, सिद्धांतों तथा मापन के उपकरणों के अनुशीलन की आवश्यकता है।
5. कक्षा शिक्षण प्रारूपों के विभिन्न पक्षों पर शोध अध्ययन की आवश्यकता है। कक्षा-शिक्षण के अनेक आयाम तथा पक्ष हैं। इन आयामों तथा पक्षों पर शिक्षा अनुसंधान की विशेष आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा के अध्ययन एवं अनुसंधान का कक्षा-शिक्षण ही मुख्य क्षेत्र है। शिक्षा अनुसंधान की आवश्यकता शिक्षक के लिए, छात्र के लिए, शिक्षा-मनोविज्ञान हेतु, शिक्षा तकनीकी हेतु, शिक्षण कौशल, कक्षा में प्रस्तुतीकरण जैसे क्षेत्रों में है। कक्षा को समाज का लघु रूप, कक्षा-शिक्षण में अधिगम स्वरूपों का सृजन तथा कक्षा-शिक्षण की समस्याएँ जैसे मुद्दे पर शिक्षा अनुसंधान की महत्वपूर्ण भूमिका है।
6. पाठ्यक्रम एवं पुस्तकों का मूल्यांकन करना तथा आधुनिक शिक्षा हेतु नवीन पाठ्यक्रमों का विकास करना।
7. माध्यमों की सार्थकता एवं उपयोगिता का मूल्यांकन करना तथा विशिष्ट शिक्षण हेतु आव्यूहों का विकास करना।
8. विद्यालय प्रबंधन का मूल्यांकन करना और उसमें सुधार हेतु नवीन प्रणाली का विकास करना।
9. शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में सामान्य अध्ययन की अपेक्षा सूक्ष्म अध्ययनों तथा विकासात्मक अध्ययनों की आवश्यकता है। इसके संबंध में कुछ क्षेत्र दिए गए हैं जो दर्शन शास्त्र के क्षेत्र यथा-तत्त्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा, मूल्यमीमांसा तथा तर्कमीमांसा से सम्बंधित हैं-
 - i. शिक्षा दर्शन संबंधी अध्ययनों में दर्शन के तत्व विचारों तथा प्रमाण विचारों को ज्ञात करना।
 - ii. शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में शोध अध्ययनों में सूक्ष्म तत्वों को महत्व देना।
 - iii. विशिष्ट शिक्षा में अधिगम असमर्थी छात्रों हेतु प्रभावशाली अधिगम विधियों/प्रविधियों पर शोध की आवश्यकता।
 - iv. शिक्षा तकनीकी के विभिन्न माध्यमों, आव्यूहों तथा उपकरणों की प्रभावशीलता का अध्ययन क्षेत्रों की वैयक्तिक भिन्नता, विषय भिन्नता के संदर्भ में आवश्यक है।
 - v. छात्र- शिक्षण के पर्यवेक्षण में प्रशिक्षक को कक्षा के प्रस्तुतीकरण का गहनता से विश्लेषण की आवश्यकता है।

- vi. विशिष्ट में नैतिक गुणों, मूल्यों तथा भावात्मक पक्षों के विकास की आवश्यकता के लिए।

2.9 शिक्षा अनुसंधान के उद्देश्य (Purpose of Educational Research) :

शिक्षा अनुसंधान की समस्याओं में विविधता अधिक है। इन सारी विविधताओं को निम्नलिखित चार शीर्षकों के अंतर्गत रखा जा सकता है जो शिक्षा अनुसंधान के उद्देश्य को संबोधित करते हैं - ।

1. **सैद्धान्तिक उद्देश्य (Theoretical objective)**- शिक्षा अनुसंधान में वैज्ञानिक शोध कार्यों द्वारा नये सिद्धान्तों तथा नए नियमों का प्रतिपादन किया जाता है। इस प्रकार के शोध कार्य व्याख्यात्मक होते हैं। इसके अन्तर्गत चरों के संबंध की व्याख्या की जाती है। इस प्रकार के शोध कार्यों से प्राथमिक रूप से नवीन ज्ञान की वृद्धि की जाती है, जिनका उपयोग शिक्षा की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में किया जाता है।
2. **तथ्यात्मक उद्देश्य (Factual objective)**- शिक्षा के अन्तर्गत ऐतिहासिक शोध कार्यों द्वारा नए तथ्यों की खोज की जाती है। उनके आधार पर वर्तमान को समझने में सहायता मिलती है। इन उद्देश्यों की प्रकृति वर्णनात्मक होती है, क्योंकि तथ्यों की खोज करके, उनका अथवा घटनाओं का वर्णन किया जाता है। नवीन तथ्यों की खोज शिक्षा प्रक्रिया के विकास तथा सुधार में सहायक होती है।
3. **सत्यात्मक उद्देश्य का निर्धारण (Formulation of true objective)**- दार्शनिक शोध कार्यों द्वारा नवीन सत्यों का प्रतिपादन किया जाता है। इनकी प्राप्ति अन्तिम प्रश्नों के उत्तरों से की जाती है। दार्शनिक शोध कार्यों द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों, सिद्धांतों तथा शिक्षणविधियों तथा पाठ्यक्रम की रचना की जाती है। शिक्षा की प्रक्रिया के अनुभवों का चिन्तन बौद्धिक स्तर पर किया जाता है जिससे नवीन सत्यों तथा मूल्यों का प्रतिपादन किया जाता है।
4. **उपयोगिता का उद्देश्य (Application objectives)**- शिक्षा अनुसंधान के निष्कर्षों का व्यावहारिक प्रयोग होना चाहिए, परन्तु कुछ शोध कार्यों में केवल उपयोगिता को ही महत्व दिया जाता है, ज्ञान के क्षेत्र में योगदान नहीं होता है। इन्हें विकासात्मक अनुसंधान भी कहा जाता है। क्रियात्मक अनुसंधान से शिक्षा की प्रक्रिया में सुधार तथा विकास किया जाता है।

अर्थात् इनका उद्देश्य व्यावहारिक होता है। स्थानीय समस्या के समाधान से भी इस उद्देश्य की प्राप्ति की जाती है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए :

5. मानवीय ज्ञान कीअवस्थाएँ होती हैं।
6. मानवीय ज्ञान की अवस्थाएँ हैं ज्ञान का संचयन, ज्ञान का प्रसार व।
7. एन.सी.ई.आर.टी. का फुल फार्म है।
8. शैक्षिक अनुसंधान मेंका प्रयोग अधिक नहीं किया जा सकता।
9. शैक्षिक अनुसंधान में प्रायःतर्क पद्धति का सहारा लिया जाता है।
10. शैक्षिक अनुसंधान मेंशोध पद्धति का प्रयोग अधिकता के साथ होता है।

2.10 सारांश (Summary) :

अनुसंधान एक व्यवस्थित तथा सुनियोजित प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है। अनुसंधान वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान की एक प्रभावशाली विधि है। अनुसंधान में नवीन तथ्यों की खोज की जाती है तथा नवीन सत्यों का प्रतिपादन किया जाता है। शोध कार्यो द्वारा प्राचीन प्रत्ययों तथा तथ्यों का नवीन अर्थापन किया जाता है।

शिक्षण की समस्याओं तथा बालक के व्यवहार के विकास संबंधी समस्याओं तथा बालक के व्यवहार के विकास संबंधी समस्याओं के अध्ययन करने वाली प्रक्रिया को शिक्षा अनुसंधान कहते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार को लाने के लिए अनुसंधान बहुत ही आवश्यक है। शिक्षण –अधिगम प्रक्रिया को अधिक से अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए अनवरत शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता है।

‘शिक्षा’ एक स्वतंत्र अध्ययन तथा शोध का अनुशासन है। अनुसंधान की प्रक्रिया द्वारा इस अध्ययन क्षेत्र का विकास किया जा सकता है। शैक्षिक अनुसंधान से शिक्षा से संबंधित मौलिक प्रश्नों का

उत्तर दिया जा सकता है तथा समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इसके परिणाम स्वरूप नवीन ज्ञान की वृद्धि की जा सकती है।

शिक्षा अनुसंधान का क्षेत्र बहुत ही व्यापक है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सन्निहित सभी अवयवों को अनुसंधान के माध्यम से प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

शिक्षा अनुसंधान से मानवीय ज्ञान में वृद्धि होती है और विकास की क्रियाओं में सुधार तथा परिवर्तन किया जाता है। मानवीय ज्ञान की तीन अवस्थाएँ होती हैं। शिक्षा अनुसंधानके द्वारा ज्ञान का संचयन (Preservation of Knowledge), ज्ञान का प्रचार एवं प्रसार (Transmission of Knowledge), तथा ज्ञान में वृद्धि (Advancement of Knowledge) किया जाता है।

शिक्षा को एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में माना जाता है। क्योंकि एक पृथक अनुशासन होने के लिए निम्नलिखित विशेषताएँ मौजूद होनी चाहिए यथा निजी पाठ्यवस्तु, निजी पाठ्यक्रिया, निजी विधियाँ, अनुसंधान की निजी विधियाँ, पृथक अनुसंधान चिंतन क्षेत्र, निजी अनुसंधान क्षेत्र, व स्वतंत्र संकाय जो कि इस विषय में मौजूद हैं।

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में आपने शैक्षिक अनुसंधान का अर्थ, क्षेत्र, महत्व एवं उद्देश्य के बारे में अध्ययन किया। इस इकाई में आपने यह भी समझा कि शिक्षाशास्त्र को एक पृथक अनुशासन क्यों माना जाता है।

2.11 शब्दावली (Glossary) :

अनुसंधान: अनुसंधान वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान की एक प्रभावशाली विधि है जिसके द्वारा नवीन तथ्यों की खोज की जाती है तथा नवीन सत्यों का प्रतिपादन किया जाता है। अनुसंधान कार्यो द्वारा प्राचीन प्रत्ययों तथा तथ्यों का नवीन अर्थापन किया जाता है।

शैक्षिक अनुसंधान : शैक्षिक अनुसंधान, शिक्षा से संबंधित मौलिक प्रश्नों का उत्तर वैज्ञानिक विधि से देता है तथा शैक्षिक समस्याओं का समाधान प्रभावशाली विधि से करता है जिसके परिणाम स्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में नवीन ज्ञान की वृद्धि की जाती है।

स्वतंत्र अनुशासन: एक पृथक विषय के रूप में जिसका निजी पाठ्यवस्तु व पाठ्यक्रिया, निजी शिक्षण विधियाँ, अनुसंधान की निजी विधियाँ, पृथक अनुसंधान चिंतन क्षेत्र, निजी अनुसंधान क्षेत्र व स्वतंत्र संकाय हो।

2.12 अपनी अधिगम प्रगति जानिए।

1. रेडमेन एवं मोरी 2. वैज्ञानिक 3. आत्मनिष्ठता 4. वस्तुनिष्ठ तथा वैध 5. तीन 6. ज्ञान में वृद्धि 7. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद 8. इन्द्रियानुभविक विधियों 9. निगमनात्मक 10. व्यवहृत व क्रियात्मक

2.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. राय, पारसनाथ (2008) : शिक्षा में अनुसंधान: एक परिचय, आगरा, साहित्य मंदिर.
2. कौल, लोकेश (2011) : शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली, नई दिल्ली, विकास पब्लिकेशन्स.
3. शर्मा, आर० ए० ((2008): शैक्षिक अनुसंधान, मेरठ, आर० लाल० पब्लिकेशन्स.
4. Kuhn, T.S. (1962). The Structure of Scientific Revolutions, Chicago, Illinois: University of Chicago Press.
5. Mouly, G.J. (1963) The Science of Educational Research, Illinois: University of Chicago Press.

2.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. शैक्षिक अनुसंधान का अर्थ व परिभाषा लिखिए।
2. शैक्षिक अनुसंधान के महत्व की व्याख्या कीजिए।
3. शैक्षिक अनुसंधान के उद्देश्यों का मूल्यांकन कीजिए।
4. शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र का वर्णन कीजिए।
5. शिक्षाशास्त्र को एक पृथक अनुशासन क्यों माना जाता है? इसको स्पष्ट कीजिए।

इकाई संख्या 03 : शिक्षा और विशेष शिक्षा में अनुसंधान व शोध के लिये व्यावसायिक क्षमतायें (Research in Education and Special Education & Professional Competencies for Research)

इकाई की रूपरेखा

- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 उद्देश्य
- 3.3 विशेष शिक्षा में अनुसंधान की आवश्यकता
- 3.4 भारतवर्ष में विशेष शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता हेतु मान्यतायें
- 3.5 विशेष शिक्षा अनुसंधान में शोध क्षेत्रों की प्राथमिकता का निर्धारण
- 3.6 विशेष शिक्षा अनुसंधान के महत्वपूर्ण क्षेत्र
- 3.7 शोध के लिये व्यावसायिक क्षमतायें
- 3.8 सारांश
- 3.9 शब्दावली
- 3.10 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
- 3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
- 3.12 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना:

शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र में शिक्षा दर्शन, शिक्षा के उद्देश्यों का वर्गीकरण व निर्धारण, इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए नियोजन, व्यवस्थापन, संचालन, समायोजन, धन व्यवस्था, शिक्षण विधि, सीखना तथा उसे प्रभावित करने वाले तत्व, प्रशासन, पर्यवेक्षण, मूल्यांकन, आदि सभी आते हैं। पिछले कुछ वर्षों में मापन तथा मूल्यांकन के क्षेत्र में पर्याप्त खोज की गयी है तथा उसके आधार पर शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई है। सीखने की नयी नयी विधियों का आविष्कार, सीखने को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों की तुलनात्मक महत्ता, छात्रों तथा शिक्षकों के पारस्परिक संबंध उनमें अंतःक्रिया, पाठ्यक्रम, पाठ्य-पुस्तकों, सहायक

सामग्री और उसका उपयोग, आदि सभी क्षेत्रों में अनुसंधान हो रहे हैं। प्रस्तुत इकाई में आप शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र व शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की प्राथमिकताओं का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्रों को नामांकित कर सकेंगे।
- शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्रों की व्याख्या कर सकेंगे।
- शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की प्राथमिकताओं को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की प्राथमिकताओं का मूल्यांकन कर सकेंगे।

3.3 शिक्षा में अनुसंधान की आवश्यकता (Need of Research in Education):

शिक्षा में शोध की आवश्यकता पर विचार करने हेतु इस अवधारणा को महत्व देना होगा कि शैक्षिक अनुसंधान भी अन्य विज्ञानों में अनुसंधानों की भाँति शिक्षा सिद्धांतों तथा विधियों पर आधारित होगा क्योंकि शिक्षा भी एक विषय है। एक विषय के अध्ययन के रूप में शिक्षा में विज्ञान की अपेक्षा तकनीकी गुणों का अधिक समावेश है और इसीलिए शिक्षा में किसी भी अन्य विज्ञान के उन सभी प्रत्ययों, विधियों और मापनी का प्रयोग किया जा सकता है जो शैक्षिक समस्याओं के अनुसंधान हेतु सहायक हो। एक या अधिक विज्ञान की विधियों का प्रयोग को शिक्षा में थोपना उचित नहीं है। शैक्षिक अनुसंधान से ही शिक्षा-सिद्धांतों एवं विधियों में वृद्धि सम्भव है। अतः शिक्षा में अनुसंधान क्षेत्र का निर्धारण करते समय शिक्षा की तकनीकी विशेषताओं का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिये।

1. तकनीकी के रूप में शिक्षा से तात्पर्य शैक्षिक प्रयोग अर्थात् शिक्षण-अधिगम से है जो कि शिक्षा विषय का मुख्य अंग है। उसके अलावा शेष शिक्षा विषय का संबंध उत्पादन वितरण एवं किसी व्यक्ति का प्रबन्ध, प्रविधि और सहायता से है जो शैक्षिक प्रक्रिया को अग्रसारित करने में सहायक होती है। रूस तथा अमेरिका में भी ऐसा ही हो रहा है। इससे तात्पर्य यह नहीं है कि हम अनुकरण कर रहे हैं, वरन् वास्तविकता यह है कि शिक्षा का मुख्य केन्द्र ही

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया है। हमारे महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय की लाखों कक्षाओं में शैक्षिक प्रक्रिया को सप्ताह में छः दिन का ही माना जाता है। “माना जाता है” शब्द का प्रयोग जान-बूझकर कर दिया गया है। शोध अध्ययन की उपयोगिता स्पष्ट है चाहे क्षेत्र मनोविज्ञान, समाजिक विज्ञान, तकनीकी या अर्थशास्त्र का हो इसका प्रभाव नहीं पड़ता है। क्योंकि अनुसंधान का उद्देश्य शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाना है। यदि शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का ज्ञान ठीक से नहीं है तो शिक्षा में शोध या शैक्षिक अनुसंधान पर विचार करना व्यर्थ है। शैक्षिक प्रक्रिया का विकास तथा सुधार केवल शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के उचित ज्ञान एवं प्रयोगों पर ही निर्भर है। शिक्षा में सुधार की अत्यन्त आवश्यकता है। तदर्थ आयामों, जो केवल व्यक्तिगत दृष्टिकोण (Preconceived notions) पर आधारित हैं, उनसे शिक्षा में सुधार असंभव है। शिक्षा के क्षेत्र में मौलिक तथा क्रियात्मक (Applied) दोनों ही प्रकार के अनुसंधान शोध हो सकते हैं।

2. शिक्षा - शिक्षण को कला की संज्ञा दी जाती है। अन्य सभी कलाओं की भाँति शिक्षण और अधिगम भी क्रियायें हैं। शिक्षण एवं अधिगम की परिभाषा व्यवहार में परिवर्तन के रूप में करने पर, अनुसंधान के क्षेत्र में उन चरों का चिन्तन, पहचान, विश्लेषण, मापन तथा परिचालन (Manipulation) करना सम्भव है जो उस व्यवहार को उत्पन्न करने तथा बनाये रखने में सहायक है। उन चरों में मुख्य चर शिक्षक तथा छात्र हैं। अन्य चर व्यक्तिगत तथा समूहों में औपचारिक एवं अनौपचारिक सम्बन्धों में होते हैं। कुछ चर समाज या समुदाय (स्कूल-कॉलेज या विश्वविद्यालय तथा नौकरशाही) में भी जो कार्यक्रम को व्यवस्थित करते हैं। उनके अतिरिक्त कुछ चर पुस्तकों, पाठ्यक्रमों तथा मूल्यांकन हेतु सहायक सामग्री में भी होते हैं। शिक्षण अधिगम में अनुसंधान के लिए शिक्षा में उन सभी कारकों का अध्ययन आवश्यक है जो शिक्षण-अधिगम को सुधार सकें। (आज तीव्रगति वाले इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटरों के साथ बहु-चरक प्रतिमान का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में संभव है, जो कुछ समय पहले असंभव थी)। इस प्रकार अनुसंधान एक माध्यम से शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जा सकता है तथा वे अपने स्कूलों में छात्रों के अपेक्षित व्यवहारों को पुनर्बलन दे सकेंगे। जब तक हम यह न जान लें कि शिक्षण-अधिगम क्या है, शिक्षण- शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं, पाठ्य-वस्तु तथा कार्यक्रम क्या महत्व है, तब तक इस क्षेत्र में सुधार असंभव है।
3. शिक्षण-अधिगम के क्षेत्र में अधिकतर मौलिक अनुसंधान है जो कि मनावैज्ञानिक है लेकिन बहुत सी शोध-समस्यायें क्रियात्मक भी हैं। अभिक्रमित-अनुदेशन की प्रभावशीलता को अनुसंधान के माध्यम से ज्ञात किया जा सकता है। अभिक्रमित अनुदेशन की प्रभावशीलता का परीक्षण बहुत ही व्यापक है। इसे शैक्षिक अनुसंधान के माध्यम से ही ज्ञात किया जा सकता है। अभिक्रमित अनुदेशन का प्रयोग प्रतिभाशाली, व पिछड़े हुए छात्रों के लिए किया जा सकता है। अभिक्रमित अनुदेशन अधिगम के अतिरिक्त शिक्षा के सभी स्तरों पर यथा

- अभिक्रमित अधिगम की पुस्तकों, सहायक-सामग्री तथा अन्य सह-पाठ्यगामी तथा मूल्यांकन सामग्री के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इनके समन्वयन के सन्दर्भ में शैक्षिक अनुसंधान के माध्यम से ही जाना जा सकता है जिससे कि अपेक्षित अधिगम की प्राप्ति व शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।
4. सभी शैक्षिक अनुसंधान शिक्षण अधिगम के अनुसंधान नहीं हैं। शिक्षा के क्षेत्र में बहुत सी अन्य आधारभूत एवं क्रियात्मक समस्याएँ भी हैं जिसमें शोध की आवश्यकता है। शैक्षिक यन्त्रों का निर्माण भी एक मुख्य समस्या है। चरित्र का निर्माण, ज्ञान का परिवर्तन, कौशल की प्राप्ति, योग्यता का विकास, रूचि एवं अभिवृत्तियों का निर्माण भी एक स्कूलों तथा कॉलेजों की आधारभूत समस्याएँ हैं। भाषा की समस्या भी बहुत अधिक है। कौन सी भाषा सीखनी चाहिये, किस उम्र में किस स्तर पर भाषाओं का कैसा समन्वयन होना चाहिए, जो कि अधिगम तथा चिन्तन के विकास में सहायक हो। स्कूल जाने की उम्र क्या होनी चाहिये ? क्या विषय होने चाहिये ? बच्चे की विकास की क्या गति होनी चाहिये, विकास का कैसा प्रभाव होना चाहिये, ये सभी शैक्षिक अनुसंधान के विषय हो सकते हैं। बच्चों की किस उम्र में मुख्य विषयों का विभाजन तकनीकी, व्यवसायिक तथा कृषि सम्बन्धी अन्य विषयों के रूप में होनी चाहिये, यह भी मुख्य शोध समस्या है। इस प्रकार की सभी समस्याएँ शिक्षण-अधिगम से प्रभावित होंगी। यह शोधकर्ता पर निर्भर है कि वह इसे मुख्य उद्देश्य बनाये या शोध के मुख्य उद्देश्य का अतिरिक्त उद्देश्य रखे।
 5. आधुनिक समाज में शिक्षा का स्वरूप व्यवसायिक है। शिक्षा ज्ञानार्जन तथा इसके प्रसार से सम्बन्धित है। प्रत्येक आधुनिक समाज नवीन या प्राचीन ज्ञान के अर्जन तथा इनके प्रसार पर निर्भर करता है ताकि वह समाज को एक प्रगतिशील दिशा दे सके। शिक्षा व्यवसाय का प्रबन्धक भी अन्य व्यवसायों के प्रबन्धक की तरह ही अनेक समस्याओं से घिरा रहता है। उस दृष्टिकोण से शिक्षा का अहित भी हो सकता है। भारत जैसे निर्धन देश में न तो अति उन्नत शिक्षा व्यवस्था की कल्पना की जा सकती है, न ही अतीत के आश्रम व्यवस्था की भाँति तेजस्वी शिक्षकों की। शैक्षिक नियोजन व प्रशासन जैसे पहलू को ज्यादा महत्व देना चाहिए ताकि अधिकतम शैक्षिक उपलब्धि हो सके। अतः शैक्षिक अनुसंधान के माध्यम से शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया तथा ज्ञान के व्यवसाय दोनों ही क्षेत्रों को और प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
 6. शोध के साधनों की अपेक्षा शोध की विधियों तथा समस्याओं का चिन्तन अधिक सरल है। शिक्षा में साधनों से अभाव के कारण ही अच्छी शैक्षिक शोध समस्याओं का भी अभाव है। शिक्षा के साधनों में वृद्धि होने पर ही शैक्षिक शोध का विकास सम्भव है। शिक्षा में शोध के लिए नियमित धन लगाने से ही अच्छी शोध की आशा की जा सकती है। वास्तव में केन्द्र तथा राज्य के बजटों का अनुपात जो शिक्षा में अनुसंधान में निमित्त रखा गया है यह बहुत

कम है। शिक्षा के लिए निश्चित किए गए समस्त बजट का केवल 0.10 प्रतिशत ही अनुसंधान के लिए निर्धारित किया गया है। और शायद उच्च शिक्षा स्तर पर यह और भी कम है। शिक्षा में सम्पूर्ण बजट का कम से कम पाँच प्रतिशत अनुसंधान के लिए निर्धारित करना आवश्यक है। शिक्षा में अनुसंधान केन्द्र का विषय होने के कारण राज्य सरकार एक प्रतिशत से अधिक व्यय नहीं करना चाहती, अतः ऐसी दशा में बजट के अन्तर्गत व्यवस्था करके इस कमी को पूरा किया जा सकता है।

7. अनुसंधान के विकास में केवल वित्तीय साधन की ही समस्या के रेखांकित नहीं किया जा सकता है वरन् मानवीय साधनों का भी घोर अभाव है। अधिक कुशल शोधकर्ताओं की कमी को एकदम से ही दूर नहीं किया जा सकता है। उन सभी अभावों को दूर करने के लिए विश्वविद्यालयों तथा नेशनल इन्सटीट्यूट ऑफ एजुकेशन में शिक्षा विषय में गुणवत्तापूर्ण पी.एच.डी. कार्यक्रम को पुष्ट करना होगा तथा अन्य विषयों एवं संस्थाओं से शोध-कर्ताओं को आकर्षित करना होगा। प्रशिक्षण के अतिरिक्त शोध संगठन का भी विकास करना चाहिए। शोध संगठन से तात्पर्य सहकारी अनुसंधान से है। भारत वर्ष में सहकारी अनुसंधान का प्रचलन शुरू हुआ है जिसमें तेजी से वृद्धि होनी चाहिए। इसका अर्थ है कि शोधकर्ताओं को कुछ विशिष्ट सुविधायें तथा स्वतंत्रता भी चाहिये ताकि वे गुणवत्तापूर्ण शोध कर सकें। अनुसंधान को अधिक उत्पादक तथा भविष्य के लिए वास्तव में संतोषजनक होने चाहिये। अकेले शोध कार्य करने की अपेक्षा साथ शोध कार्य करने के द्वारा शैक्षिक समस्या का पूरा निराकरण किया जा सकता है। अनुसंधान के क्षेत्र में प्रतिभाओं के आकर्षण हेतु शोधवृत्ति की सुविधा आवश्यक होगी। इस विषय में प्रत्येक को मौलिक रूप से चिन्तन करना होगा। शिक्षा में उच्चतम स्तर के लिए सुविधायें एक आचार्य के लिए उपलब्ध कराई जायें अथवा नहीं पर प्रतिभावान को यह सुविधा मिलनी ही चाहिए।
8. कुशल प्रशिक्षित व्यक्तियों की प्राप्ति तब ही हो सकती है यदि एक देश में केवल 10 या 12 संख्याओं में ही शोधकेन्द्रों को विकसित किया जाय। इसी प्रकार से वारत प्रशिक्षण हो तथा सह-शोध कार्य हो और उन्हें नेशनल इन्सटीट्यूट ऑफ एजुकेशन में शोधवृत्ति भी मिलनी चाहिये। केवल कुछ ही केन्द्रों में अच्छी एवं वास्तविक शोध की सुविधायें उपलब्ध होनी चाहिये।
9. यदि शोध का संगठन उचित रूप से किया जाए तो उपलब्ध साधनों से ही अच्छे शोध परिणामों की आशा की जा सकती है। शिक्षा विभाग तथा कालेजों में एम्.एड. स्तरों पर शोध प्रबन्ध का लिखना सिखाया जा सकता है। शोध प्रबन्धन का लेखन कुशलतापूर्वक होना चाहिए। इन विस्तृत शोध समस्याओं में से शोध निदेशिका छोटी-छोटी, विशिष्ट, तर्क-संगत समस्याओं की विवेचना करें। एक निदेशिका के साथ उन सभी समस्याओं पर शोध

किया जाय जिसमें वह विशेषज्ञ हो। शोधकर्ताओं के इन समूहों को परस्पर मिलने की सुविधा दी जाय ताकि वे अपने विचारों का अनुभवों का आदान प्रदान कर सकें, अपने कार्य में सुधार कर सकें, इस प्रकार एम.एड. लघु शोध-प्रबन्धन के द्वारा दस-पंद्रह वर्षों में शोध-कार्य का विस्तार सम्भव है।

10. शिक्षा-अनुसंधान यदि केवल शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं तक ही सीमित रहा तो भविष्य में बहुत अधिक आशा नहीं की जा सकती है। अच्छे शोध कार्य के लिए, विश्वविद्यालयों में शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर शैक्षिक शोध के विभिन्न वर्गों में सामाजिक, वैज्ञानिक समस्याओं का भी समावेश करना होता है। इस प्रकार का अन्तःविषयक सहयोग न केवल शोध अध्ययन को उन्नत करेगा वरन् शोध में मौलिक चिन्तन को भी बल मिलेगा। अन्तःविषयक सहयोग शिक्षा के विकास में भी सहायक सिद्ध होगा।

3.4 भारतवर्ष में शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता हेतु मान्यतायें (Assumptions with regard to the need of Educational Research in India) :

भारतवर्ष में भी शैक्षिक अनुसंधान की आवश्यकता हेतु निम्नलिखित मान्यतायें हैं-

- i. शिक्षा प्रत्यय का आगमन विदेशों से हुआ हैं, अतः प्रत्ययों का अर्थ अपने देश के अनुरूप करना होगा।
- ii. जन साधारण की शिक्षा ने अनेक प्रकार की समस्या उत्पन्न कर दी है। इन पर शोध करना आवश्यक हो गया है।
- iii. भारतीय सामाजिक मूल्यों व विचारों में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहा है। इसलिए शिक्षा की पुनर्चना करने के लिए शोध निष्कर्ष आवश्यक है।
- iv. भारतीय संविधान में 14 वर्ष तक आयु वाले बालकों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था है। इनके परिणामस्वरूप नवीन समस्यायें उत्पन्न हुई हैं। इस पर शोध करना अपेक्षित हो गया है। इस प्रकार के शोध अध्ययन की प्राथमिकता दी जाये।
- v. शिक्षा प्रणाली में प्रजातान्त्रिक मूल्यों की सुरक्षा होनी आवश्यक है। इसलिए शिक्षा में परिवर्तन शोध निष्कर्षों के आधार पर ही किया जा सकता है।
- vi. भारतीय संविधान में सभी को शिक्षा प्राप्ति के समान अवसर की व्यवस्था है। अतः विविध प्रकार के पाठ्यक्रमों को सम्मिलित करने से सभी प्रकार के छात्रों को सुविधा प्रदान की जा सकती है।

3.5 शिक्षा अनुसंधान में शोध क्षेत्रों की प्राथमिकता का निर्धारण (Fixing up the priorities of areas Education of Research):

निम्नलिखित क्षेत्रों के अन्तर्गत शिक्षा अनुसंधान में शोध क्षेत्रों की प्राथमिकता का निर्धारण किया जा सकता है-

1. **शिक्षा दर्शन (Educational Philosophy)**- यह शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अनुसंधान का क्षेत्र है जो शिक्षा के सिद्धांतों का विकास करता है। इस क्षेत्र में जो भी शोध कार्य विभिन्न स्तरों पर किये गये हैं उनमें भारतीय चिन्तनों का शिक्षा में योगदान का अध्ययन किया गया है। इसके अतिरिक्त कुछ शोध कार्य तुलनात्मक अध्ययन के रूप में भी किये गये हैं जिनमें विशेष रूप से भारतीय और पश्चिमी देशों के चिन्तकों को लिया गया है। कुछ अन्य शोध-कार्य में दार्शनिक आयात का प्रयोग करके शिक्षा समस्याओं की तत्व मीमांसा और ज्ञान मीमांसा का विश्लेषण किया है। अतः सरलता से अनुभूति की जा सकती है कि शिक्षा के क्षेत्र में दार्शनिक पक्षों का अध्ययन का विशेष महत्व है। दार्शनिक पक्ष से यहाँ तात्पर्य शिक्षा के सैद्धांतिक पक्ष से है।

उनके प्रमुख क्षेत्र इस प्रकार हैं-

- i. अध्यापक शिक्षा का दर्शन।
 - ii. आधुनिक पाठ्यक्रमों की प्रवृत्ति के दार्शनिक आधार।
 - iii. शिक्षा के उद्देश्यों तथा मूल्यों में परिवर्तन।
 - iv. भारतीय चिन्तकों के अनुसार मीमांसा शिक्षा-दर्शन में मानववाद।
 - v. आधुनिक शिक्षा के स्वरूप के दार्शनिक आधार।
2. **शिक्षा मनोविज्ञान (Educational Psychology)**- शिक्षा अनुसंधान के क्षेत्र में अधिकांश अनुसंधान इसी क्षेत्र में हुए हैं। अधिकांश शोध कार्यों में मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षिक चरों में सह-सम्बन्ध का अध्ययन किया गया है, परन्तु शोध के द्वारा अधिगम प्रक्रिया के समझने का प्रयास किसी ने नहीं किया। अतः इस क्षेत्र में आज भी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को समझने की आवश्यकता है। कक्षा-अधिगम सम्बन्धी समस्याओं के अध्ययन के लिए शोध कार्यों का नियोजन किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त अभिप्रेरणा, पुनर्बलन तथा व्यक्तिगत भिन्नता के अनुसार शिक्षण-अधिगम परिस्थितियों का अध्ययन करना आवश्यक है।

3. **शिक्षा के सामाजिक आधार (Educational sociology)**- शिक्षा अनुसंधान के अन्तर्गत सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक नियंत्रण का अध्ययन प्रत्यक्ष रूप से किया जा सकता है, परन्तु इस तरह के शोध बहुत कम किये गए हैं। यह क्षेत्र शिक्षा अनुसंधान की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है तथा शोध क्रियाओं के नियोजन की नितांत आवश्यकता है। शिक्षा संस्थाओं की प्रभावशीलता का अध्ययन सामाजिक परिवर्तन के सन्दर्भ में किया जा सकता है। सामाजिक परिवर्तन के सन्दर्भ में शिक्षक की भूमिका का अध्ययन करना भी आवश्यक है। इस प्रकार शिक्षा अनुसंधान में सामाजिक पक्षों का अध्ययन को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
4. **शिक्षण-विधि (Methods of Teaching)**- इस क्षेत्र में शोध की क्रियाओं की व्यवस्था नहीं की गयी है। शिक्षा में जितनी भी शोध कार्य हुए हैं, उनमें लगभग पाँच प्रतिशत कार्य इस क्षेत्र में हुए हैं परन्तु अपरोक्ष रूप में शोध के कार्य शिक्षण विधियों से ही सम्बन्धित हैं। शिक्षा के क्षेत्र में यह शोध का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है।
अतः इस क्षेत्र के अधोलिखित पक्षों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए:
 - i. शिक्षण विधि तथा शिक्षण विषय के सन्दर्भ में।
 - ii. शिक्षण प्रविधियाँ तथा अनुदेशन प्रक्रिया।
 - iii. शिक्षण विधि एवं प्रविधि अधिगम के स्वरूप के सन्दर्भ में।
 - iv. सुधारात्मक शिक्षण अथवा उपचारी अनुदेशन।
 - v. शिक्षण आव्यूह का विकास।
5. **पाठ्यक्रम (Curriculum)**- पाठ्यक्रम सम्बन्धी शोध पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। अतः इस क्षेत्र को शोध के लिए प्राथमिकता देना आवश्यक है। पाठ्यक्रम संबंधी शोध के लिए व्यवहारिक नियोजन की आवश्यकता है। इस क्षेत्र में अधोलिखित पक्षों पर शोध के कार्यों का नियोजन किया जाना चाहिए-
 - i. शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रमों में परिवर्तन की आवश्यकता।
 - ii. शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रमों के विकास की प्रवृत्ति।
 - iii. पाठ्यक्रम के परिवर्तन में अवरोध।
 - iv. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम तथा
 - v. अध्यापक शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम।
6. **शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन (Measurement and Evaluation in Education)**- शिक्षा के शोध कार्यों के 25 प्रतिशत शोध इसी क्षेत्र में किए गए हैं। अधिकांश शोध कार्यों में अन्तर्गत शैक्षिक तथा मनोविज्ञान परिश्रमों का निर्माण किया गया है और उन्हें प्रमाणीकृत बनाया है।

आज के सन्दर्भ में उन्हें शोध के अन्तर्गत नहीं रखा जाता क्योंकि इनसे नवीन ज्ञान का योगदान नहीं होता है। अतः इस क्षेत्र में कुछ नवीन प्रकार की समस्याओं को मतवा दिया जाता है, जो इस प्रकार है-

- i. शिक्षा की महत्वपूर्ण उपलब्धियों को पहचानना और उन्हें व्यावहारिक रूप में लिखना।
- ii. छात्रों के व्यवहार परिवर्तन के मूल्यांकन करने के लिए मापदण्ड परीक्षाओं का निर्माण करना।
- iii. विद्यालय तथा छात्रों की उपलब्धियों का समग्र रूप में मूल्यांकन करना। पाठ्यक्रमों का आंकलन करना।

7. **अध्यापक शिक्षा (Teacher Education)**- अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में भी शोध के लिए समुचित ध्यान नहीं दिया है। इस क्षेत्र में भी शोध कार्य किये गए वे कक्षा से बाहर ही हुए। अतः आवश्यकता इस बात की है ऐसे शोध कार्यों का नियोजन किया जाये जो कक्षा के अन्तर्गत निरीक्षणों पर आधारित हो। अध्यापक शिक्षा के अन्तर्गत शोध के लिए अधोलिखित पक्षों के अध्ययन को प्राथमिकता दी जाये-

- i. अध्यापक शिक्षा का दर्शन।
- ii. प्रभावशील शिक्षकों के लिए मानदण्ड
- iii. कक्षा की शाब्दिक तथा अशाब्दिक अन्तःप्रक्रिया का अध्ययन।
- iv. शिक्षण कौशलों का विकास तथा छात्रों द्वारा शिक्षक का मूल्यांकन।
- v. अध्यापक कक्षा में प्रतिमानों का मूल्यांकन एवं विकास।
- vi. अध्यापक शिक्षा का पाठ्यक्रम तथा
- vii. शिक्षा हेतु मानक तथा आचार संहिता।

8. **शिक्षा निर्देशन (Educational guidance)**- शिक्षा का यह क्षेत्र शोध की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है परन्तु भारतवर्ष में इस क्षेत्र पर शोध कार्य बहुत हुए। एम०एड स्तर पर कुछ कार्य व्यावसायिक अभिरूचियों तथा शैक्षिक निष्पत्तियों पर किये गये हैं। वृत्तिक विकास शोध कार्य किये भी जायें। इस क्षेत्र में ऐसे कार्यों को करने की आवश्यकता है जिससे निर्देशन विधियों का भारतीय सन्दर्भ में विकास किया जाए। इसी प्रकार व्यवसायिक अभिरूचियों का अध्ययन अपनी परिस्थिति में किया जाए।

9. **शिक्षा प्रशासन तथा वित्तीय व्यवस्था (Educational Administration and Finance)**- भारतवर्ष में कुछ शोध कार्य इस क्षेत्र में आरम्भ किए गए हैं जो शिक्षा नियोजन, प्रशासन एवं व्यवस्था से सम्बन्धित है। कुछ शोध कार्य विद्यालय भवन, साज-सज्जा के निरीक्षण से सम्बन्धित है। इस क्षेत्र पर शोध कार्यों में प्राथमिकता देने की आवश्यकता है

शिक्षणमें अर्थ-व्यवस्था सम्बन्धी शोध कार्यों की आवश्यकता है जिससे विद्यालयों के विभिन्न स्तरों पर अर्थ स्रोतों तथा इकाई व्यय का अध्ययन किया जाय।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1. तत्व मीमांसा और ज्ञान मीमांसा के क्षेत्र में शोध का विषयके अंतर्गत आता है।
2. भारतीय संविधान मेंतक आयु वाले बालकों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था है।
3. भारतीय संविधान में सभी को शिक्षा प्राप्ति केकी व्यवस्था है।
4. सामाजिक परिवर्तन के सन्दर्भ में शिक्षक की भूमिका का अध्ययन करना शोध विषय के अंतर्गत आता है।
5. शिक्षा के लिए निश्चित किए गए समस्त बजट का केवल प्रतिशत ही अनुसंधान के लिए निर्धारित किया गया है।

3.6 शिक्षा अनुसंधान के महत्वपूर्ण क्षेत्र (Important areas of Educational Research) :

उपरोक्त शोध क्षेत्रों के अतिरिक्त शिक्षा के अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र अधोलिखित हैं जिन्हें शोध हेतु प्राथमिकता देनी चाहिये।

- i. शिक्षा तकनीकी, अनुदेशन तकनीकी एवं प्रणाली विश्लेषण तथा दूरवर्ती शिक्षा कम्प्यूटर शिक्षा आदि।
- ii. जनसंख्या की शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा।
- iii. विकलांग बच्चों की शिक्षा तथा विशिष्ट शिक्षा।
- iv. प्रतिभाशाली एवं पिछड़े बालकों की शिक्षा।
- v. अध्यापक प्रभावशीलता एवं शिक्षण प्रभावशीलता।
- vi. कक्षा वातावरण एवं कक्षा अन्तःक्रिया विश्लेषण।
- vii. पृष्ठपोषण प्रविधियों तथा पुनर्बलन प्रविधियाँ।
- viii. विज्ञान शिक्षा तथा प्रयोगात्मक शोध अध्ययन।
- ix. प्रौढ़ शिक्षा, सतत्-शिक्षा, व निरौपचारिक शिक्षा।

-
- x. शिक्षा पर्यावरण तथा अनुदेशनात्मक प्रक्रिया।
 - xi. शिक्षण-शास्त्रीय विश्लेषण (Pedagogical analysis)

3.7 शोध के लिये व्यावसायिक क्षमतायें (Professional Competencies for Research)

अनुसंधान का कार्य आम तौर पर इतना सरल नहीं होता है जितना प्रायः सामान्य व्यक्तियों के द्वारा समझा जाता है। वस्तुतः कोई भी अनुसंधान कार्य अत्यन्त कठिन दुरूह व श्रमसाध्य होता है जिसे करने के लिए कुशल तथा सुयोग्य व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। अतः किसी भी अनुसंधानकर्ता को उन सभी गुणों से युक्त होना चाहिए जो अनुसंधान कार्य को करने के लिए आवश्यक होते हैं। सारांश रूप में कहा जा सकता है कि किसी अच्छे अनुसंधानकर्ता में निम्न प्रमुख गुण होने चाहिए-

- I. आकर्षक व्यक्तित्व Attractive Personality
- II. अच्छा स्वास्थ्य Good Health
- III. बौद्धिक ईमानदारी Intellectual Honesty
- IV. सहनशीलता व धैर्य Tolarence and Pationces
- V. बुद्धिमत्ता Intelligence
- VI. हँसमुख स्वभाव Pleasing Temprament
- VII. अध्यवसायी Persistence
- VIII. सृजनात्मक चिन्तन Creative Thinking
- IX. वैचारिक स्पष्टता Clearitive in Thinking
- X. व्यवहार-कुशलता Well Behaved

-
- XI. निष्पक्षता Unbiasedness
 - XII. जिज्ञासा Curiosity
 - XIII. सतर्कता Alertness
 - XIV. आत्म-नियन्त्रण Self Control
 - XV. तार्किक शक्ति Reasoning Power
 - XVI. विचार-विमर्श क्षमता Discussion Ability
 - XVII. व्यापक दृष्टिकोण Broad Vision
 - XVIII. शीघ्र निर्णय Quick Decision
 - XIX. विषय में निपुणता Subject Mastery
 - XX. सत्य अभिलाषा Passion for Truth
 - XXI. अनुसंधान प्रविधियों में निपुणता Mastery over Research Techniques

उपर्युक्त गुणों से युक्त अनुसंधानकर्ता ही अपने अनुसंधान कार्य को अच्छे ढंग से पूरा करते हुए स्वयं द्वारा प्रतिपादित वस्तुनिष्ठ, विश्वसनीय व वैध निष्कर्षों के द्वारा मानव जाति के ज्ञान भण्डार में सार्थक ढंग से बढ़ोत्तरी कर सकता है।

3.8 सारांश (Summary) :

शैक्षिक अनुसंधान भी अन्य विज्ञानों में अनुसंधानों की भाँति शिक्षा सिद्धांतों तथा विधियों पर आधारित है क्योंकि शिक्षा भी एक विषय है। एक विषय के अध्ययन के रूप में शिक्षा में विज्ञान की अपेक्षा तकनीकी गुणों का अधिक समावेश है और इसीलिए शिक्षा में किसी भी अन्य विज्ञान के उन सभी प्रत्ययों, विधियों और मापनी का प्रयोग किया जा सकता है जो शैक्षिक

समस्याओं के अनुसंधान हेतु सहायक हो। एक या अधिक विज्ञान की विधियों का प्रयोग को शिक्षा में थोपना उचित नहीं है। शैक्षिक अनुसंधान से ही शिक्षा-सिद्धांतों एवं विधियों में वृद्धि सम्भव है। अतः शिक्षा में अनुसंधान क्षेत्र का निर्धारण करते समय शिक्षा की तकनीकी विशेषताओं का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिये।

शोध के साधनों की अपेक्षा शोध की विधियों तथा समस्याओं का चिन्तन अधिक सरल है। शिक्षा में साधनों से अभाव के कारण ही अच्छी शैक्षिक शोध समस्याओं का भी अभाव है। शिक्षा के साधनों में वृद्धि होने पर ही शैक्षिक शोध का विकास सम्भव है।

अनुसंधान के विकास में केवल वित्तीय साधन की ही समस्या के रेखांकित नहीं किया जा सकता है वरन् मानवीय साधनों का भी घोर अभाव है। अधिक कुशल शोधकर्ताओं की कमी को एकदम से ही दूर नहीं किया जा सकता है। उन सभी अभावों को दूर करने के लिए विश्वविद्यालयों को शोध कार्य पर ध्यान देना चाहिए।

शिक्षा-अनुसंधान यदि केवल शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं तक ही सीमित रहा तो भविष्य में बहुत अधिक आशा नहीं की जा सकती है। अच्छे शोध कार्य के लिए, विश्वविद्यालयों में शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर शैक्षिक शोध के विभिन्न वर्गों में सामाजिक, वैज्ञानिक समस्याओं का भी समावेश करना होता है। इस प्रकार का अन्तःविषयक सहयोग न केवल शोध अध्ययन को उन्नत करेगा वरन् शोध में मौलिक चिन्तन को भी बल मिलेगा। अन्तःविषयक सहयोग शिक्षा के विकास में भी सहायक सिद्ध होगा।

3.9 शब्दावली (Glossary) :

अभिक्रमित अनुदेशन: स्व निर्देशित अध्ययन सामग्री जिसका संयोजन क्रिया प्रसूत अधिगम सिद्धांत पर आधारित होता है

अन्तःविषयक: दो या दो से अधिक विषयों के अंतर्संबंध पर आधारित विषय

शिक्षण-शास्त्र: शिक्षण विज्ञान का समस्त पहलू

3.10 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षा दर्शन
2. 14 वर्ष
3. समान अवसर
4. शिक्षा के सामाजिक आधार
5. 0.10

3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री (Reference/ Suggested Readings) :

1. सिंह, ए०के० (2007) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियों, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास
2. गुप्ता, एस०पी० (2008) : मापन एवं मूल्यांकन, इलाहाबाद, शारदा पब्लिकेशन
3. शर्मा, आर०ए० (2001) : शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, मेरठ, आर०लाल० पब्लिकेशन्स
4. राय, पारसनाथ (2001) : अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्रों को नामांकित कर उनका वर्णन कीजिए।
2. शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्रों की व्याख्या कीजिए।
3. शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की प्राथमिकताओं को स्पष्ट कीजिए।
4. शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान के महत्व की व्याख्या कीजिए।
5. शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान की प्राथमिकताओं का मूल्यांकन कीजिए।

इकाई संख्या 04: शोध के प्रकार: आधारभूत/मौलिक अनुसंधान, व्यवहारपरक अनुसंधान, क्रियात्मक अनुसंधान, (Types of Research: Fundamental Research, Applied Research, Action Research,)

इकाई की रूपरेखा

- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 उद्देश्य
- 4.3 शोध या अनुसंधान के प्रकार
- 4.4 मूलभूत या मौलिक अनुसंधान का अर्थ
- 4.5 मूलभूत या मौलिक अनुसंधान की विशेषताएं
- 4.6 व्यवहारपरक शोध का अर्थ
- 4.7 व्यवहारपरक शोध की विशेषताएं
- 4.8 क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ व परिभाषा
- 4.9 क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताएं
- 4.10 क्रियात्मक अनुसंधान एवं मौलिक अनुसंधान में अन्तर
- 4.11 शिक्षा में क्रियात्मक अनुसंधान की आवश्यकता
- 4.12 क्रियात्मक अनुसंधान की प्रणाली व विभिन्न पद
- 4.13 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
- 4.14 सारांश
- 4.15 शब्दावली
- 4.16 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
- 4.17 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
- 4.18 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना:

आधुनिक युग में हमारे समस्त जीवन क्षेत्र में अनुसंधान का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। अनुसंधान में नवीन तथ्यों की खोज की जाती है तथा नवीन सत्यों का प्रतिपादन किया जाता है। शोध कार्यो द्वारा प्राचीन प्रत्ययों तथा तथ्यों का नवीन अर्थापन किया जाता है। शोध समस्या की प्रकृति के आधार पर शोध या अनुसंधान को बहुत से प्रकारों में बांटा जाता है। कुछ शोध के माध्यम से किसी प्राकृतिक घटना के संबंध में कोई सिद्धान्त या नियम प्रतिपादित किया जाता है चाहे वह सिद्धान्त व्यक्ति या समाज के लिए व्यावहारिक रूप से लाभप्रद हो अथवा न हो। इस प्रकार का शोध मौलिक शोध कहलाता है। कोई शोध समाज को विशेष लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से किया जाता है। इस प्रकार

के शोध में शोधकर्ता का उद्देश्य किसी व्यवहारपरक समस्या (Practical Problem) का समाधान करना होता है। इस प्रकार का शोध व्यवहारपरक शोध की श्रेणी में आता है। कुछ शोध शिक्षा आदि व्यावहारिक क्रियाओं की दैनिक समस्याओं का विधिवत अध्ययन कर उनके विशिष्ट समस्याओं का समाधान करता है। यह क्रियात्मक शोध कहलाता है। शैक्षिक शोध में प्रयुक्त आंकड़ों की प्रकृति के आधार पर भी शोध को वर्गीकृत किया जाता है। यदि शोध में परिमाणात्मक आंकड़ों का प्रयोग होता है तो इसे परिमाणात्मक शोध तथा यदि शोध में गुणात्मक आंकड़ों का प्रयोग किया जाता है तो इसे गुणात्मक शोध की संज्ञा दी जाती है। अतः मुख्य रूप से शैक्षिक शोध को मौलिक शोध, व्यवहारपरक शोध, क्रियात्मक शोध, परिमाणात्मक एवं गुणात्मक शोध के रूप में वर्गीकृत किया जाता है जिसका विस्तृत अध्ययन आप प्रस्तुत इकाई में करेंगे।

4.2 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- शैक्षिक शोध को वर्गीकृत कर सकेंगे।
- मौलिक शोध का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
- व्यवहारपरक शोध की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- शैक्षिक अनुसंधान में क्रियात्मक शोध के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- परिमाणात्मक अनुसंधान के विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- गुणात्मक शोध के विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- परिमाणात्मक व गुणात्मक अनुसंधान के मध्य अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
- परिमाणात्मक व गुणात्मक अनुसंधान के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।

4.3 शोध या अनुसंधान के प्रकार (Types of Research) :

शोध के स्वरूप एवं उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए व्यवहारपरक वैज्ञानिकों ने शोध को तीन वर्गों में विभाजित किया है-

1. मूलभूत अनुसंधान या शुद्ध अनुसंधान या सैद्धान्तिक अनुसंधान अथवा आधारभूत अनुसंधान (Fundamental Research or Pure Research or Theoretical Research or Basic Research)
2. व्यवहारपरक अनुसंधान या व्यवहृत अनुसंधान (Applied Research)

3. क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)

उपरोक्त तीनों प्रकार के अनुसंधान का विस्तृत वर्णन निम्न प्रकार से है-

4.4 मूलभूत या मौलिक अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Fundamental Research) :

मूलभूत या मौलिक शोध को शुद्ध शोध या सैद्धान्तिक शोध भी कहते हैं। इस शोध का मुख्य उद्देश्य किसी प्राकृतिक घटना के संबंध में कोई सिद्धान्त या नियम प्रतिपादित करना होता है। चाहे वह सिद्धान्त व्यक्ति या समाज के लिए व्यावहारिक रूप से लाभप्रद हो या न हो। इस प्रकार का शोध 'ज्ञान के लिए ज्ञान (Knowledge for the sake of knowledge)' के अभिधारणा पर आधारित होता है। यहाँ शोध का व्यावहारिक पक्ष गौण होता है। मोहसिन (1984) के अनुसार, शुद्ध शोध का संबंध मुख्य रूप से प्रकृति के कार्यकलापों के ज्ञान से है (Pure research is concerned mainly with understanding the ways of nature)। शुद्ध शोध का मुख्य आधार जिज्ञासा है जिसको शान्त करने के लिए अनुसंधानकर्ता शोध करता है। इसमें शोधकर्ता की रूचि इस बात में नहीं रहती है कि इस शोध से व्यक्ति या समाज को कोई तात्कालिक लाभ होगा। इसमें शोधकर्ता यह जानने का प्रयास करता है कि प्रकृति में कोई घटना क्यों घटती है? ऐसे अनुसंधान जिनके निष्कर्षों द्वारा किन्हीं विशेष वैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन हो, इस वर्ग में आते हैं। एण्डीआस के अनुसार, "मूलभूत अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य नयी प्ररचनाओं (Construct) का निर्माण करना होता है। अर्थात्, इस प्रकार के अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता प्राकृतिक घटनाओं को अपने अध्ययन के निष्कर्षों से संबंधित करता है। हर प्रकार के अनुसंधान का मुख्य कारण तथ्यों का एकत्रीकरण है। अनुसंधानकर्ता इन तथ्यों को उपयोगिता आदि की दृष्टि से एकत्रित नहीं करता। वह केवल इन तथ्यों को इसलिए एकत्रित करता है क्योंकि तथ्य एकत्रित करने योग्य है। मूलभूत अनुसंधान, इस प्रकार हमारे ज्ञान में वृद्धि करता है।"

4.5 मूलभूत या मौलिक अनुसंधान की विशेषताएं (Features of Fundamental Research)

मौलिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य किसी प्राकृतिक सामाजिक घटना के संबंध में कोई सिद्धान्त या नियम प्रतिपादित करना होता है। यह ज्ञान के लिए ज्ञान सिद्धान्त पर कार्य करता है। इसके अतिरिक्त मौलिक अनुसंधान की विशेषताओं को निम्न रूप में अंकित किया जा सकता है-

1. नये तथ्यों एवं सत्यों की खोज करना तथा नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना।

2. मौलिक शोध की समस्या का रूप अधिक व्यापक एवं मौलिक होता है तथा इसका स्वरूप सैद्धांतिक होता है।
3. मौलिक शोध में समस्या का बाह्य मूल्यांकन आवश्यक होता है।
4. परिकल्पनाओं का प्रतिपादन पूर्व शोध के निष्कर्ष, सिद्धान्तों तथा अनुभवों पर आधारित होता है। एक समय में सभी परिकल्पनाओं का सत्यापन होता है।
5. मौलिक अनुसंधान की रूपरेखा लचीली नहीं बल्कि दृढ़ होती है। शोधकर्ता को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।
6. जनसंख्या में से शुद्ध न्यादर्श का चयन किया जाता है। न्यादर्श की समस्या कठिन होती है। शोधकर्ता को न्यादर्श की प्रविधियों का ज्ञान आवश्यक होता है।
7. प्रदत्तों के संकलन में विश्वसनीय, वैध तथा प्रामाणिक परीक्षणों को प्रयुक्त किया जाता है। अपेक्षित परीक्षण उपलब्ध न होने पर शोधकर्ता उनका निर्माण करता है और उसे प्रामाणिक बनाता है।
8. उच्च सांख्यिकीय प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है। इस शोध में सांख्यिकीय परिकल्पनाओं का विशेष महत्व होता है।
9. सामान्यीकरण नये तथ्यों, सत्यों तथा सिद्धान्तों के रूप में होता है।
10. मौलिक शोध का मूल्यांकन बाह्य होता है। इसके लिए विशेषज्ञ नियुक्त किये जाते हैं। अच्छे कार्य के लिए उपाधि प्रदान की जाती है।
11. मौलिक अनुसंधान का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है।
12. शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन करके व्यवहार विज्ञान का विकास किया जाता है। शोधकर्ता में शिक्षा की समस्याओं के प्रति सूझ का विकास होता है।
13. शोधकर्ता को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, तभी वह समुचित शोध विधि, प्रविधि तथा परीक्षणों का प्रयोग कर सकता है। प्रदत्तों का विश्लेषण करके निष्कर्ष निकाल सकता है।

4.6 व्यवहारपरक शोध का अर्थ (Meaning of Applied Research) :

व्यवहारपरक शोध समाज को विशेष लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से किया जाता है। इस प्रकार के शोध में शोधकर्ता का उद्देश्य किसी व्यावहारिक समस्या (Practical Problem) का समाधान करना होता है। मोहसिन (Mohsin, 1984), के अनुसार व्यवहारपरक शोध वह है जिसमें विश्व में परिवर्तन लाने के निश्चित उद्देश्य के साथ प्राकृतिक घटनाओं को समझने का प्रयास किया जाता है। ये शोध क्रियाएँ व्यावहारिक समस्याओं की ओर निर्देशित होती हैं। व्यावहारिक शोध का मुख्य आधार

तात्कालिक व्यावहारिक समस्या है जिसके समाधान के लिए शोधकर्ता यह प्रयास करता है। अधिकतर शैक्षिक शोध तथा समाज मनोविज्ञान व व्यावसायिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में किए गए शोध व्यवहारपरक शोध कहलाते हैं।

व्यवहृत अनुसंधान के वर्ग में वे अनुसंधान आते हैं जिनके द्वारा किसी समस्या विशेष का समाधान आवश्यक हो। व्यवहृत अनुसंधान में विज्ञान के कुछ विशेष नियमों का किसी विशेष मामले पर प्रभाव जाना जाता है। एण्डीआस के अनुसार, “तथ्यों द्वारा यदि अनुसंधानकर्ता किसी क्रियात्मक समस्या का समाधान करे तो यह अनुसंधान व्यवहृत अनुसंधान की श्रेणी में आता है।”

4.7 व्यवहारपरक शोध की विशेषताएं (Features of Applied Research) :

व्यावहारिक शोध क्रियाएँ व्यावहारिक समस्याओं की ओर निर्देशित होती हैं। इस प्रकार के शोध में शोधकर्ता का उद्देश्य किसी व्यावहारिक समस्या (Practical Problem) का समाधान करना होता है। यह शोध उपयोगिता के लिए ज्ञान पर आधारित प्रक्रम पर कार्य करता है। इसके अतिरिक्त, व्यावहारिक शोध या अनुसंधान की विशेषताएँ निम्नवत हैं -

1. व्यावहारिक शोध में शोध का उद्देश्य समाज को कोई लाभ पहुंचाना होता है।
2. व्यावहारिक शोध में शोधकर्ता मूलतः सिद्धान्त या नियम नहीं बनाता बल्कि मौलिक शोधों से प्राप्त सिद्धान्तों या नियमों की सहायता से व्यावहारिक समस्याओं का समाधान करता है।
3. इस प्रकार के शोध में शोधकर्ता किसी संगठन या संस्था का सदस्य होता है और उसकी सहायता से वह किसी निश्चित क्षेत्र में निश्चित समस्या का समाधान करता है।
4. व्यावहारिक शोधों में प्राकृतिक घटना में अपेक्षाकृत परिवर्तन लाने तथा उससे अधिक लाभ उठाने का प्रयास किया जाता है।
5. व्यावहारिक शोध का उद्देश्य व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना होता है अर्थात् यहाँ व्यावहारिक लाभ उठाने का प्रयास किया जाता है।
6. मौलिक शोध की तुलना में व्यावहारिक शोध अपेक्षाकृत आसान होता है। व्यावहारिक शोध के द्वारा कोई भी शोधकर्ता मौलिक शोध के द्वारा बनाये गये रास्ते का अनुसरण करता है।
7. व्यावहारिक शोध मौलिक शोध पर निर्भर करता है। अर्थात् मौलिक शोध व व्यावहारिक शोध एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मौलिक शोध जहाँ एक आर

सिद्धान्तों का निर्माण करता है वहीं दूसरी ओर व्यावहारिक शोध सिद्धान्तों की व्यावहारिकता की जाँच करता है। अर्थात् व्यावहारिक शोधों के अभाव में मौलिक शोध की सार्थकता प्रमाणित नहीं हो सकती।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1.का मुख्य उद्देश्य किसी प्राकृतिक सामाजिक घटना के संबंध में कोई सिद्धान्त या नियम प्रतिपादित करना होता है।
2.शोध 'उपयोगिता के लिए ज्ञान' सिद्धान्त पर कार्य करता है।
3.में शोधकर्ता मूलतः सिद्धान्त या नियम नहीं बनाता बल्कि मौलिक शोधों से प्राप्त सिद्धान्तों या नियमों की सहायता से व्यावहारिक समस्याओं का समाधान करता है।
4.में से शुद्ध न्यादर्श का चयन किया जाता है।
5.के अनुसार, शुद्ध शोध का संबंध मुख्य रूप से प्रकृति के कार्यकलापों के ज्ञान से है
6. व्यावहारिक शोधपर निर्भर करता है।
7.'ज्ञान के लिए ज्ञान' सिद्धान्त पर कार्य करता है।

4.8 क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Action Research) :

क्रियात्मक अनुसंधान का विचार अभी नया है। कुछ वर्ष पूर्व यह अनुभव किया गया है कि मौलिक अनुसंधान द्वारा प्राप्त निष्कर्षों से व्यावहारिक क्षेत्रों में कार्य करने वाले कार्यकर्ता लाभ नहीं उठा पाते। उनमें उसकी चेतना और जानकारी भी नहीं होती। फलस्वरूप एक नवीन अनुसंधान प्रक्रिया का उद्भव हुआ जिसका उद्देश्य शिक्षा, समाज-सुधार, व्यवसाय अथवा औद्योगिक क्षेत्र के कार्यकर्ताओं द्वारा स्वयं अपनी समस्याओं का अध्ययन एवं वैज्ञानिक विधि से उनका समाधान करना है। इस क्रिया द्वारा प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर वे वर्तमान क्रिया में सुधार करते हैं तथा भावी योजनाएँ भी बनाते हैं। इस क्रिया को प्रकाश में लाने और एक आन्दोलन का रूप देने का श्रेय टीचर्स कॉलेज, कोलम्बिया विश्वविद्यालय के होरेसमन लिंकन इंस्टीट्यूट ऑफ स्कूल एक्सपेरिमेंटेशन के प्रोफेसर स्टीफेन एम० कोरे को है।

क्रियात्मक अनुसंधान की परिभाषा- कोरे के अनुसार "क्रियात्मक अनुसंधान वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यावहारिक कार्यकर्ता वैज्ञानिक विधि से अपनी समस्याओं का अध्ययन, अपने निर्णय और क्रियाओं में निर्देशन, सुधार और मूल्यांकन करते हैं।"

यह परिभाषा इस बात को स्पष्ट करती है कि क्रियात्मक अनुसंधान वास्तविक क्रिया में सुधार लाने वाले का सफल प्रयास है। शिक्षा के क्षेत्र में इस प्रकार का अनुसंधान विद्यालयों की कार्य-प्रणाली के अधिक निकट है। इसमें अनुसंधानकर्ता कोई बाहरी व्यक्ति न होकर विद्यालय अथवा किसी क्रिया में लगे हुए व्यक्ति स्वयं होते हैं। “मौलिक अनुसंधान, जहाँ नवीन सत्यों एवं सिद्धान्तों की स्थापना करता है, वहीं क्रियात्मक अनुसंधान नित्य की क्रियाओं में सुधार एवं विकास करने का प्रयास करता है। (The Process by which practitioners attempt to study their problems scientifically in order to guide, correct and evaluate their decision and actions is what a number of people have called action research).”

4.9 क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताएं (Features of Action Research) :

इस विवेचन के आधार पर क्रियात्मक अनुसंधान की निम्नलिखित विशेषताएँ सामने आती हैं।

1. क्रियात्मक अनुसंधान में शिक्षा आदि विषयों की व्यावहारिक क्रियाओं की दैनिक समस्याओं का विधिवत अध्ययन किया जाता है।
2. इस क्रिया में लगे हुए अध्यापक, प्रधानाचार्य, निरीक्षक, समाज-सुधारक अथवा व्यस्थापक आदि स्वयं अनुसंधान में क्रियाशील होते हैं।
3. दैनिक समस्याओं का अध्ययन उस व्यावहारिक क्रिया में सुधार एवं विकास के दृष्टिकोण से होता है।
4. सभी कार्यकर्ता एक वैज्ञानिक दृष्टि से कार्य करते हैं तथा पूर्वाग्रह एवं पक्षपात से बचने का प्रयास करते हैं।
5. क्रिया पद्धति में जनतान्त्रिक मूल्यों को प्रोत्साहन दिया जाता है।
6. क्रियात्मक अनुसंधान के द्वारा कार्यकर्ताओं में चेतना आती है, वे अपनी समस्याओं के प्रति संवेदनशील होते हैं तथा समाधान हेतु प्रयास भी करते हैं।
7. कार्यकर्ताओं (अध्यापक, निरीक्षक आदि) द्वारा वस्तुनिष्ठ विधि से अध्ययन एवं सुधार किया जाता है।

4.10 क्रियात्मक अनुसंधान एवं मौलिक अनुसंधान में अन्तर (Difference between Action Research and Fundamental Research) :

क्रियात्मक अनुसंधान तथा मौलिक अनुसंधान में अन्तर है। इन अन्तरों पर हम अनुसंधान उद्देश्य, समस्या तथा उसका महत्व, मूल्यांकन के मापदण्ड, न्यादर्श, सामान्यीकरण अभिकल्प तथा कार्यकलापों की दृष्टि से विचार करेंगे ताकि आपको इन दोनों के मध्य अंतर स्पष्ट हों जाय।

1. उद्देश्य की दृष्टि से अन्तर:

क्रियात्मक अनुसंधान का उद्देश्य दैनिक क्रिया में सुधार लाना है जबकि मौलिक अनुसंधान का उद्देश्य नवीन सत्यों की खोज करना है।

2. अनुसंधान की समस्या और महत्व की दृष्टि से अन्तर-

(क) क्रियात्मक अनुसंधान की समस्या किसी विद्यालय विशेष अथवा विशेष क्रिया से सम्बन्धित होती है किन्तु मौलिक अनुसंधान की समस्या सामान्य परिस्थितियों से उत्पन्न होती है।

(ख) क्रियात्मक अनुसंधान की समस्या का क्षेत्र संकुचित होता है जबकि मौलिक अनुसंधान की समस्या का क्षेत्र अपेक्षाकृत विस्तृत होता है।

(ग) क्रियात्मक अनुसंधान की समस्या का महत्व उस विशेष क्रिया में सुधार लाने से होता है तथा मौलिक अनुसंधान का महत्व नवीन सत्यों की खोज में है।

(घ) क्रियात्मक अनुसंधान की समस्या व्यावहारिक कठिनाईयों से सम्बद्ध होती है किन्तु मौलिक अनुसंधान की समस्या सैद्धान्तिक कठिनाई से सम्बन्धित होती है।

3. मूल्यांकन के मापदण्ड की दृष्टि से अन्तर: क्रियात्मक अनुसंधान के मूल्यांकन का मापदण्ड कार्य-पद्धति में परिवर्तन, सुधार तथा कार्यकर्ताओं की सफलता है, जबकि मौलिक अनुसंधान में मूल्यांकन मापदण्ड नवीन सत्य की खोज अथवा नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन आदि हो सकता है।

4. न्यादर्श की दृष्टि से अन्तर – क्रियात्मक अनुसंधान में न्यादर्श छोटा होता है तथा उसके चुनाव की विशेष समस्या नहीं होती, जबकि मौलिक अनुसंधान में न्यादर्श अपेक्षाकृत बड़ा होता है और उसके चयन में बड़ी सर्तकता रखनी होती है।

5. सामान्यीकरण के दृष्टि से अन्तर- क्रियात्मक अनुसंधान में सामान्यीकरण की विशेष आवश्यकता नहीं होती किन्तु सामान्यीकरण ही मौलिक अनुसंधान का मुख्य कार्य है।

6. **रूपरेखा की दृष्टि से अन्तर-** क्रियात्मक अनुसंधान की रूप रेखा या आकल्प परिवर्तन शील होता है किन्तु मूलभूत अथवा मौलिक अनुसंधान की रूपरेखा में परिवर्तन सरलता और शीघ्रता से नहीं लिया जा सकता है। क्रियात्मक अनुसंधान की रूपरेखा या आकल्प प्रस्तुत करने में विशेष तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती जबकि मौलिक अनुसंधान में उसकी आवश्यकता होती है।
7. **अनुसंधानकर्ता की दृष्टि से अन्तर** – क्रियात्मक अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता उस विद्यालय अथवा क्रिया से सम्बन्धित व्यक्ति होता है। उसका लक्ष्य अपने विद्यालय अथवा क्रिया की परिस्थिति में सुधार लाना होता है। इसके विपरीत मौलिक अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता विश्वविद्यालय का स्नातक, प्राध्यापक अथवा अनुसंधान अधिकारी, व सहायक होता है। उसका सम्बन्ध किसी विशेष व्यावहारिक क्षेत्र से नहीं होता, अपितु वह ज्ञान के क्षेत्र में नवीन सिद्धान्तों और सत्यों की खोज करता है।

4.11 शिक्षा में क्रियात्मक अनुसंधान की आवश्यकता (Need of Action Research) :

आज की परिवर्तशील परिस्थितियों में शिक्षा के क्षेत्र में क्रियात्मक अनुसंधान को प्रोत्साहन देना एवं प्रयोग में लाना निम्नलिखित दृष्टि से आवश्यक हो गया है-

1. विद्यालयों की रूढ़िवादी क्रिया पद्धति में सुधार एवं परिवर्तन लाने हेतु
2. शिक्षा द्वारा जनतान्त्रिक मूल्यों के विकास का मार्ग प्रशस्त करने हेतु।
3. नवीन परिस्थितियों में बालकों के समायोजन की समस्याओं के अध्ययन तथा उनके लिए मार्ग ढूँढने हेतु।
4. शिक्षकों, प्रधानाचार्यों, निरीक्षकों तथा पयर्वेक्षकों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास कर स्वयं अपनी समस्याओं में रूचि विकसित करने के लिए।
5. छात्रों के बहुमुखी विकास हेतु विद्यालय की क्रियाओं के प्रभावपूर्ण नियोजन के लिए।
6. विद्यालयों के सामने उपस्थित शिक्षण विधि, अनुशासन, प्रोन्नति, पाठ्यक्रम, सहगामी क्रियाओं, छात्रों की उपस्थिति, पुस्तकालय के उपयोग, परीक्षा में नकल करने आदि समस्याओं का विश्लेषण करने एवं उनका समाधान ढूँढने के लिए।
7. विद्यालय और समाज के बीच की खाई को पाटने व उनके सम्बन्धों में सुधार और विकास के लिए।
8. शिक्षकों में नैतिकता व आत्म-विश्वास के स्तर को उन्नत करने एवं पारस्परिक सहयोग द्वारा आत्म-विकास की प्रेरणा देने हेतु।

9. प्रत्येक क्षेत्र में छात्रों की उपलब्धि को विकसित करने हेतु।

4.12 क्रियात्मक अनुसंधान की प्रणाली तथा विभिन्न पद (Procedure and steps of Action Research) :

प्रणाली तथा पदों की दृष्टि से क्रियात्मक अनुसंधान और मौलिक अनुसंधान में कोई अन्तर नहीं है क्योंकि दोनों किसी समस्या का वैज्ञानिक विधि से अध्ययन करने एवं उसका समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। इस दृष्टि से क्रियात्मक अनुसंधान में निम्नलिखित पद होते हैं-

1. **समस्या की पहचान, उसका चयन एवं सीमांकन-** हम नित्य प्रातः अनेक समस्याओं का सामना करते रहते हैं किन्तु उनके प्रति न तो चैतन्य होते हैं और न वैज्ञानिक दृष्टि से उन पर विचार ही करते हैं। अनुसंधान की दृष्टि से पहले अनुसंधानकर्ता को क्षेत्र का निश्चय करना होता है। सीखना, प्रेरणा, रूचि, उपलब्धि आदि व्यापक क्षेत्र हैं। अनुसंधान कार्य के लिए समस्या को सीमित तथा स्पष्ट रूप में निश्चित करना आवश्यक होता है।
2. **समस्या के कारणों का विश्लेषण:** समस्या के सीमांकन के पश्चात् अनुसंधानकर्ता उनके सम्भावित कारणों को ढूँढने का प्रयास करता है। समस्या के कारणों पर विचार करते समय उसके लिए प्रमाण पर भी विचार करना होता है। इसका तात्पर्य यह है कि जो कारण हम दे रहे हैं उनके लिए कुछ आधार भी है या केवल काल्पनिक ही है। इस प्रकार कारणों और उनके प्रमाणों की सूची तैयार कर लेते हैं।

समस्या के कारणों का विश्लेषण करते समय निम्न बातें ध्यान देने योग्य हैं -

- i. जिन कारणों का उल्लेख किया गया है, वे तर्कसंगत हों।
- ii. समस्या के कारणों का परीक्षण सम्भव हो।
- iii. कारणों का उल्लेख भ्रमपूर्ण न होकर विशिष्ट एवं स्पष्ट हो।
- iv. समस्या के कारणों की वास्तविकता का निश्चय अनेक प्रमाणों द्वारा किया जाय।
- v. इन कारणों पर किसका नियन्त्रण है।

कारणों का उचित विश्लेषण, उन कारणों को दूर करने के लिए उचित क्रिया की रूपरेखा के निर्माण में सहायक होता है। यही क्रियात्मक परिकल्पना के निर्माण का आधार होता है। यदि रोग का निदान ही ठीक न हुआ तो उसका निवारण कैसे हो सकता है।

3. **क्रियात्मक परिकल्पना का निर्माण-** क्रियात्मक अनुसंधान का तीसरा महत्वपूर्ण पद क्रियात्मक परिकल्पना का निर्माण करना है। परिकल्पना अनुसंधान की समस्या के समाधान का सुझाव देती है। उनके दो अंश होते हैं- (1) लक्ष्य एवं (2) कार्य प्रणाली। इस दृष्टि से परिकल्पना का निर्माण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि दोनों की ओर स्पष्ट संकेत किया जाय। क्रियात्मक अनुसंधान की परिकल्पना का रूप कुछ इस प्रकार का होता है, जैसे यदि गृह-कार्य छात्रों की रुचि के अनुसार दिया जाय और उसका नियमित निरीक्षण किया जाय तो छात्र गृह-कार्य में रुचि लेने लगेंगे। यदि जाड़े के दिनों में 10:00 बजे के स्थान पर 10:30 बजे से विद्यालय लगे तो विद्यार्थी प्रार्थना के अवसर पर अवश्य उपस्थित हो सकेंगे।
4. **क्रियात्मक परिकल्पना के परीक्षण की रूपरेखा तैयार करना:** इस अनुसंधान का चौथा महत्वपूर्ण पद परिकल्पना के परीक्षण के लिए रूपरेखा अथवा अभिकल्प तैयार करना है। रूपरेखा तैयार करने में इस तथ्य का ध्यान रखना होता है कि अनुसंधान कार्य भी चलता रहे और विद्यालय के अन्य कार्यक्रमों में बाधा भी न उत्पन्न हो। यह रूपरेखा कार्य को उचित दिशा प्रदान करती है, कार्य में वैज्ञानिकता लाती है, निश्चित परिणाम का ज्ञान होता है तथा त्रुटियों की जानकारी होती है। रूपरेखा को तैयार करने में विशेष सावधानी रखनी होती है। उसके अन्तर्गत (1) क्रियाओं का विवरण (2) उन क्रियाओं को किस विधि से करना है (3) इसके लिए किन साधनों की आवश्यकता होगी, तथा (4) कितना समय और धन लगेगा आदि तथ्यों का स्पष्ट उल्लेख करते हैं।
5. **परिणाम का मूल्यांकन** – क्रियात्मक अनुसंधान का अन्तिम पद परिणाम के मूल्यांकन का होता है। मूल्यांकन के आधार पर ही अनुसंधानकर्ता निश्चित रूप से कह सकता है कि हमारी क्रिया का लक्ष्य प्राप्त हुआ अथवा नहीं। इसी आधार पर भावी योजना में सुधार कर लेते हैं। अतः मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठता होनी आवश्यक है। यह मूल्यांकन निरीक्षण, मत-संग्रह, प्रश्नावली, साक्षात्कार, चैक-लिस्ट, रेटिंग स्केल, विभिन्न परीक्षणों तथा सांख्यिकीय विधियों द्वारा किया जाता है। इनका प्रयोग करते समय इनकी विश्वसनीयता, वैधता तथा वस्तुनिष्ठता पर अच्छी प्रकार विचार कर लेनी चाहिए। इस प्रकार विश्वसनीय, वैध एवं वस्तुनिष्ठ विधि से व्यावहारिक रूप में मूल्यांकन करने के पश्चात् जो निष्कर्ष प्राप्त होता है वह अनुसंधानकर्ता की परिस्थितियों में सुधार एवं भावी सुधारात्मक योजनाओं के निर्माण में सहायक होता है।

क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न पदों की संक्षिप्त रूपरेखा निम्न प्रकार है:

1. समस्या के क्षेत्र का निश्चय एवं समस्या का चयन।
(Problem area and selection of the problem)
2. समस्या का सीमांकन।
(Pinpointing the problem)
3. संभावित कारणों का विश्लेषण।
(Analysis of the probable causes)
यह विश्लेषण (क) अध्ययन, (ख) अभिलेख, (ग) प्रकाशित साहित्य, (घ) विचार विमर्श द्वारा होगा।
4. समस्या के संभावित कारणों की सूची तैयार करना।
(Listing out the probable causes of the problem)
इन कारणों पर इस दृष्टि से भी विचार करना होगा कि उनके लिए आधार क्या है ? मात्र धारणा है, अनुमान है या प्रमाण भी है?
5. इस तथ्य पर विचार करना होता है कि कौन से कारण मेरे नियंत्रण में है जिनमें मैं परिवर्तन ला सकता हूँ ?
(Is it in my control and can be changed?)
6. इन कारणों की प्राथमिकता के क्रम में रखना, अर्थात् किसे पहले लेना है?
(Priority to be given to cause)
7. क्रियात्मक परिकल्पना का निर्माण।
(Formulation of Action Hypothesis)
जितने कारणों के प्रमाण होंगे तथा अपने नियंत्रण में लेगें उतनी ही परिकल्पनाएँ होंगी।
8. क्रिया का स्वरूप अथवा अभिकल्प।
(Action Design)
इसके अन्तर्गत न्यादर्श, उपकरण, प्रक्रिया, समय तथा आवश्यक धन निश्चित करेंगे। प्रयोग एक समूह पर होगा अथवा दो समान समूह लेने होंगे, यह निश्चित किया जायेगा।
9. क्रियात्मक योजना का मूल्यांकन।
(Evaluation of Action plan)
मूल्यांकन के लिए क्या पद्धति अपनानी होगी तथा क्या इस क्रिया के द्वारा वर्तमान परिस्थिति में कोई सुधार आया है, यदि निष्कर्ष निकालने के लिए सांख्यिकीय विधियों का भी प्रयोग करना होगा।
यदि निष्कर्ष उत्साहवर्धक है तो भावी योजनाओं में इसका प्रयोग कर सकते हैं।

4.13 अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

8. क्रियात्मक अनुसंधान के पिताहैं।
9.नित्य की क्रियाओं में सुधार एवं विकास करने का प्रयास करता है।
10. क्रियात्मक अनुसंधान में सामान्यीकरण की विशेष आवश्यकता नहीं होती किन्तु सामान्यीकरण हीअनुसंधान का मुख्य कार्य है।
11.अनुसंधान का उद्देश्य दैनिक क्रिया में सुधार लाना है जबकि मौलिक अनुसंधान का उद्देश्य नवीन सत्यों की खोज करना है।
12. विद्यालयों की रूढ़िवादी क्रिया पद्धति में सुधार एवं परिवर्तन लाने हेतु.....शोध किया जाता है।

4.14 सारांश

अनुसंधान में नवीन तथ्यों की खोज की जाती है तथा नवीन सत्यों का प्रतिपादन किया जाता है। शोध कार्यो द्वारा प्राचीन प्रत्ययों तथा तथ्यों का नवीन अर्थापन किया जाता है। शोध समस्या की प्रकृति के आधार पर शोध या अनुसंधान को बहुत से प्रकारों में बांटा जाता है। शोध के स्वरूप एवं उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए व्यवहारपरक वैज्ञानिकों ने शोध को तीन वर्गों में विभाजित किया है-

1. मूलभूत अनुसंधान या शुद्ध अनुसंधान या सैद्धान्तिक अनुसंधान अथवा आधारभूत अनुसंधान (Fundamental Research or Pure Research or Theoretical Research or Basic Research)
2. व्यवहारपरक अनुसंधान या व्यवहृत अनुसंधान (Applied Research)
3. क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)

मूलभूत या मौलिक शोध को शुद्ध शोध या सैद्धान्तिक शोध भी कहते हैं। इस शोध का मुख्य उद्देश्य किसी प्राकृतिक घटना के संबंध में कोई सिद्धान्त या नियम प्रतिपादित करना होता है। इस प्रकार का शोध 'ज्ञान के लिए ज्ञान (Knowledge for the sake of knowledge)' के अधिधारणा पर आधारित होता है। यहाँ शोध का व्यावहारिक पक्ष गौण होता है।

इस प्रकार के शोध में शोधकर्ता का उद्देश्य किसी व्यावहारिक समस्या (Practical Problem) का समाधान करना होता है। ये शोध क्रियाएँ व्यावहारिक समस्याओं की ओर निर्देशित होती है। व्यावहारिक शोध का मुख्य आधार तात्कालिक व्यावहारिक समस्या है जिसके समाधान के लिए

शोधकर्ता यह प्रयास करता है। यह शोध उपयोगिता के लिए ज्ञान पर आधारित प्रक्रम पर कार्य करता है।

क्रियात्मक अनुसंधान दैनिक व वास्तविक समस्या के समाधान हेतु उपयोग में आने वाले ज्ञान पर आधारित प्रक्रम पर कार्य करता है। क्रियात्मक अनुसंधान वास्तविक क्रिया में सुधार लाने वाले का सफल प्रयास है। शिक्षा के क्षेत्र में इस प्रकार का अनुसंधान विद्यालयों की कार्य-प्रणाली के अधिक निकट है। इसमें अनुसंधानकर्ता कोई बाहरी व्यक्ति न होकर विद्यालय अथवा किसी क्रिया में लगे हुए व्यक्ति स्वयं होते हैं।

4.15 शब्दावली

मूलभूत अनुसंधान या शुद्ध अनुसंधान या सैद्धान्तिक अनुसंधान अथवा आधारभूत अनुसंधान: वह शोध जिसका मुख्य उद्देश्य किसी प्राकृतिक घटना के संबंध में कोई सिद्धान्त या नियम प्रतिपादित करना होता है। इस प्रकार का शोध 'ज्ञान के लिए ज्ञान (Knowledge for the sake of knowledge)' के अभिधारणा पर आधारित होता है।

व्यावहारिक या व्यवहारपरक शोध: वह शोध जिसमें शोधकर्ता का उद्देश्य किसी व्यावहारिक समस्या (Practical Problem) का समाधान करना होता है। ये शोध क्रियाएँ व्यावहारिक समस्याओं की ओर निर्देशित होती हैं। इस प्रकार का शोध 'उपयोगिता के लिए ज्ञान (Knowledge for the sake of knowledge)' के अभिधारणा पर आधारित होता है।

क्रियात्मक अनुसंधान: दैनिक, वास्तविक व तात्कालिक समस्या के समाधान हेतु उपयोग में आने वाले शोध को क्रियात्मक शोध की संज्ञा दी जाती है। इसका क्षेत्र मौलिक या व्यवहारपरक शोध की अपेक्षा बहुत ही सीमित होता है। इस प्रकार का शोध 'तात्कालिक समस्या-समाधान के लिए ज्ञान (Knowledge for the sake of knowledge)' के अभिधारणा पर आधारित होता है।

4.16 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर

1. मौलिक अनुसंधान 2. व्यावहारिक शोध 3. व्यावहारिक शोध 4. जनसंख्या 5. मोहसिन (1984) 6. मौलिक शोध 7. मौलिक शोध 8. प्रोफेसर स्टीफेन एम0 कोरे 9. क्रियात्मक अनुसंधान 10. मौलिक 11. क्रियात्मक 12. क्रियात्मक

4.17 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री (Reference Book/Suggested Readings) :

1. सिंह, ए०के० (2006). मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।
2. राय पारसनाथ (2008) : शिक्षा में अनुसंधान: एक परिचय, आगरा, साहित्य मंदिर.
3. कौल, लोकेश (2011): शैक्षिक अनुसंधान की कार्य प्रणाली, नई दिल्ली, विकास पब्लिकेशन्स.
4. मर्टेन्स, डी०एम० (1998), रिसर्च मेथड्स एजुकेशन एण्ड साइकॉलॉजी, कैलिफोर्निया: सेज पब्लिकेशन्स।
5. कर्लिंजर, एफ०एम० (2007). फाउन्डेसन्स ऑफ विहेवियरल रिसर्च, दिल्ली: सुरजीत पब्लिकेशन्स
6. कोठारी, सी०आर० (2008). रिसर्च मैथोडोलॉजी: मेथड्स एण्ड टेक्निस. नई दिल्ली: न्यू एज इंटरनेशनल (पी) लिमिटेड, पब्लिशर्स।

4.18 निबंधात्मक प्रश्न

1. शैक्षिक शोध को वर्गीकृत करने के आधार की व्याख्या कीजिए।
2. मौलिक शोध तथा व्यवहारपरक शोध का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
3. व्यवहारपरक शोध की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. शैक्षिक अनुसंधान में क्रियात्मक शोध के महत्व की व्याख्या कीजिए।

इकाई 05: शोध की प्रक्रिया: समस्या का चयन, परिकल्पना का निर्माण, प्रदत्तों का संग्रहण व विश्लेषण, सारांश। (Process of Research: Selection of Problem, Formulation of Hypothesis, Collection of Data and Analysis, Conclusion)

इकाई की रूपरेखा

- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 उद्देश्य
- 5.3 शोध समस्या का अर्थ व परिभाषा
- 5.4 शोध समस्या का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप
- 5.5 एक अच्छी समस्या की विशेषताएँ
- 5.6 शोध समस्या के उत्पत्ति के कारण
- 5.7 शोध समस्या की उत्पत्ति के स्रोत
- 5.8 शोध उद्देश्य
- 5.19 परिकल्पना- अर्थ व परिभाषा एवं उसके प्रकार
- 5.10 परिकल्पना की विशेषताएं

-
- 5.11 परिकल्पना के प्रकार
 - 5.12 एक अच्छे परिकल्पना की विशेषताएं
 - 5.13 परिकल्पना के कार्य
 - 5.14 परिकल्पना के स्रोत या आधार
 - 5.15 शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न पद
 - 5.16 प्रदत्तों के संग्रह व विशलेषण से जुड़े प्रमुख सम्प्रत्यय
 - 5.17 प्रतिचयन विधियाँ
 - 5.18 असम्भाव्यता या अप्रायिकता या अयादृच्छिक विधियाँ
 - 5.19 सारांश
 - 5.20 शब्दावली
 - 5.21 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
 - 5.22 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
 - 5.23 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना:

शैक्षिक क्षेत्र में जब भी शोध की बात की जाती है तो सर्वप्रथम इसके लिए हमें किसी समस्या (Problem) का चयन करना होता है। अर्थात्, किसी भी शोध की शुरुआत हमेशा एक शोध समस्या से होती है। इस इकाई में हमारा उद्देश्य शोध समस्या के संबंध में पूरी जानकारी प्राप्त करना है जिससे भविष्य में आपको जब कभी शोध कार्य करने की इच्छा हो तो समस्या के चयन में सुविधा हो। इस इकाई में आप शोध समस्या के अर्थ के साथ-साथ एक अच्छी समस्या में कौन-कौन सी विशेषताएं होनी चाहिए इसके संबंध में जानकारी प्राप्त करेंगे। साथ ही आप के लिए उन स्रोतों को भी जानना आवश्यक है जिनके द्वारा किसी शोध समस्या की उत्पत्ति होती है। इसके अतिरिक्त, इस इकाई में आप शोध उद्देश्य का अर्थ व इसके प्रकार के बारे में भी जानकारी प्राप्त करेंगे। शोध एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। इसलिए शोध उद्देश्यों के निर्धारण की प्रक्रिया, इनके प्रकार व महत्व की जानकारी आप के लिए अत्यावश्यक है। इस इकाई में आपको परिकल्पना के सभी पक्षों के बारे में भी जानकारी दी जाएगी। उपयुक्त शोध समस्या का चुनाव शोध की प्रथम अवस्था होती है। उसके बाद शोध के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। शोध के उद्देश्यों के निर्धारण के बाद परिकल्पना

का निर्माण किया जाता है | किसी भी समस्या का समाधान करने के पहले ही उसके परिणामों के संबंध में अनुमान करना ही परिकल्पना या परिकल्पना या पूर्वकल्पना कहलाता है | अतः शोध समस्या समाधान के लिए शोध समस्या, शोध उद्देश्य, एवं परिकल्पना के सभी पक्षों के बारे में जानकारी होना बहुत ही आवश्यक है।

5.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययनोपरांत आप-

- शोध समस्या का अर्थ बता पायेंगे।
- शोध समस्या को परिभाषित कर सकेंगे।
- शोध समस्या का चुनाव के शर्तों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शोध उद्देश्य का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
- शोध उद्देश्य के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शोध परिकल्पना को परिभाषित कर सकेंगे।
- शोध परिकल्पना के कार्य को बता सकेंगे।
- शोध परिकल्पना के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शोध परिकल्पना की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।

5.3 शोध समस्या का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Research Problem) :

शैक्षिक शोध की शुरुआत शोध समस्या के चयन से होती है। समस्या के बिना शोधकार्य शुरू हो ही नहीं सकता। शोध समस्या से तात्पर्य एक ऐसे प्रश्नवाचक कथन या सामान्य कथन से होता है जिसमें चरों (Variables) के बीच कोई विशेष प्रकार के संबंध होने की कल्पना की जाती है। शोधकर्ता के लिए शोध समस्या का निर्माण करना एक कठिन काम होता है। इसके लिए शोधकर्ता कई स्रोतों जैसे पुस्तक, शोध पत्रिकाएँ (Research Journals), शोध सार (Research Abstracts), विश्व ज्ञान कोष (Encyclopedia) आदि की सहायता से अपनी पसन्द या आवश्यकता के अनुसार किसी समस्या का चयन कर लेता है। समस्या के चयन में संबंधित विषयों के विशेषज्ञों एवं अन्य जानकार व्यक्तियों से भी राय ली जाती है। शोध समस्या का चयन दो चरणों में किया जाता है। पहले चरण में शोधकर्ता यह तय करता है कि उसे किस क्षेत्र में शोध करना है। इसे शोध का सामान्य उद्देश्य माना जाता है। जैसे यदि शोधकर्ता सामाजिक मूल्यों (Social Values)

के क्षेत्र में अध्ययन करना चाहता है तो इसके लिए आवश्यक है कि वह इस विषय पर लिखी गयी पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं, शोध सारों का अध्ययन करें तथा इस विषय के विशेषज्ञों से राय ले। अध्ययनों एवं राय के बाद यदि उसे पता चलता है अभी तक निम्न सामाजिक आर्थिक स्थिति वाले व्यक्तियों के सामाजिक मूल्य पर अध्ययन नहीं हुआ है तो ऐसी परिस्थिति में उसके लिए समस्या का चयन करना आसान हो जाता है। समस्या चयन के दूसरे चरण में वह विशिष्ट समस्या का चयन कर लेता है जैसे “निम्न सामाजिक आर्थिक स्थिति वाले व्यक्तियों के सामाजिक मूल्यों के संबंध में जानकारी प्राप्त करना।” इस प्रकार शोधकर्ता शोध के सामान्य उद्देश्य की तरफ बढ़ते हुए समस्या का चयन करता है।

5.4 शोध समस्या का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप (The meaning, Definition and Nature of a Research Problem) :

शोध (Research) किसी विषय विशेष के संबंध में गहराई से किया गया अन्वेषण है जिसके द्वारा किसी नए ज्ञान की जानकारी होती है साथ ही साथ किसी पुराने ज्ञान की जाँच भी हो जाती है या हो सकती है। अर्थात् शोध कार्य एक लम्बी तथा जटिल प्रक्रिया है, जिसके लिए एक खास क्रम तथा कुछ निश्चित अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता है जैसे- शोध समस्या का चयन, शोध उद्देश्य का निर्धारण, शोध परिकल्पना का निर्माण (making research hypothesis), चरों का वर्गीकरण (classification of variables), उचित डिजाइन का चुनाव (selection of appropriate design), विधियाँ (methods), परिणाम का विश्लेषण, (analysis of result), निष्कर्ष निकालना (calculating the findings) आदि। हमने देखा कि शोध कार्य का प्रारंभ ही एक उपयुक्त समस्या के चयन से होता है। टाउसेन्ड (1953) के शब्दों में, “समाधान के लिए प्रस्तावित प्रश्न को ही समस्या कहते हैं।” शोधकर्ता को समस्या के संबंध में अपेक्षित जानकारी होनी चाहिए कि समस्या क्या है, एक अच्छे एवं वैज्ञानिक शोध समस्या में क्या विशेषताएँ होनी चाहिए कि इसका स्वरूप वैज्ञानिक हो, जिससे इसका संतोषप्रद हल निकाला जा सके। साथ ही साथ जिस शोध समस्या पर हम शोध करने जा रहे हैं उसकी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, एवं व्यावहारिक उपयोगिता भी होनी चाहिए।”

शोध समस्या का अर्थ वह प्रश्न है जिसका कोई तात्कालिक उत्तर उपलब्ध नहीं होता। मेकगूगन (1998) के अनुसार, “समस्या का तात्पर्य हमारे ज्ञान की रिक्ति से है।” यह व्यक्ति की सामान्य क्षमताओं द्वारा उत्तर प्राप्त करने योग्य प्रश्न प्रस्तुत करता है। (According to Mc Guigan (1998), “Problem refers to gap in our knowledge. It poses a question that can be answered.”) अर्थात् जब हमें किसी विषय पर अपने ज्ञान में अधूरापन लगता है तो वहीं से

समस्या की शुरुआत होती है। व्यवहारिक विज्ञानों में शोध के लिए उपयुक्त समस्या वही हो सकती है जिसका व्यक्ति अपनी क्षमताओं के बल पर समाधान कर सके।

कुछ इसी प्रकार की परिभाषा रेबर तथा रेबर (2001) ने भी दी है, “समस्या मूलतः वह परिस्थिति है, जिसमें कुछ घटक ज्ञात होते हैं और अतिरिक्त घटकों का निर्धारण आवश्यक होता है”(According to Reber and Reber (2001), Problem is basically a situation in which some of the attendant components are known and additional components must be determined.” शोध समस्या की उपयुक्त परिभाषा करलिंगर (2002) ने दी है, “समस्या एक ऐसा प्रश्नवाचक वाक्य या कथन होता है जो यह पूछता है कि दो या दो से अधिक चरों के बीच किस तरह का संबंध है।” (According to Kerlinger (2002), “A problem is an interrogative sentence or sentence that asks: What relation exists between two or more variables?”) अर्थात् शोध समस्या एक ऐसी समस्या होती है जिसके द्वारा दो या दो से अधिक चरों (Variables) के बीच एक प्रश्नवाचक संबंध (Interrogative Relationship) की अभिव्यक्ति होती है। यदि उपर्युक्त परिभाषाओं का विश्लेषण किया जाय तो हमें शोध समस्या की कुछ विशेषताएँ स्पष्ट होंगी जो निम्नवत हैं -

- i. समस्या कथन (Problem statement) की अभिव्यक्ति प्रश्नवाचक वाक्य के द्वारा होना चाहिए। उदाहरण के लिए छात्रों की कक्षा में उपलब्धि (Classroom achievement) तथा उनकी बुद्धिलब्धि (Intelligence Quotient) में क्या संबंध होता है ? समस्या के प्रश्नवाचक कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि समस्या द्वारा उनसे कुछ पूछा जा रहा है जिसका उत्तर शोध करने के बाद ही दिया जा सकता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि शोध समस्या को प्रश्नवाचक वाक्य में न प्रस्तुत कर साधारण वाक्य (Simple statement) के रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है। परन्तु यह तरीका अधिक प्रचलित नहीं है क्योंकि इससे यह नहीं पता चल पाता है कि शोधकर्ता वास्तव में किस बिन्दु को लेकर शोध करना चाहता है।
- ii. शोध कथन द्वारा दो या दो से अधिक चरों के बीच के संबंधों को व्यक्त किया जाता है। अर्थात् शोध समस्या के कथनों को व्यक्त करने के पहले शोधकर्ता को विभिन्न चरों के बारे में स्पष्ट रूप से समझ लेना होता है। उपर्युक्त उदाहरण में वर्ग निष्पादन (Classroom achievement) तथा बुद्धिलब्धि (IQ) दो अलग-अलग चर हैं। चरों की पहचान कर लेने के बाद दोनों के बीच एक विशेष प्रकार के संबंध की उम्मीद की जाती है।

प्रायः किसी भी समस्या की उत्पत्ति ज्ञान में रिक्ति (Gap in Knowledge), विरोधी परिणाम (Contradictory Result) तथा जब कोई तथ्य व्याख्या रहित सूचना के अंश के रूप में रह जाता है, के कारण होती है।

5.5 एक अच्छी समस्या की विशेषताएँ (Characteristics of a good problem) :

वैज्ञानिक समस्या को ही अच्छी समस्या कहते हैं। इन वैज्ञानिक समस्याओं के लिए कुछ वंछित विशेषताएँ बतलाई गई हैं जिनसे शोध समस्याओं का स्वरूप और भी स्पष्ट को जाता है। ये विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

- (i) एक अच्छी समस्या आमतौर पर प्रश्नवाचक वाक्य के रूप में होती है।
- (ii) एक अच्छी समस्या दो या दो से अधिक चरों के बीच संबंधों का अध्ययन करती है।
- (iii) एक अच्छी या वैज्ञानिक समस्या के लिए आवश्यक है कि वह बहुत ही स्पष्ट तथा मूर्त तथा अंसदिग्ध प्रश्न के रूप में हो।
- (iv) वैज्ञानिक समस्या को समाधान योग्य होना चाहिए।
- (v) एक अच्छी समस्या में यह विशेषता देखी जाती है कि उसके समाधान तथा जाँच के लिए कोई उपयुक्त विधि उपलब्ध हो।
- (vi) एक अच्छी समस्या हम उसे मानते हैं जिसका स्वरूप सीमांकित अर्थात् निश्चित सीमाओं में केन्द्रित रहता है।
- (vii) समस्या ऐसी होनी चाहिए कि इसमें एक चर का दूसरे चर पर क्या और कितना प्रभाव पड़ रहा है, इसका मात्रात्मक मापन (Quantitative Measurement) किया जा सके।
- (viii) वैज्ञानिक समस्या की एक विशेषता यह होती है कि इसे परिकल्पना या परिकल्पनाओं के रूप में बदली जा सकती है या उसके आधार पर परिकल्पनाओं का निर्माण किया जा सकता है और फिर उसका परीक्षण भी किया जा सकता है।
- (ix) एक अच्छी शोध समस्या के लिए यह भी आवश्यक है कि इसका प्रायोगिक या व्यावहारिक महत्व होना चाहिए।

जब भी आप किसी वैज्ञानिक शोध समस्या का चयन करते हैं तो उस समय आपको उपर्युक्त विशेषताओं का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए तभी आप एक अच्छी समस्या का निर्माण कर सकेंगे।

5.6 शोध समस्या के उत्पत्ति के कारण (Reasons Behind emerging a research problem) :

किसी भी समस्या की उत्पत्ति के पीछे कुछ न कुछ कारण अवश्य होते हैं। मैकगूगन (McGuigan: 1998) ने ऐसी ही निम्नलिखित तीन परिस्थितियों की चर्चा की है जिसकी वजह से समस्या की उत्पत्ति होती है।

1. **ज्ञान में रिक्ति (Gap in Knowledge)**– कभी-कभी कुछ प्रश्न ऐसे होते हैं जिसका हम अभी तक के ज्ञान तथा उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर उत्तर नहीं ढूँढ़ पाते क्योंकि उस प्रश्न के संबंध में हमें पर्याप्त सूचनायें उपलब्ध नहीं रहती तो समस्या उत्पन्न हो जाती है। हमारे ज्ञान में अधूरापन शोध के लिए उपयुक्त समस्या के रूप में अभिव्यक्त होता है। इसलिए मैकगूगन (1998) ने कहा है, “सूचनाओं का अभाव ही शोध के लिए समस्या ढूँढ़ने का सबसे अच्छा उपाय है।”
2. **विरोधी परिणाम (Contradictory Result)**- कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि किसी एक समस्या पर अलग-अलग शोधकर्ताओं के निष्कर्षों में असहमति या भिन्नता देखी जाती है तो ऐसी अवस्था में समस्या उठ खड़ी होती है कि इन विभिन्न परिणामों में से कौन सा परिणाम वास्तव में सही है। मैकगूगन (1998) ने कहा है, “जब विभिन्न अनुसंधानों के परिणामों में असहमति होती है तो समस्या स्वतः उत्पन्न होती है।”
3. **तथ्य की व्याख्या (Explaining a fact)** – जब किसी तथ्य की व्याख्या नहीं हो पाती या होती भी है तो स्पष्ट रूप से नहीं हो पाती तब ऐसी स्थिति में वहाँ समस्या उत्पन्न हो जाती है। मैकगूगन (1998) ने भी माना है कि “जब कोई तथ्य व्याख्या रहित सूचना के अंश के रूप में रह जाता है तो वहाँ समस्या उत्पन्न होती है।”

5.7 शोध समस्या की उत्पत्ति के स्रोत (Source of Research Problem)

किसी शोध के लिए एक उपयोगी और वैज्ञानिक समस्या को ढूँढ़ना अपने आप में एक मुश्किल कार्य है। फिर भी शोध विशेषज्ञों ने कुछ ऐसी स्रोतों या आधारों की चर्चा की है जिनसे उपयुक्त समस्या के चयन में हमें काफी सहायता मिलती है। ये स्रोत निम्नलिखित हैं -

1. समाज की प्रासंगिक समस्याएँ।
2. शोधकर्ता का गहन अध्ययन एवं उनकी विशिष्टता।
3. परस्पर विरोधी शोध उपलब्धियाँ
4. वर्तमान की आवश्यकताएँ
5. पूर्व के शोध कार्य
6. शोध-सार, पत्रिकाएँ, विश्वज्ञान कोष, तथा संगत पुस्तकें
7. शोधकर्ता की वैयक्तिक अभिरूचि
8. विशेषज्ञों का सुझाव
9. नियोजन निर्देश कार्यक्रम
10. उपेक्षित क्षेत्र

उपरोक्त सभी क्षेत्रों से आप शोध समस्या को प्राप्त कर सकते हैं। इन क्षेत्रों के अलावा भी आप अपने चिंतन के द्वारा शोध समस्या के अन्य क्षेत्रों को चिन्हित कर सकते हैं।

5.8 शोध उद्देश्य (Research Objectives) :-

शोध कार्य एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। शोध कार्य को पूर्ण करने हेतु निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण करना होता है।

1. शोध समस्या के क्षेत्र का निश्चय एवं समस्या का चयन। (Problem area and selection of the problem)
2. शोध समस्या का सीमांकन (Delimiting the problem)
3. शोध उद्देश्य का निर्धारण (Research Objectives)
4. शोध समस्या के संभावित हल (प्राक्कल्पना) को सूचना (Listing out the probable solution (hypothesis) of the problem)
5. शोध अभिकल्प (Research Design)
6. आंकड़ों का संग्रहण एवं विश्लेषण (Data collection and analysis)
7. परिकल्पना का निस्तारण या स्वीकृति (Rejection or Acceptance of Hypothesis)
8. शोध समस्या का निष्कर्ष व मूल्यांकन (Conclusion and Evaluation)

अतः शोध समस्या के समाधान हेतु उद्देश्य का निर्धारण, इस प्रक्रिया का तृतीय महत्वपूर्ण सोपान होता है। किसी भी शोध कार्य में प्रायः शोध के उद्देश्यों को तीन भागों में बांटा जा सकता है- मुख्य

उद्देश्य (Main Objectives), गौण उद्देश्य (Subsidiary Objectives) तथा सहवर्ती उद्देश्य (Concomitant Objectives)|

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1. समस्या कथन (Problem statement) की अभिव्यक्ति वाक्य के द्वारा होना चाहिए।
2. वैज्ञानिक समस्या कोयोग्य होना चाहिए।
3. शोध समस्या का चयन शोध प्रक्रिया कीअवस्था होती है।
4. जब कोई तथ्य व्याख्या रहित सूचना के अंश के रूप में रह जाता है तो वहाँ उत्पन्न होती है।
5. सूचनाओं का अभाव ही शोध के लिए ढूँढ़ने का सबसे अच्छा उपाय है।

5.9 परिकल्पना- अर्थ व परिभाषा (Hypothesis-Meaning and Definition):

अर्थ व परिभाषा: शोध चाहे वह प्रयोगात्मक हो या अप्रयोगात्मक, किसी समस्या के चयन के बाद शोधकर्ता को उस समस्या से सम्बंधित परिकल्पना का निर्माण करना होता है। किसी शोध के लिए वास्तविक अध्ययन शुरू करने पहले शोधकर्ता अनुमान लगाता है कि अध्ययन करने के बाद किस तरह का परिणाम निकलेगा, सरल अर्थों में इसे ही परिकल्पना (Hypothesis) कहते हैं। दूसरे शब्दों में, शोधकर्ता किसी शोध समस्या के चयन के बाद उसका एक अस्थायी समाधान (tentative solution) जाँचनीय प्रभाव के रूप में करता है। इस जाँचनीय प्रस्ताव को तकनीकी भाषा में परिकल्पना कहते हैं। अर्थात् परिकल्पना या परिकल्पना किसी शोध का एक प्रस्तावित परीक्षणिय उत्तर होता है। उदाहरण के लिए मान लें कि यदि हम देखना चाहते हैं कि “पुरस्कार एवं दंड का शिक्षण पर क्या असर पड़ेगा ?” वास्तविक अध्ययन शुरू करने के पहले ही हम अपनी पूर्वानुमान द्वारा यह अनुमान लगा लेते हैं कि “शिक्षण पर पुरस्कार का प्रभाव दंड की अपेक्षा ज्यादा अच्छा होगा।” इसी अनुमानित एवं परीक्षणिय उत्तर या कथन को परिकल्पना कहते हैं। यदि प्रयोग या शोध के निष्कर्षों से परिकल्पना की पुष्टि हो जाती है तो उस परिकल्पना को सही मान लिया जाता है। परंतु यदि इसकी पुष्टि नहीं होती तो या तो परिकल्पना में परिमार्जन (Modification) कर दिया जाता है या फिर उसकी जगह पर कोई नई परिकल्पना विकसित कर ली जाती है।

भिन्न-भिन्न शोध विशेषज्ञों ने इसकी विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं:

रेबर तथा रेबर (Reber and Reber 2001) के अनुसार, “परिकल्पना वह कथन, प्रस्ताव, अभिधारणा है जो कुछ तथ्यों की अंतरिम व्याख्या का काम करती है।” (Hypothesis is any statement proposition or a assumption that serve as a tentative explanation of certain facts.)

मैकग्यून (1990) के अनुसार दो या दो से अधिक चरों के बीच संभावित संबंधों के बारे में बनाये गये परीक्षणीय कथन को पूर्वकल्पना कहा जाता है (A testable statement of a potential relationship between two or more variables is called Hypothesis)।

करलिंगर के अनुसार, “दो या दो से अधिक चरों के बीच के अनुमानात्मक कथन को परिकल्पना कहा जाता है। प्राक्कल्पनाओं को हमेशा घोषणात्मक वाक्य के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है और वे चरों से चरों के बीच में सामान्य या विशिष्ट संबंध बतलाते हैं।” (A Hypothesis is a conjectural statement of the relationship between two or more variables. Hypotheses are always in declarative statement form and they relate either generally or specifically variables to variables).

5.10 परिकल्पना की विशेषताएं (Characteristics of Hypothesis) :

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर हमें परिकल्पना के स्वरूप के बारे में निम्नलिखित बातें मालूम होती हैं-

- i. परिकल्पना में दो या दो से अधिक चरों (Variables) के बीच के संबंधों का उल्लेख किया जाता है।
- ii. परिकल्पना की जाँच आनुभविक अध्ययनों (Empirical study) के आधार पर की जाती है। इसके लिए आवश्यक है कि परिकल्पना को एक परीक्षणीय कथन (Testable statement) के रूप में व्यक्त किया जाए।
- iii. परिकल्पना वास्तविक परीक्षण के पूर्व किया गया अनुमानित प्रस्ताव है। समस्या के सामने आते ही उसके समाधान के पूर्व उसके परिणाम के बारे में एक अनुमान दिमाग में आ जाता है वही परिकल्पना है। यह परिकल्पना व्यक्ति अपने अनुभवों के आधार पर बनाता है।

- iv. परिकल्पना वास्तविक परीक्षण के बाद या तो सही प्रमाणित होती है या गलत प्रमाणित होती है। वास्तविक परीक्षण का परिणाम जब पूर्वकल्पना के कथन के अनुरूप होता है तो इस पूर्वकल्पना को स्वीकार कर लिया जाता है। इसके विपरीत परीक्षण परिणाम परिकल्पना के प्रतिकूल रहता है तो ऐसी स्थिति में इस परिकल्पना को अस्वीकृत कर दिया जाता है।
- v. परिकल्पना के रूप में जो प्रस्ताव बनाए जाते हैं या जो परिकल्पना बनायी जाती है उसका आधार शोधकर्ता दो या अधिक चरों के बीच एक सामान्य या विशिष्ट संबंधों की कल्पना करता है।

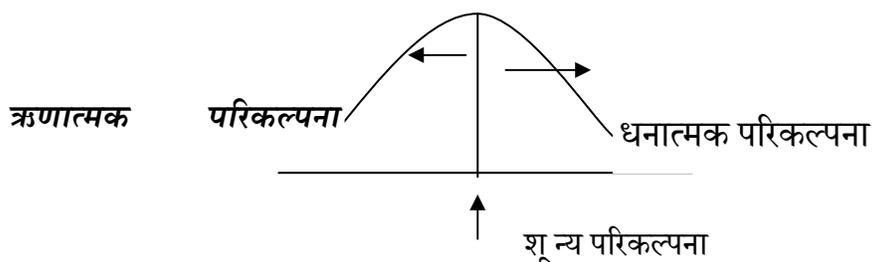
5.11 परिकल्पना के प्रकार (Types of Hypothesis) :

शोध के क्षेत्र में शोधकर्ताओं द्वारा बनाये गये प्राक्कल्पनाओं के स्वरूप पर यदि ध्यान दिया जाय तो यह स्पष्ट हो जाएगी कि उसे कई प्रकारों में बाँटा जा सकता है जो निम्नलिखित है-

1. **चरों में विशेष संबंध के आधार पर (On the basis of specific relationship among relationship)**
 - A. सार्वभौमिक परिकल्पना (Universal Hypothesis)
 - B. अस्तित्वात्मक परिकल्पना (Existential Hypothesis)
2. **कथन के स्वरूप के आधार पर (On the basis of the nature of statement)**
 - A. सकारात्मक परिकल्पना (Positive Hypothesis)
 - B. नकारात्मक परिकल्पना (Negative Hypothesis)
 - C. शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis)
3. **चरों की संख्या के आधार पर (On the basis of number of variables)**
 - A. साधारण परिकल्पना (Simple Hypothesis)
 - B. जटिल परिकल्पना (Complex Hypothesis)
4. **विशिष्ट उद्देश्य के आधार पर (On the basis of specific purpose)**
 - A. करणत्व परिकल्पना (Causal Hypothesis)
 - B. वर्णनात्मक परिकल्पना (Descriptive Hypothesis)
 - C. शोध परिकल्पना (Research Hypothesis)
 - D. सांख्यिकीय परिकल्पना (Statistical Hypothesis)

उपरोक्त सभी प्राक्कल्पनाओं के प्रकार को सही ढंग से समझने के लिए उनका संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है-

- (i) **सार्वभौमिक परिकल्पना (Universal Hypothesis)**- ऐसी परिकल्पना जो निहित चरों के मध्य पाये जाने संबंध को हर परिस्थिति व हर समय में बनाये रखता है। जैसे प्राणी की सीखने की प्रक्रिया घनात्मक पुनर्बलन से प्रभावित होती है। यह परिकल्पना प्रायः हर परिस्थिति व हर समय में कार्यशील होती है।
- (ii) **अस्तित्वात्मक परिकल्पना (Existential Hypothesis)**- वैसी परिकल्पना जो सभी व्यक्तियों या परिस्थितियों के लिए नहीं तो कम से कम एक व्यक्ति या परिस्थिति के लिए निश्चित रूप से सही होती है।
- (iii) **सकारात्मक परिकल्पना (Positive Hypothesis)**- इसमें परिकल्पना का कथन सकारात्मक रूप में होता है। जैसे -अभ्यास की मात्रा बढ़ाने से सीखने की मात्रा में वृद्धि होती है।
- (iv) **नकारात्मक परिकल्पना (Negative Hypothesis)**- इस प्रकार की परिकल्पना में कथन नकारात्मक रूप में होता है। जैसे- अभ्यास से सीखने की गति में वृद्धि नहीं होती है। सकारात्मक व नकारात्मक परिकल्पनाओं को निर्देशित परिकल्पना (Directional Hypothesis) कहते हैं।
- (v) **शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis)**- शून्य परिकल्पना का अर्थ है कि दो चर जिनमें संबंध ज्ञात करना है, उनमें कोई अंतर नहीं है। जैसे- राम और श्याम की बुद्धिलब्धि में कोई अंतर नहीं है। शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis) को नकारात्मक (Negative) परिकल्पना इस अर्थ में मानते हैं कि दो चरों में कोई संबंध नहीं है। इस परिकल्पना को अनिर्देशित (non-directional) परिकल्पना भी कहते हैं। इसकी परीक्षण के लिए द्वि -पुच्छीय परीक्षण (two-tailed test) का प्रयोग करते हैं।



-
- (vi) **साधारण परिकल्पना (Positive Hypothesis)**- जिसमें चरों की संख्या मात्र दो होती है और सिर्फ इन्हीं दो चरों के संबंध द्वारा शोध समस्या का एक प्रस्तावित उत्तर दिया जाता है, साधारण परिकल्पना कहलाती है।
 - (vii) **जटिल परिकल्पना (Complex Hypothesis)**- जिसमें चरों की संख्या दो से अधिक होती है और विभिन्न चरों के संबंध द्वारा शोध समस्या का एक प्रस्तावित उत्तर दिया जाता है, जटिल परिकल्पना कहलाती है।
 - (viii) **कारणत्व परिकल्पना (Causal Hypothesis)**- कारणत्व परिकल्पना के माध्यम से व्यवहार का विशिष्ट कारण या व्यवहार पर पड़ने वाले विशिष्ट प्रभाव की व्याख्या होती है।
 - (ix) **वर्णनात्मक परिकल्पना (Descriptive Hypothesis)**- वर्णनात्मक परिकल्पना वैसे परिकल्पना को कहा जाता है जो व्यवहार की व्याख्या उसकी विशेषताओं या उस परिस्थिति जिसमें वह घटित होता है, के रूप में करता है।
 - (x) **शोध परिकल्पना (Research Hypothesis)**- शोध परिकल्पना का अर्थ वैसे परिकल्पना से है जो किसी घटना या तथ्य के लिए बनाये गये विशिष्ट सिद्धान्त से निकाली गयी अनुमिति (deductions) पर आधारित होती है। शोध परिकल्पना के संक्रियात्मक अभिव्यक्ति (Operational statement) को ही वैकल्पिक परिकल्पना (Optional Hypothesis) कहा जाता है।

5.12 एक अच्छे परिकल्पना की विशेषताएं (Characteristics of a good Hypothesis) :

यदि आपको किसी परिकल्पना के सन्दर्भ में निर्णय लेना है कि वह अच्छा है या बुरा है तो आपको कुछ खास कसौटियों को ध्यान में रखना होगा ताकि आप एक परिकल्पना को मूल्यांकित कर सकें। शोध विशेषज्ञों ने अच्छे शोध परिकल्पना में निम्न विशेषताओं का होना बताया है-

- (i) परिकल्पना को अवधारणात्मक रूप से सुस्पष्ट होना चाहिए।
- (ii) परिकल्पना को जाँचनीय होना चाहिए।
- (iii) परिकल्पना को क्षेत्र के मौजूदा सिद्धान्त एवं तथ्यों से संबंधित होना चाहिए।
- (iv) परिकल्पना का स्वरूप सामान्य होना चाहिए।
- (v) परिकल्पना से अधिक से अधिक अनुमिति किया जाना संभव होना चाहिए।
- (vi) परिकल्पना को मितव्ययी होना चाहिए।

-
- (vii) परिकल्पना को तर्क पर आधारित होना चाहिए।
 - (viii) परिकल्पना को व्यापक होना चाहिए।
 - (ix) परिकल्पना को प्राप्य वैज्ञानिक परीक्षणों एवं उपकरणों से संबंधित होना चाहिए।
 - (x) अध्ययन किए जाने वाले क्षेत्र की अन्य परिकल्पनाओं का बनाई गयी परिकल्पना के साथ तालमेल होना चाहिए।
-

5.13 परिकल्पना के कार्य (Functions of Hypothesis) :

शोध परिकल्पना का किसी अनुसंधान के क्षेत्र में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान होता है। शोध विशेषज्ञों ने परिकल्पना के कुछ महत्वपूर्ण कार्यों को बताया है जो इस प्रकार हैं-

- (i) किसी प्राकृतिक या मानवीयकृत घटना का वर्णन करना,
 - (ii) ज्ञान के सभी क्षेत्रों में नए सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना,
 - (iii) ज्ञान के सभी क्षेत्रों में वर्तमान सिद्धान्तों की जाँच करना,
 - (iv) शैक्षणिक विधियों में सुधार करना,
 - (v) सामाजिक समस्याओं के समाधान के नए तरीकों को खोजना,
 - (vi) शोध विशेषज्ञता में वृद्धि,
 - (vii) शोध के लिए दिशा निर्देशन देना,
 - (viii) शोध को सार्थक बनाना,
 - (ix) शोध के लिए आरंभ बिन्दु प्रदान करना,
 - (x) सत्य की स्थापना में सहायक,
 - (xi) समस्या के वैज्ञानिक समाधान में सहायक,
 - (xii) पूर्वकथन में सहायक,
 - (xiii) शोध क्षेत्र के परिसीमन में सहायक,
 - (xiv) विश्वसनीय व वैध ज्ञान प्राप्ति में सहायक
-

5.14 परिकल्पना के स्रोत या आधार (Source or Bases of Hypothesis) :

परिकल्पना का निर्माण करना शोधकर्ता के लिए एक मुश्किल काम होता है। ऐसा नहीं होता कि समस्या के समाधान से संबंधित जो पूर्वानुमान समस्या के समाधान के पहले हम करते हैं वे पूरी तरीके से काल्पनिक होते हैं बल्कि उसका कोई न कोई ठोस आधार अवश्य होता है। यही आधार

परिकल्पना के निर्माण में सहायक होता है। इन आधारों को ही परिकल्पना के स्रोत कहते हैं। कुछ ऐसे ही परिकल्पना के स्रोत निम्नलिखित हैं जो आपको परिकल्पना के निर्माण में सहायता प्रदान करेगी-

- (i) शोधकर्ता का मानसिक तत्परता,
- (ii) व्यक्तित्व शोध साहित्य,
- (iii) उपलब्ध शोध साहित्य,
- (iv) उपलब्ध संगत सिद्धान्त,
- (v) विशेषज्ञों के विचार एवं निर्देश,
- (vi) दो घटनाओं के मध्य अनुरूपता,
- (vii) संस्कृति,
- (viii) विरोधी परिणाम,
- (ix) पूर्ववर्ती शोध परिणाम।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

6. जिसमें चरों की संख्या दो से अधिक होती है और विभिन्न चरों के संबंध द्वारा शोध समस्या का एक प्रस्तावित उत्तर दिया जाता है,परिकल्पना कहलाती है।
7. अनिर्देशित (non-directional) की परीक्षण के लिए परीक्षण का प्रयोग करते हैं।
8.परिकल्पना का अर्थ है कि दो चर जिनमें संबंध ज्ञात करना है, उनमें कोई अंतर नहीं है।
9. ऐसी परिकल्पना जो निहित चरों के मध्य पाये जाने संबंध को हर परिस्थिति व हर समय में बनाये रखता है.....कहलाती है।
10. दो या दो से अधिक चरों के बीच संभावित संबंधों के बारे में बनाये गये परीक्षणीय कथन कोकहा जाता है।

5.15 शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न पद (Di

5.16 Different steps of Making Synopsis)

एक आदर्श शैक्षिक शोध प्रस्ताव का विकास आपको निम्नलिखित पदों के अन्तर्गत करना चाहिए। यहाँ पर शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न पदों को प्रस्तुत किया गया है-

1. **अध्ययन शीर्षक (Title of the study)** : आमुख पृष्ठ (Cover page) पर प्रस्तावित अध्ययन का शीर्षक दिया जाता है ताकि शोध समस्या के बारे में शीर्षक से पता चल जाए।
2. **उपाधि का नाम (The name of the degree for which the research is to be carried out)** : शोध कार्य जिस उपाधि को प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है, उसका नाम आमुख पृष्ठ (Cover page) पर होना चाहिए।
3. **संस्था का नाम जहाँ प्रस्तुत करना है (The name of the institute where the research work is to be submitted)** : आमुख पृष्ठ पर उस संस्था का नाम का जिक्र अवश्य होना चाहिए जहाँ शोध कार्य को प्रस्तुत व जमा करना है।
4. **पर्यवेक्षक का नाम (Name of supervisor)** : शोध कार्य जिसके निर्देशन में संपन्न किया जायेगा उनका नाम आमुख पृष्ठ पर होना चाहिए।
5. **शोधकर्ता का नाम (Name of Researcher)** : शोध कार्य जिनके द्वारा संपन्न किया जाता है, उनका नाम भी आमुख पृष्ठ पर होना चाहिए। स्पष्टता के लिए शोध प्रस्ताव आमुख पृष्ठ का प्रारूप नीचे दिया गया है।
6. **शोध समस्या (Research Problem)** : वैज्ञानिक शोध की शुरुआत शोध समस्या के चयन से होती है। समस्या के बिना शोध कार्य शुरू हो ही नहीं सकता। शोध की समस्या का उल्लेख घोषणात्मक कथन के रूप में किया जाता है परंतु उसे प्रश्नवाचक कथन के रूप में भी अभिव्यक्त किया जा सकता है। सामान्यतः शोध की समस्या का उल्लेख इस [] से किया जाता है कि उससे शोध के विशिष्ट लक्ष्य का स्पष्ट रूप से अनुमान लगाया जा सके। शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता न केवल शोध समस्या का उल्लेख करता है बल्कि वह उसके महत्व पर भी बल डालता है। दूसरे शब्दों में, शोधकर्ता यह भी बतलाने की कोशिश करता है कि इस समस्या का समाधान किस तरह से शैक्षिक या मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रभावित करेगा और उसका विशेष लाभ शिक्षाविदों और मनोवैज्ञानिकों को कैसे मिलेगा।

7. **समस्या का कथन (Statement of the problem) :** इस बिन्दु पर शोध की मूल समस्या को निश्चित एवं स्पष्ट शब्दावली दी जाती है ताकि शोध समस्या को समझने में किसी तरह की संदिग्धता न रहे।
8. **शोध उद्देश्य (Research objectives) :** शोध प्रस्ताव में शोध समस्या को हल करने हेतु, शोध उद्देश्य लिखने होते हैं। शोध एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। बिना उद्देश्य के शोध कार्य में सफलता नहीं मिल सकती। शोध उद्देश्य को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है – मुख्य उद्देश्य व गौण उद्देश्य। इन दोनों के अलावा सहवर्ती उद्देश्य (*Concomitant objectives*) भी होता है। एक शोध प्रस्ताव में मुख्य उद्देश्य, गौण उद्देश्य व सहवर्ती उद्देश्य का स्पष्टतापूर्वक उल्लेख होना चाहिए।
9. **प्राक्कल्पना (Hypothesis) :** शोध प्रस्ताव में शोध समस्या पर आधारित प्राक्कल्पनाओं का उल्लेखन अनिवार्य है। शोध की इस अवस्था में परिकल्पना अथवा परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। परिकल्पना का अर्थ वह अनुमानित कथन है जो शोध के परिणामों के संबंध में भविष्यवाणी की जाती है। वास्तविक शोध के बाद जो परिणाम प्राप्त होते हैं उनके आधार पर यह भविष्यवाणी सही भी हो सकती है और गलत भी।

परिकल्पनाओं का निर्माण करते समय शोधकर्ता या अनुसंधानकर्ता को कई बातों पर ध्यान देना आवश्यक है –

- i. परिकल्पनाओं को बहुत विशिष्ट होना चाहिए।
 - ii. परिकल्पना इस प्रकार की हो कि वह शोधकर्ता को शोध के लिए दिशा निर्देशित कर सके।
 - iii. परिकल्पना को शोधकर्ता के चिंतन को ज्यादा तीक्ष्ण बनाने वाला तथा शोध समस्या के प्रमुख तत्वों पर जोर देने वाला होना चाहिए।
 - iv. इसे विवेकी होना चाहिए।
 - v. परिकल्पना का कथन ऐसा होना चाहिए जिसमें समस्या से संबंधित दो या दो से अधिक चरों के बीच संबंध के बारे में पूर्वकथन किया गया हो, और
 - vi. इसका स्वरूप जाँचनीय होना चाहिए।
- एक उपयुक्त परिकल्पना समस्या समाधान के लिए हमें स्पष्ट मार्गदर्शन करती है।

10. **शोध में प्रयुक्त शब्दों की परिभाषायें, पूर्वधारणा, परिसीमाएं तथा सीमांकन** (*Definition of the words used in research, assumptions, limitations, and delimitations*): शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता प्रस्तावित शोध में प्रयुक्त शब्दों की परिभाषा, पूर्वधारणा, परिसीमा तथा सीमांकन का जिक्र करता है।
- परिभाषा (Definitions)** : शोध प्रस्ताव में प्रस्तावित शोध में सम्मिलित होने वाले सभी चरों को शोधकर्ता संक्रियात्मक (Operationally) रूप से परिभाषित करता है। चरों की संक्रियात्मक परिभाषा से तात्पर्य किसी संप्रत्यय (Concept) को मापने तथा उत्पन्न करने के लिए आवश्यक संक्रियाओं (Operations) के कथन (Statements) से होता है।
 - पूर्वधारणा (Assumptions)** : पूर्वधारणा का अर्थ उस कथन से होता है जिसमें शोधकर्ता विश्वास तो करता है परंतु जिसकी जाँच नहीं कर सकता है, ऐसे पूर्वकल्पनाओं का उल्लेख भी शोध प्रस्ताव में महत्वपूर्ण माना जाता है।
 - परिसीमा (Limitation)** : जो अवस्था शोधकर्ता के नियंत्रण से बाहर होता है तथा जो अध्ययन के निष्कर्ष एवं उसका अन्य परिस्थितियों में अनुप्रयोग पर प्रतिबंध लगाता है शोध की परिसीमा कहलाती है। यह भी शोध प्रस्ताव का एक महत्वपूर्ण अंग होता है।
 - सीमांकन (Delimitations)** : सीमांकन शोध अध्ययन के फैलाव क्षेत्र से संबंधित होता है। यह शोध अध्ययन के चहारदीवारी के रूप में कार्य करता है। प्रस्ताव में इस तथ्य का भी उल्लेख होता है कि अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष किन व्यक्तियों या स्थितियों पर लागू होगा तथा उस विशिष्ट प्रतिदर्श के बाहर निष्कर्ष को सही नहीं ठहराया जा सकता है। इस प्रक्रिया को सीमांकन की संज्ञा दी जाती है।
11. **संबंधित साहित्य की समीक्षा (Review of related literature)** : शोध समस्या से संबंधित साहित्य की समीक्षा प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से शोध कार्य में सहायता पहुँचाती है, जिसका उल्लेख अवश्य रूप से शोध प्रस्ताव में होना चाहिए। यह समीक्षा शोध कार्य को एक निश्चित दिशा देने में सहायक होता है। शोध समस्या से संबंधित साहित्य की समीक्षा के कई लाभ हैं –
- शोध समस्या के संबंध में शोधकर्ता को जानकारी मिलती है कि यह शोध कहाँ तक सार्थक है।

-
- ii. शोध समस्या के समाधान से संबंधित अध्ययन की दिशा निर्धारित करने में सुविधा होती है।
- iii. परिकल्पनाओं का निर्माण करना आसान हो जाता है।
- iv. अध्ययन करने के बाद जो परिणाम प्राप्त होते हैं उसकी विवेचना करने तथा परिकल्पनाओं के स्वीकृत तथा अस्वीकृत होने के संबंध में जो व्याख्या की जाती है उसमें साहित्य सर्वेक्षण से काफी मदद मिलती है।
12. **अध्ययन के चर (Variables under study)** : शोध प्रस्ताव में अध्ययन के चरों का वर्णन किया जाता है। किन चरों का अध्ययन किया जाता है तथा किन चरों का नियंत्रण किस प्रकार करना है ?
13. **अध्ययन विधि (Study methods)** : शोध प्रस्ताव में शोध अध्ययन विधि का उल्लेखन आवश्यक है। अध्ययन विधि में प्रतिदर्श, अध्ययन अभिकल्प (Design of the study) उपकरण (Tools) तथा परीक्षण (Tests) और सांख्यिकीय विधियों की चर्चा की जाती है।
- i. **प्रतिदर्श (Sample)** : शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता को अपने अध्ययन के प्रतिदर्श के संबंध में निर्णय करना होता है। वास्तविक शोध कार्य शुरू करने के पहले यह निश्चित करना होता है कि प्रस्तुत अध्ययन में किस प्रकार का प्रतिदर्श होगा इसका आकार क्या होगा, किस आयु एवं वर्ग के प्रयोज्य होंगे, प्रतिदर्श किस जनसंख्या से लिए जायेंगे तथा किस विधि के द्वारा चुने जायेंगे। प्रतिदर्श या तो संभाव्यता प्रतिचयन (Probability sampling) या असंभाव्यता प्रतिचयन तकनीक (Non-probability Technique) द्वारा चुने जाते हैं। किस विधि के द्वारा प्रतिदर्श का चयन किया जाएगा यह शोध के उद्देश्य एवं शोधकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है।
- ii. **अध्ययन अभिकल्प (Design of the study)** : किसी भी शोध प्रस्ताव में शोध से संबंधित अभिकल्प (design) का उल्लेख करना आवश्यक होता है। किसी भी शोध का एक प्रमुख चरण अध्ययन के लिए किसी उचित अभिकल्प का चयन करना होता है। सामान्यतः अभिकल्प दो तरह के होते हैं जिन्हें प्रयोगात्मक अभिकल्प (Experimental design) तथा अप्रयोगात्मक अभिकल्प (Non-experimental design) कहते हैं। शोधकर्ता

आवश्यकतानुसार, किसी एक अभिकल्प का चयन कर लेता है। प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में वातावरण को नियंत्रित (control) करने की आवश्यकता होती है साथ ही साथ यादृच्छिक (randomly) रूप से प्रतिदर्श (sample) का चयन किया जाता है। इसके विपरित अप्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में वातावरण को नियंत्रित करने की आवश्यकता नहीं होती है तथा शोधकर्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार किसी अभिकल्प का चयन कर लेता है। इस भाग का सबसे प्रमुख अवयव, क्रियाविधि (procedure) होती है। इस भाग में शोधकर्ता को उन सभी प्रक्रियाओं का वर्णन करना होता है जिनसे होकर अभी तक की शोध प्रक्रिया हुई है। यहाँ यह बताना होता है कि किस प्रकार प्रयोज्यों को विभिन्न समूहों में बाँटा गया, किस समूह को क्या निर्देश दिया गया।

- iii. **उपकरण तथा परीक्षण (Tools and Tests)** – शोध प्रस्ताव के इस भाग में उन उपकरणों तथा परीक्षणों के संबंध में निर्णय लिया जाता है जिसका उपयोग शोध कार्य में करना होता है। प्रत्येक शोध में आंकड़ों के संग्रह के लिए कुछ विशेष उपकरणों तथा परीक्षणों को प्रयोग में लाया जाता है। उपकरणों एवं परीक्षणों का चयन, शोध समस्या एवं परिकल्पना के अनुसार किया जाता है। कभी-कभी आवश्यकता के अनुसार कोई उपकरण या परीक्षण उपलब्ध नहीं होता है तो शाधकर्ता स्वयं किसी परीक्षण का निर्माण करता है एवं उनका उपयोग करता है।
- iv. **सांख्यिकीय विधि (Statistical Device)** – शोध प्रस्ताव में शोध कार्य के दौरान प्राप्त होने वाले आंकड़ों के विश्लेषण के लिए व्यवहार की जाने वाली सांख्यिकीय विधियों के संबंध में निर्णय लिया जाता है। इसमें सिर्फ वैसी विधियों का ही इस्तेमाल किया जाता है जो आंकड़ों के अनुकूल तथा शोध के उद्देश्य को पूरा करने के लिए उपयुक्त हों। कुछ प्रमुख सांख्यिकीय विधियाँ हैं जो आंकड़ों के विश्लेषण के लिए आमतौर पर उपयोग में लायी जाती हैं, वे हैं – माध्य (Mean), माध्यिका (Median), टी-अनुपात (t-ratio), काई-वर्ग (Chi square), सहसंबंध विधि (Correlation method), प्रसरण विश्लेषण (ANOVA) आदि। आवश्यकतानुसार ग्राफीय विधियों (Graphical

methods) का भी व्यवहार किया जाता है। इसमें बारंबारता बहुभुज (Frequency polygon), आयत चित्र (Histogram) दंड आरेख (Bar diagram) संचयी बारंबारता वक्र (Cumulative frequency curve) आदि मुख्य हैं।

14. **समय अनुसूची (Time Schedule)** : शोध प्रस्ताव के इस भाग में शोध कार्य को पूरा करने की अनुमानित समयावधि का जिक्र किया जाता है। इसमें सामान्यतः शोध कार्य को छोटी-छोटी इकाइयों में बाँट दिया जाता है और प्रत्येक इकाई को पूरा किए जाने के समय सीमा का उल्लेख किया जाता है।
15. **संभावित परिणाम (Expected Results)** : एक आदर्श शोध प्रस्ताव में प्रस्तावित शोध के संभावित परिणाम का संक्षिप्त रूप से वर्णन कर दिया जाता है तथा उन तथ्यों पर भी प्रकाश डाला जाता है जो शोध के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। इसमें संभावित परिणाम का उचित विकल्प का भी वर्णन होता है तथा उन समस्याओं का भी उल्लेख होता है जिसका जन्म उन परिस्थितियों में हो सकता है जब वास्तविक परिणाम संभावित परिणाम से भिन्न होंगे।
16. **संभावित अध्याय (Probable Chapters)** : एक उत्तम शोध प्रस्ताव में संभावित अध्यायों की रूपरेखा भी प्रस्तुत की जाती है।
17. **संदर्भ ग्रन्थों की सूची (References)** : इस भाग में शोध प्रस्ताव में सम्मिलित किए गए विज्ञानियों के नामों को तथा उनके शोध-लेख के प्रकाशन से संबंधित संपूर्ण विवरण होता है। यह बहुत कुछ शोध के अंतिम रिपोर्ट जो शोध पूरी होने के बाद तैयार किया जाता है, के ही समान होता है।
18. **परिशिष्ट (Appendix)** : शोध प्रस्ताव में परिशिष्ट का होना आवश्यक है। इसमें उन सभी सामग्रियों की सूची होती है जिसे शोध में उपयोग किया जाता है। इसमें उपयोग में लाये जाने वाले परीक्षण तथा मापनी का एक-एक कॉपी, उद्दीपन सामग्रियों, तथा अन्य शोध उपकरणों की सूची तथा मानक निर्देश की सूची आदि को संलग्नित किया जाता है।

अतः यह स्पष्ट है कि एक उत्तम शोध प्रस्ताव के कई चरण होते हैं। इन चरणों को मद्देनजर रखकर यदि शोधकर्ता शोध प्रस्ताव तैयार करता है तो निश्चित रूप से वह अपने शोध उद्देश्यों को पूरा कर लेगा।

5.16 प्रदत्तों के संग्रह व विश्लेषण से जुड़े प्रमुख सम्प्रत्यय (THE MAIN CONCEPTS RELATED TO Data Collection & Analysis) :

समष्टि (Population) - किसी समूह के उन सभी इकाईयों का समुच्चय जिसके सम्बन्ध में शोधकर्ता कुछ निष्कर्ष ज्ञात करना चाहता है समष्टि कहलाती है। समष्टि संख्या को 'P' से व्यक्त करते हैं।

प्रतिदर्श (Sample) - समष्टि के गुणों का वास्तविक प्रतिनिधित्व करने वाली इकाईयों का समुच्चय जिसे समष्टि के अध्ययन के लिये चुना जाता है प्रतिदर्श कहलाती है। प्रतिदर्श को 'N' से व्यक्त करते हैं।

प्रतिदर्श इकाई (Sample Unit)- प्रतिदर्श के रूप में चुनी गयी प्रत्येक इकाई प्रतिदर्श इकाई है।

प्रतिचयन (Sampling) - प्रतिचयन वह निश्चित तरीका है जिसके माध्यम से समष्टि से प्रतिदर्श का चयन किया जाता है।

प्रतिचयन इकाईयों (Sampling Units) - समष्टि के उपलब्ध व चुने जाने योग्य समस्त इकाईयों को प्रतिचयन इकाईयाँ कहते हैं।

प्रतिचयन ढाँचा (Sampling Frame)- समष्टि के सभी प्रतिचयन इकाईयों के समूह को प्रतिचयन ढाँचा कहते हैं जिसमें से प्रतिदर्श चुने जाते हैं।

प्राचल (Parameters) - समष्टि के लिए विद्यमान वर्णनात्मक मापों को प्राचल कहते हैं। जैसे उत्तराखण्ड के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों के शैक्षिक उपलब्धि पर यदि कोई शोधकार्य हो तो उत्तराखण्ड के समस्त उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समस्त छात्रों के शैक्षिक उपलब्धियों के मध्यमान, मानक विचलन आदि को प्राचल कहा जाएगा। प्राचल मानों के रूप में मध्यमान को μ या M_{Pop} मानक विचलन को σ तथा सहसम्बन्ध को r_{Pop} या ρ से व्यक्त करते हैं।

प्रतिदर्शज (Statistics) - प्रतिदर्श के लिए ज्ञात की जाने वाली वर्णनात्मक मापों को प्रतिदर्शज कहते हैं। जैसे ऊपर के उदाहरण में यदि समष्टि से 300 प्रतिनिधि प्रतिदर्श चुने जाएं तब प्रतिदर्श के रूप में 300 छात्रों के शैक्षिक उपलब्धियों के मध्यमान, मानक विचलन आदि को प्रतिदर्शज कहा जाएगा। प्रतिदर्शज मानों के रूप में मध्यमान को M मानक विचलन को s , प्रसरण को s^2 तथा सहसंबन्ध को r से व्यक्त करते हैं।

सांख्यिकीय अनुमान (Statistical Inferences) - सांख्यिकीय विधियों के प्रयोग द्वारा प्रतिदर्शजों के आधार पर प्राचलों के लिए लगाया गया अनुमान या सामान्यीकरण सांख्यिकीय अनुमान है।

अनुमानात्मक सांख्यिकीय विधियाँ (Inferential Statistical Methods) - वैसी सांख्यिकीय विधियाँ जिसका प्रयोग प्रतिदर्शजों के आधार पर प्राचलों के संबंध में अनुमान या सामान्यीकरण व तत्संबंधी परिकल्पनाओं के परीक्षण के लिए किया जाता है। अनुमानात्मक सांख्यिकीय विधियाँ कहलाती हैं।

प्रतिचयन त्रुटि (Sampling Error) - प्रतिदर्श के प्रतिदर्शज मान (statistics) तथा समष्टि के प्राचल मान (parameter) के मध्य अन्तर को प्रतिचयन त्रुटि (sampling error) कहा जाता है। जैसे ऊपर दिये उदाहरण में प्रतिदर्श के रूप 300 छात्रों के शैक्षिक उपलब्धियों के मध्यमान (M) तथा उत्तराखण्ड के समस्त उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समस्त छात्रों के शैक्षिक उपलब्धियों के मध्यमान (M_{pop}) के मध्य अन्तर को प्रतिचयन त्रुटि कहा जाता है। अर्थात् उपरोक्त उदाहरण में मध्यमान के लिए प्रतिचयन त्रुटि = $\bar{M} - M$

अनुक्रिया दर (Response Rate) - प्रतिदर्श के रूप में चुने गये इकाईयों का वह प्रतिशत जो वास्तव में शोधकार्य में भाग ले पाता है अनुक्रिया दर कहलाता है (जान्सन व क्रिस्टेन्शन 2008, पृ0 224)। जैसे आपने किसी समष्टि से 200 प्रतिदर्श इकाईयों को चुना लेकिन शोधकार्य में केवल 180 प्रतिदर्श इकाईयों ने ही भाग लिया तब अनुक्रिया दर निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाएगा -

अनुक्रिया दर = शोध कार्य में वास्तविक रूप से भाग लेने वाले प्रतिदर्श इकाईयों की संख्या / कुल प्रतिदर्श इकाई

अतः उपरोक्त उदाहरण में अनुक्रिया दर = $180/200 \times 100 = 90$ प्रतिशत।

5.19 सारांश

शोध कार्य एक लम्बी तथा जटिल प्रक्रिया है, जिसके लिए एक खास क्रम तथा कुछ निश्चित अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता है जैसे- शोध समस्या का चयन, शोध उद्देश्य का निर्धारण, शोध परिकल्पना का निर्माण (making research hypothesis), चरों का वर्गीकरण (classification of variables), उचित डिजाइन का चुनाव (selection of appropriate design), विधियाँ (methods), परिणाम का विश्लेषण, (analysis of result), निष्कर्ष निकालना (calculating the findings) आदि। प्रस्तुत इकाई में आपने देखा कि शोध कार्य का प्रारंभ ही एक उपयुक्त समस्या के चयन से होता है।

समाधान के लिए प्रस्तावित प्रश्न को ही समस्या कहते हैं। शोधकर्ता को समस्या के संबंध में अपेक्षित जानकारी होनी चाहिए कि समस्या क्या है, एक अच्छे एवं वैज्ञानिक शोध समस्या में क्या

विशेषताएँ होनी चाहिए कि इसका स्वरूप वैज्ञानिक हो, जिससे इसका संतोषप्रद हल निकाला जा सके। साथ ही साथ जिस शोध समस्या पर हम शोध करने जा रहे हैं उसकी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, एवं व्यावहारिक उपयोगिता भी होनी चाहिए। इन सभी पक्षों को आपने इस इकाई में अध्ययन किया।

5.20 शब्दावली

शोध समस्या: शोध समस्या एक ऐसी समस्या होती है जिसके द्वारा दो या दो से अधिक चरों (Variables) के बीच एक प्रश्नवाचक संबंध (Interrogative Relationship) की अभिव्यक्ति होती है।

परिकल्पना: शोध समस्या का एक अस्थायी समाधान (tentative solution) जो जाँचनीय प्रभाव के रूप में करता है। इस जाँचनीय प्रस्ताव को तकनीकी भाषा में परिकल्पना कहते हैं। परिकल्पना में दो या दो से अधिक चरों (Variables) के बीच के संबंधों का उल्लेख किया जाता है।

सार्वभौमिक परिकल्पना (Universal Hypothesis)- ऐसी परिकल्पना जो निहित चरों के मध्य पाये जाने संबंध को हर परिस्थिति व हर समय में बनाये रखता है।

5.21 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर

1. प्रश्नवाचक
2. समाधान
3. प्रथम
4. समस्या
5. समस्या
6. जटिल
7. द्वि-पुच्छीय
8. शून्य
9. सार्वत्रिक
10. पूर्वकल्पना

5.22 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. गुप्ता, एस0पी0 एवं गुप्ता, ए0 (2005), सांख्यिकीय विधियाँ: व्यवहारपरक विज्ञानों में, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन।
2. जॉनसन, बी0 क्रिस्टेन्सन एल0 (2008), एजुकेशनल रिसर्च: क्वांटिटेटिव, क्वालिटेटीव एण्ड मिक्सड एप्रोचेच, लॉस एंजिल्स: सेज पब्लिकेशन्स।
3. पैट्टन, एम0क्यू0 (2002), क्वालिटेटीव रिसर्च एण्ड इवैलुएशन मैथड्स, कैलिफोर्निया: सेज पब्लिकेशन्स।
4. बेल्ले, जी0बी0एण्ड मिलार्ड, एस0पी0 (1998), स्ट्रूट्स: स्टैटिस्टिकल रूल्स ऑफ थम्ब फ्रॉम,

5. मर्टेन्स, डी0एम0 (1998), रिसर्च मेथड्स एजुकेशन एण्ड साइकॉलॉजी, कैलिफोर्निया: सेज पब्लिकेशन्स।
6. अग्रवाल, वाय0पी0 (1998). बेटर सैंपलिंग. नई दिल्ली: स्टर्लिंग पब्लिशर प्राईवेट लि0।
7. कर्लीगर, एफ0एम0 (2007). फाउन्डेसन्स ऑफ विहेवियरल रिसर्च, दिल्ली: सुरजीत पब्लिकेशन्स

5.23 निबंधात्मक प्रश्न

1. शोध समस्या के चुनाव के शर्तों को स्पष्ट कीजिए।
2. शोध उद्देश्य का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कीजिए।
3. शोध परिकल्पना को परिभाषित कर इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. शोध परिकल्पना के कार्यों का वर्णन कीजिए।
5. शोध परिकल्पना के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कीजिए।

इकाई संख्या: 06 अनुसंधान के उपकरण: टेस्ट, प्रश्नावली, चेकलिस्ट और रेटिंग स्केल (Tools of Research: Test, Questionnaire, checklist and Rating Scale)

इकाई की रूपरेखा

- 6.1 प्रस्तावना
- 6.2 उद्देश्य
- 6.3 शोध उपकरणों के निर्माण के सामान्य सिद्धांत
- 6.4 परीक्षण की योजना
- 6.5 एकांश लेखन
- 6.6 परीक्षण का प्रारम्भिक क्रियान्वयन या प्रयोगात्मक क्रियान्वयन
- 6.7 परीक्षण की विश्वसनीयता
 - 6.7.1 विश्वसनीयता (Reliability) का अर्थ
 - 6.7.2 विश्वसनीयता की विशेषताएं:
 - 6.7.3 विश्वसनीयता ज्ञात करने की विधियाँ
 - 6.7.4 विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारक
 - 6.7.5 मापन की मानक त्रुटि तथा परीक्षण की विश्वसनीयता
- 6.8 परीक्षण की वैधता का अर्थ
 - 6.8.1 वैधता की विशेषताएं
 - 6.8.2 वैधता के प्रकार
 - 6.8.3 वैधता ज्ञात करने की विधियाँ
 - 6.8.4 वैधता को प्रभावित करने वाले कारक
 - 6.8.5 विश्वसनीयता तथा वैधता में संबंध
- 6.9 परीक्षण का मानक
- 6.10 मैनुअल तैयार करना तथा परीक्षण का पुनरूत्पादन करना
- 6.11 सारांश
- 6.12 शब्दावली
- 6.13 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर

6.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री

6.15 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना:

शोध आंकड़ों के संकलन के लिये बहुत सारे शोध उपकरणों को प्रयोग में लाया जाता है। अधिकांश शैक्षिक अनुसंधानों में आंकड़ों के संकलन या तो प्रमाणित परीक्षणों के द्वारा या स्वयं निर्मित अनुसंधान-उपकरणों के द्वारा किया जाता है। इससे वस्तुनिष्ठ आंकड़े प्राप्त होते हैं जिसके द्वारा सही शोध निष्कर्ष तक पहुंचा जा सकता है। प्रदत्तों का संकलन, प्रश्नावली, निरीक्षण, साक्षात्कार, परीक्षण, तथा अनेक अन्य प्रविधियों द्वारा किया जाता है। इन शोध उपकरणों के निर्माण हेतु वैज्ञानिक सोपानों का अनुसरण किया जाता है ताकि इनके द्वारा प्राप्त आंकड़े की विश्वसनीयता व वैधता बनी रहे। प्रस्तुत इकाई में आप इन शोध उपकरणों के निर्माण के सामान्य सिद्धांत व शोध आंकड़ों की विश्वसनीयता व वैधता तथा इनसे सम्बंधित अन्य मुद्दे का बृहत् रूप से अध्ययन करेंगे।

6.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययनोपरांत आप-

- शोध उपकरणों के निर्माण के सामान्य सिद्धांतों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शोध उपकरणों के निर्माण के प्रमुख पदों को नामांकित कर सकेंगे।
- शोध उपकरणों के निर्माण के प्रमुख पदों का वर्णन कर सकेंगे।
- विश्वसनीयता की प्रकृति को बता पायेंगे।
- वैधता के संप्रत्यय की व्याख्या कर सकेंगे।
- विश्वसनीयता व वैधता के मध्य संबंधों की व्याख्या कर सकेंगे।
- विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारक की व्याख्या कर सकेंगे।
- वैधता को प्रभावित करने वाले कारक की व्याख्या कर सकेंगे।
- विश्वसनीयता के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे।
- वैधता के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे।

6.3 शोध उपकरणों के निर्माण के सामान्य सिद्धांत (General Principles of the Construction of Research Tools) :

व्यावहारिक विज्ञान के विषयों जैसे मनोविज्ञान (Psychology), समाजशास्त्र, व शिक्षा (education) के शोध के निष्कर्ष की विश्वसनीयता व वैधता शोध उपकरणों यथा प्रश्नावली, निरीक्षण, साक्षात्कार, परीक्षण, तथा अनेक अन्य प्रविधियों पर निर्भर करता है। शोध उपकरणों के अभाव में व्यावहारिक विज्ञान से संबंधित विषयों में अर्थपूर्ण [ज्ञ] से शोध नहीं किया जा सकता है। अतः यह आवश्यक है कि आप उन सभी प्रमुख चरणों (Steps) से अवगत हों जिनके माध्यम से एक शैक्षिक शोध उपकरण का निर्माण किया जाता है। यहाँ सुविधा के लिए शैक्षिक शोध उपकरण के रूप में परीक्षण (test) निर्माण के प्रमुख चरणों (Steps) को स्पष्ट किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य शैक्षिक शोध उपकरणों के निर्माण में भी यही सामान्य सिद्धांत को ध्यान में रखा जाता है। शैक्षिक शोध उपकरण के रूप में परीक्षण (test) निर्माण के प्रमुख चरणों (Steps) को निम्नांकित सात भागों में बाँटा गया है-

1. परीक्षण की योजना (Planning of the test)
2. एकांश – लेखन (Item writing)
3. परीक्षण की प्रारम्भिक क्रियान्वयन या प्रयोगात्मक क्रियान्वयन (Preliminary tryout or Experimental tryout of the test)
4. परीक्षण की विश्वसनीयता (Reliability of the test)
5. परीक्षण की वैधता (Validity of the test)
6. परीक्षण का मानक (Norms of the test)
7. परीक्षण का मैन्युअल तैयार करना एवं पुनरुत्पादन करना (Preparation of manual and reproduction of test)

शैक्षिक शोध उपकरण के रूप में परीक्षण (test) निर्माण के प्रमुख चरणों (Steps) की व्याख्या निम्नांकित है-

6.4 परीक्षण की योजना (Planning of the test) :

किसी भी मनोविज्ञानिक या शैक्षिक परीक्षण के निर्माण (Construction) में सबसे पहला कदम एक योजना (Planning) बनाना होता है। इस चरण में परीक्षणकर्ता (Test constructor) कई बातों का ध्यान रखता है। जैसे, वह यह निश्चित करता है कि परीक्षण का उद्देश्य (Objectives) क्या है, इसमें एकांशों (Items) की संख्या कितनी होनी चाहिए, एकांश (item) का स्वरूप (nature) अर्थात् उसे वस्तुनिष्ठ (objective) या आत्मनिष्ठ (subjective) होना चाहिए, किस प्रकार का निर्देश (instruction) दिया जाना चाहिए, प्रतिदर्श (sampling) की विधि क्या होनी चाहिए, परीक्षण की समय सीमा (time limit) कितनी होनी चाहिए, सांख्यिकीय विश्लेषण (Statistical analysis) कैसे की जानी चाहिए, आदि-आदि। इस चरण में परीक्षण निर्माता (test constructor) इस बात का निर्णय करता है कि परीक्षण निर्माण हो जाने के बाद वह कितनी संख्या में उस परीक्षण का निर्माण करेगा।

6.5 एकांश लेखन (Item writing) :

परीक्षण की योजना तैयार कर लेने के बाद परीक्षण निर्माता (test constructor) एकांशों (items) को लिखना प्रारंभ कर देता है। बीन (Bean, 1953) के शब्दों में, एकांश एक ऐसा प्रश्न या पद होता है जिसे छोटी इकाईयों में नहीं बाँटा जा सकता है।

एकांश-लेखन (item writing) एक कला (art) है। ऐसे तो उत्तम एकांश लिखने के लिए कोई निश्चित नियम नहीं है, फिर भी एकांश-लेखन बहुत हद तक परीक्षण निर्माणकर्ता के कल्पना, अनुभव, सूझ, अभ्यास आदि कारकों पर निर्भर करता है। इसके बावजूद भी शोधकर्ताओं ने कुछ ऐसे अपेक्षित गुणों (requisites) की चर्चा की है जिससे शोधकर्ता को उपयुक्त एकांश (appropriate items) लिखने में मदद मिलती है। ऐसे कुछ अपेक्षित गुणों (requisites) निम्नवत हैं –

- i. एकांश-लेखक (item writer) को विषय-वस्तु (Subject-Matter) का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, जिस क्षेत्र में परीक्षण का निर्माण किया जा रहा है। उसे उस क्षेत्र के सभी तथ्यों (facts) नियमों, भ्रान्तियों (fallacies) का पूर्णज्ञान होना चाहिए।

- ii. एकांश-लेखक (item writer) को उन व्यक्तियों के व्यक्तित्व से पूर्णतः वाकिफ होना चाहिए, जिनके लिए परीक्षण का निर्माण किया जा रहा है। इन व्यक्तियों की क्षमताओं, रूझानों आदि से अवगत रहने पर एकांश लेखक (item writer) के लिए उनके मानसिक स्तर के अनुरूप एकांश लिखना संभव हो पाता है।
- iii. एकांश लेखक (item writer) को एकांश (items) के विभिन्न प्रकारों (types) जैसे आत्मनिष्ठ प्रकार (subjective type) वस्तुनिष्ठ प्रकार (objective type) तथा फिर वस्तुनिष्ठ प्रकार के कई उप प्रकार (subtype) जैसे द्विवैकल्पिक एकांश (two alternative item) तथा बहुविकल्पी एकांश (Multiple choice item) जैसे मिलान एकांश (matching) आदि के लाभ एवं हानियों से पूर्णतः अवगत होना चाहिए।
- iv. एकांश-लेखक (item writer) का शब्दकोष (Vocabulary) बड़ा होना चाहिए। वह एक ही शब्द के कई अर्थ से अवगत हो ताकि एकांश लेखन (item writing) में किसी प्रकार की कोई सम्भ्रान्ति (Confusion) नहीं हो।
- v. एकांश-लेखन कर लेने के बाद एकांशों (items) को विशेषज्ञों (experts) के एक समूह को सुपुर्द कर देना चाहिए। उनके द्वारा की गई आलोचनाओं (criticism) एवं दिए गये सुझावों (suggestions) के आलोक में एकांश के स्वरूप में या संरचना (structure) में यथासंभव परिवर्तन कर लेना चाहिए।
- vi. एकांश-लेखक में कल्पना करने की शक्ति (Imaginative power) की प्रचुरता होनी चाहिए।

6.6 परीक्षण का प्रारम्भिक क्रियान्वयन या प्रयोगात्मक क्रियान्वयन (Preliminary tryout of Experimental tryout of the test) :

शैक्षिक शोध परीक्षण के निर्माण में तीसरा महत्वपूर्ण कदम परीक्षण के प्रारंभिक क्रियान्वयन (Preliminary tryout) का होता है जिसे प्रयोगात्मक क्रियान्वयन (experimental tryout) भी कहा जाता है। जब परीक्षण के एकांशों (items) की विशेषज्ञों (experts) द्वारा आलोचनात्मक परख कर ली जाती है तो इसके बाद उसका कुछ व्यक्तियों पर क्रियान्वयन

(administer) किया जाता है। ऐसे क्रियान्वयन को प्रयोगात्मक क्रियान्वयन कहा जाता है। ऐसे प्रयोगात्मक क्रियान्वयन की सफलता के लिए यह अनिवार्य है कि चुने गये व्यक्तियों का प्रतिदर्श (sample) का स्वरूप (nature) ठीक वैसा ही हो जिसके लिए परीक्षण बनाया जा रहा हो। कोनरेड (Conrad, 1951) के अनुसार प्रारम्भिक क्रियान्वयन (Preliminary tryout) कुछ खास-खास उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है। इन उद्देश्यों में निम्नांकित प्रधान हैं-

- i. एकांशों में यदि कोई अस्पष्टता, अपर्याप्तता (inadequacies) अर्थहीनता आदि रह गई हो तो इसका आसानी से पता प्रारम्भिक क्रियान्वयन (Preliminary tryout) से कर लिया जाता है।
- ii. इससे प्रत्येक एकांश की कठिनता स्तर (Difficulty value) का पता चल जाता है, प्रत्येक एकांश पर जितने व्यक्तियों द्वारा सही उत्तर दिया जाता है, उसका अनुपात (proportion) ही एकांश की कठिनता स्तर (difficulty level) होता है।
- iii. इससे प्रत्येक एकांश (item) की वैधता (validity) का पता भी लग जाता है। एकांश की वैधता से तात्पर्य उत्तम व्यक्तियों (superior individual) तथा निम्न व्यक्तियों (inferior individual) में विभेद करने की क्षमता से होता है। यही कारण है कि इसे एकांश (item) का विभेदी सूचकांक (discriminatory index) भी कहा जाता है।
- iv. इससे परीक्षण की समय सीमा निर्धारित करने में मदद मिलती है।
- v. परीक्षण को उपयुक्त लम्बाई (Length) नियत करने में मदद मिलती है।
- vi. प्रारम्भिक क्रियान्वयन (Preliminary tryout) के आधार पर एकांशों (items) के बीच अन्तरसहसंबंध (inter correlation) ज्ञात करने में भी मदद मिलती है।
- vii. परीक्षण को साथ दिये जाने वाले मानक निर्देश (Standard instruction) की अस्पष्टता, अर्थहीनता, यदि कोई हो आदि की जाँच में भी इससे मदद मिलती है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1.से तात्पर्य उत्तम व्यक्तियों (superior individual) तथा निम्न व्यक्तियों (inferior individual) में विभेद करने की क्षमता से होता है।
2. एकांश की वैधता को एकांश (item) काभी कहा जाता है।
3. से यह पता चल जाता है कि एकांश व्यक्ति के लिए कठिन है या हल्का है।
4.से यह पता चल जाता है कि कहीं तक एकांश उत्तम व्यक्तियों और निम्न व्यक्तियों में अन्तर कर रहा है।
5.एक ऐसा प्रश्न या पद होता है जिसे छोटी इकाईयों में नहीं बँटा जा सकता है।

6.7 परीक्षण की विश्वसनीयता (Reliability of the test) :

शैक्षिक परीक्षण निर्माण करने में यह चौथा महत्वपूर्ण चरण है जहाँ परीक्षण की विश्वसनीयता (reliability) ज्ञात किया जाता है। विश्वसनीयता से तात्पर्य परीक्षण प्राप्तांक (test scores) की संगति (consistency) से होता है। इस संगति में कालिक संगति (temporal constancy) तथा आंतरिक संगति (internal consistency) दोनों ही शामिल होते हैं।

6.7.1 विश्वसनीयता (Reliability) का अर्थ :

परीक्षण की विश्वसनीयता का संबंध उससे मिलने वाले प्राप्तांकों में स्थायित्व से है। परीक्षण की 'विश्वसनीयता' का संबंध 'मापन की चर त्रुटियों' से है। परीक्षण की यह विशेषता बताती है कि परीक्षण किस सीमा तक चर त्रुटियों से मुक्त है। विश्वसनीयता का शाब्दिक अर्थ विश्वास करने की सीमा से है। अतः विश्वसनीयता परीक्षण वह परीक्षण है जिस पर विश्वास किया जा सके। यदि किसी परीक्षण का प्रयोग बार-बार उन्हीं छात्रों पर किया जाये तथा वे छात्र बार-बार समान अंक प्राप्त करें, तो परीक्षण को विश्वसनीय कहा जाता है। यदि परीक्षण से प्राप्त अंकों में स्थायित्व है तो परीक्षण को विश्वसनीय परीक्षण के रूप में स्वीकार किया जाता है।

अनास्तेसी के अनुसार, 'परीक्षण की विश्वसनीयता से अभिप्राय भिन्न-भिन्न अवसरों पर या समतुल्य पदों के भिन्न-भिन्न विन्यासों पर, किसी व्यक्ति के द्वारा प्राप्त अंकों की संगति से है।'

गिलफर्ड के अनुसार, 'विश्वसनीयता परीक्षण प्राप्तांकों में सत्य प्रसरण का अनुपात है।'

मार्शल एवं हेल्स के अनुसार, 'परीक्षण प्राप्तांकों के बीच संगति की मात्रा को ही विश्वसनीयता कहा जाता है।'

6.7.2 विश्वसनीयता की विशेषताएं:

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर परीक्षण की विश्वसनीयता की विशेषताएं निम्नवत हैं -

- i. विश्वसनीयता किसी भी परीक्षण प्राप्तांक का एक प्रमुख गुण होता है।
- ii. विश्वसनीयता से तात्पर्य प्राप्तांकों की परिशुद्धता से है।
- iii. विश्वसनीयता से तात्पर्य प्राप्तांक की संगति से होता है जो उनके पुनरुत्पादकता के रूप में दिखलाई देता है।
- iv. परीक्षण प्राप्तांक की विश्वसनीयता का अर्थ आंतरिक संगति (Internal consistency) से होता है।
- v. विश्वसनीयता परीक्षण का आत्म सह-संबंध होता है।
- vi. विश्वसनीयता का संबंध मापन की चर त्रुटियों से होता है।
- vii. विश्वसनीयता गुणांक को सत्य प्रसरण व कुल प्रसरण का अनुपात माना जाता है।
- viii. विश्वसनीयता को स्थिरता गुणांक (Coefficients of stability), समतुल्यता गुणांक (Coefficient of equivalence) तथा सजातीयता गुणांक (coefficient of Homogeneity) के रूप में भी परिभाषित किया जाता है।

6.7.3 विश्वसनीयता ज्ञात करने की विधियाँ (Methods of Estimating Reliability):

विश्वसनीयता प्राप्त करने की पाँच मुख्य विधियाँ हैं -

1. परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता विधि (Test-retest reliability)

2. समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता (Equivalence forms Reliability)
3. अर्द्धविच्छेद विश्वसनीयता (Split-Halves Reliability)
4. तार्किक समतुल्यता विश्वसनीयता (Rational-Equivalence Reliability)
5. होयट विश्वसनीयता (Hoyt Reliability)

1. **परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता विधि (Test-retest reliability):** इस विधि में परीक्षण को दो बार छात्रों के किसी समूह पर प्रशासित किया जाता है, जिससे प्रत्येक छात्र के लिए दो प्राप्तांक प्राप्त हो जाते हैं। परीक्षण के प्रथम प्रशासन तथा परीक्षण के द्वितीय प्रशासन से प्राप्त अंकों के बीच सहसंबंध गुणांक की गणना कर ली जाती है। यह सहसंबंध गुणांक (r) ही परीक्षण के लिए परीक्षण-पुनःपरीक्षण विश्वसनीयता गुणांक कहलाता है। इस प्रकार से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांक को स्थिरता गुणांक (coefficient of stability) भी कहा जाता है।
2. **समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता (Equivalence forms Reliability):** यदि किसी परीक्षण की दो से अधिक समतुल्य प्रतियों इस ढंग से तैयार की जाती है कि उन पर प्राप्त अंक एक दूसरे के समतुल्य हों, तब समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता की गणना की जाती है। समतुल्य विश्वसनीयता गुणांक ज्ञात करने के लिए प्रत्येक छात्र को परीक्षण की दो समतुल्य प्रतियों, एक के बाद दी जाती है तथा प्रत्येक छात्र के लिए दो प्राप्तांक प्राप्त कर लिए जाते हैं। इन दो समतुल्य प्रारूपों पर छात्रों के द्वारा प्राप्त अंकों के बीच सहसंबंध गुणांक (r) ही समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता कहलाता है। इस विधि से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांक को समतुल्यता गुणांक (Coefficient of Equivalence) भी कहते हैं।
3. **अर्द्धविच्छेद विश्वसनीयता (Split Halves Reliability) :** किसी भी परीक्षण को दो समतुल्य भागों में विभक्त करके विश्वसनीयता गुणांक ज्ञात किया जाता है। परीक्षण के दोनों भागों के लिए प्रत्येक छात्र के लिए दो अलग-अलग प्राप्तांक प्राप्त किये जाते हैं। जिनके मध्य सहसंबंध गुणांक (r) की गणना की जाती है। पूर्ण परीक्षण की विश्वसनीयता की गणना के लिए स्पीयरमैन – ब्रॉउन प्रोफेसी सूत्र का प्रयोग करते हैं, जो इस प्रकार है = $\frac{2r}{1+r}$

4. **तार्किक समतुल्यता विश्वसनीयता (Rational-Equivalence Reliability):** यह विधि परीक्षण की सजातीयता का मापन करती है इसलिए कूडर रिचार्डसन विधि से विश्वसनीयता गुणांक को सजातीयता गुणांक या आन्तरिक संगति गुणांक भी कहा जाता है। कूडर रिचार्डसन ने इस विधि के प्रयोग के लिए अनेक सूत्रों का प्रतिपादन किया, जिनमें से दो सूत्र **के०आर० 20** तथा **के०आर० 21** अधिक प्रचलित हैं।
5. **होय्ट विश्वसनीयता (Hoyt Reliability):** होय्ट ने प्रसरण (Variance) को विश्वसनीयता गुणांक निकालने का आधार माना है। होय्ट के अनुसार कुल प्रसरण को तीन भागों में बाँटा जा सकता है। ये तीन भाग-सत्य प्रसरण (total variance), पद प्रसरण (item Variance) तथा त्रुटि प्रसरण (error variance) हैं। सत्य प्रसरण छात्रों या व्यक्तियों के वास्तविक अंकों का प्रसरण है। पद प्रसरण पदों या प्रश्नों पर प्राप्तांकों के लिए प्रसरण है। त्रुटि प्रसरण चर त्रुटि के अंकों का प्रसरण है। प्रसरण विश्लेषण सांख्यिकीय तकनीक का प्रयोग कर होय्ट विश्वसनीयता को ज्ञात की जा सकती है। यह विधि विश्वसनीयता गुणांक निकालने की एक जटिल विधि है।

6.7.4 विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting the Reliability):

परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक परीक्षण से संबंधित अन्य अनेक विशेषताओं से संबंधित रहता है। विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारक निम्नवत हैं-

- i. परीक्षण की लंबाई तथा परीक्षण की विश्वसनीयता के बीच धनात्मक सह-संबंध पाया जाता है। परीक्षण जितना अधिक लंबा होता है, उसका विश्वसनीयता गुणांक उतना ही अधिक होता है।
- ii. जिस परीक्षण में सजातीय प्रश्नों की संख्या अधिक होती है, तो उसकी विश्वसनीयता अधिक होती है जबकि अधिक विजातीय प्रश्न वाले परीक्षण की विश्वसनीयता कम होती है।
- iii. परीक्षण में अधिक विभेदक क्षमता (Discriminative Power) वाले प्रश्नों के होने से उसकी विश्वसनीयता अधिक होती है।

- iv. औसत कठिनाई स्तर वाले प्रश्नों से युक्त परीक्षण की विश्वसनीयता अधिक होती है जबकि अत्यधिक सरल अथवा अत्यधिक कठिन प्रश्नों वाले परीक्षण की विश्वसनीयता कम होती है।
- v. योग्यता के अधिक प्रसार वाले समूह से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांक अधिक होता है जबकि योग्यता में लगभग समान छात्रों के समूह से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांक कम होता है।
- vi. गति परीक्षण (Speed Test) की विश्वसनीयता अधिक होती है, जबकि शक्ति परीक्षण (Power Test) की विश्वसनीयता कम होती है।
- vii. वस्तुनिष्ठ परीक्षण, विषयनिष्ठ परीक्षण की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय होते हैं।
- viii. समतुल्य परीक्षण विधि से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांक, परीक्षण-पुनःपरीक्षण विधि से प्राप्त गुणांक से कम आता है तथा इसे प्रायः वास्तविक विश्वसनीयता की निम्न सीमा माना जाता है। इसके विपरीत अर्द्धविच्छेद विधि से विश्वसनीयता का मान अधिक आता है तथा इसे विश्वसनीयता की उच्च सीमा माना जाता है।

6.7.6 मापन की मानक त्रुटि तथा परीक्षण की विश्वसनीयता (Standard Error of Measurement and Test Reliability) :

त्रुटि प्राप्तांकों के मानक विचलन को मापक की मानक त्रुटि कहते हैं तथा इसे σ_e से व्यक्त करते हैं। मापन की मानक त्रुटि (σ_e) तथा विश्वसनीयता गुणांक (r) में घनिष्ठ संबंध होता है। इन दोनों के संबंध को निम्न समीकरण से प्रकट किया जा सकता है –

$\sigma_e = \sigma \sqrt{1-r}$ जहाँ σ प्राप्तांकों का मानक विचलन है। मापन की मानक त्रुटि प्राप्तांकों की यथार्थता को बताता है।

विश्वसनीयता सूचकांक (Index of Reliability) : परीक्षण पर प्राप्त कुल अंकों (X) तथा सत्य प्राप्तांकों (T) के बीच सहसंबंध गुणांक को विश्वसनीयता सूचकांक कहते हैं। उसका मान विश्वसनीयता गुणांक के वर्गमूल के बराबर होता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि विश्वसनीयता

गुणांक का वर्गमूल ही विश्वसनीयता सूचकांक है या दूसरे शब्दों में विश्वसनीयता सूचकांक का वर्ग ही विश्वसनीयता गुणांक है।

$$r_{xt} = \sqrt{r} \quad r_{xt} = \text{विश्वसनीयता सूचकांक}$$

$$r = \text{विश्वसनीयता गुणांक}$$

विश्वसनीयता सूचकांक यह बताता है कि प्राप्तांकों तथा सत्य प्राप्तांकों के बीच क्या संबंध है। उदाहरण के लिए यदि विश्वसनीयता गुणांक का मान .81 है तो सूचकांक का मान .90 होगा जो प्राप्तांकों तथा सत्य प्राप्तांकों के सहसंबंध का द्योतक है। विश्वसनीयता सूचकांक का दूसरा कार्य परीक्षण की वैधता की सीमा को बताना है। वैधता का मान विश्वसनीयता गुणांक के वर्गमूल के बराबर या इससे कम ही हो सकता है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

6. यदि विश्वसनीयता गुणांक का मान .36 है तो विश्वसनीयता सूचकांक का मान होगा।
7. का मान विश्वसनीयता गुणांक के वर्गमूल के बराबर होता है।
8.की विश्वसनीयता अधिक होती है, जबकि शक्ति परीक्षण (Power Test) की विश्वसनीयता कम होती है।
9. परीक्षण में अधिक विभेदक क्षमता (Discriminative Power) वाले प्रश्नों के होने से उसकी विश्वसनीयताहोती है।
10. योग्यता के अधिक प्रसार वाले समूह से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांकहोता है।

6.8 परीक्षण की वैधता (Validity of the test) का अर्थ:

किसी भी शैक्षिक परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात कर लेने के बाद उसकी वैधता (Validity) ज्ञात की जाती है।

परीक्षण वैधता (Test Validity): किसी भी अच्छे परीक्षण को विश्वसनीय होने के साथ वैध होना आवश्यक है। वैधता का सीधा संबंध परीक्षण के उद्देश्यपूर्णता से है। जब परीक्षण अपने उद्देश्य

की पूर्ति करता है, तब ही उसे वैध परीक्षण कहते हैं तथा परीक्षण की इस विशेषता को वैधता कहते हैं। वास्तव में परीक्षण कुशलता (Test efficiency) का पहला प्रमुख अवयव विश्वसनीयता तथा दूसरा प्रमुख अवयव वैधता होती है। परीक्षण की वैधता से तात्पर्य परीक्षण की उस क्षमता से होता है जिसके सहारे वह उस गुण या कार्य को मापता है जिसे मापने के लिए उसे बनाया गया था। यदि कोई परीक्षण अभिक्षमता मापने के लिए बनाया गया है और वास्तव में उससे सही-सही अर्थों में व्यक्ति की अभिक्षमता की माप हो पाती है, तो इसे एक वैध परीक्षण माना जाना चाहिए। वैधता को बहुत सारे शोध व परीक्षण विशेषज्ञों ने अलग-अलग ढंग से परिभाषित किया है जो निम्नवत है –

गुलिकसन के अनुसार, 'वैधता किसी कसौटी के साथ परीक्षण का सहसंबंध है।'

क्रोनबैक के अनुसार, 'वैधता वह सीमा है, जिस सीमा तक परीक्षण वही मापता है, जिसके लिए इसका निर्माण किया गया है।'

एनास्टेसी एवं उर्विना के अनुसार, 'परीक्षण वैधता से तात्पर्य इस बात से होता है कि परीक्षण क्या मापता है, और कितनी बारीकी से मापता है।'

गे के अनुसार, 'वैधता की सबसे सरल परिभाषा यह है कि यह वह मात्रा है जहाँ तक परीक्षण उसे मापता है जिसे मापने की कल्पना की जाती है।'

फ्रीमैन के शब्दों में, 'वैधता सूचकांक उस मात्रा को व्यक्त करता है जिस मात्रा में परीक्षण उस लक्ष्य को मापता है, जिसके लिए इसे बनाया गया है।'

गैरेट के अनुसार, 'किसी परीक्षण या किसी मापन उपकरण की वैधता, उस यथार्थता पर निर्भर करती है जिससे वह उस तथ्य को मापता है, जिसके लिए इसे बनाया गया है।'

आर०एल० थार्नडाइक के अनुसार, 'कोई मापन विधि उतनी ही वैध है जितनी यह उस कार्य में सफलता के किसी मापन से संबंधित है जिसके पूर्वकथन के लिए यह प्रयुक्त हो रही है।'

6.8.1 वैधता की विशेषताएं:

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर वैधता की निम्नलिखित विशेषताएँ सुनिश्चित की जा सकती हैं-

- i. वैधता एक सापेक्ष पद होता है अर्थात् कोई भी परीक्षण हर कार्य या गुण के मापने के लिए वैध नहीं होता है।
- ii. वैधता से परीक्षण की सत्यता का पता चलता है।

- iii. वैधता का संबंध परीक्षण के उद्देश्य से होता है।
- iv. वैधता किसी भी परीक्षण का बाह्य कसौटी के साथ सहसंबंध को दर्शाता है।
- v. वैधता किसी भी प्रमाणिक परीक्षण की एक महत्वपूर्ण विशेषता होती है।

6.8.2 वैधता के प्रकार (Types of validity) :

विभिन्न शोध विशेषज्ञों व मापनविदों ने वैधता के भिन्न-भिन्न वर्गीकरण दिये हैं। कुछ प्रमुख वर्गीकरणों के आधार पर वैधता के मुख्य प्रकारों की चर्चा यहाँ की जा रही है-

- i. **विषयगत वैधता (Content Validity)** – जब परीक्षण की वैधता स्थापित करने के लिए परीक्षण परिस्थितियों तथा परीक्षण व्यवहार का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करके परीक्षण द्वारा मापी जा रही विशेषता/योग्यता के संबंध में प्रमाण एकत्रित किए जाते हैं तो इसे विषयगत वैधता कहते हैं। विषयगत वैधता कई प्रकार की हो सकती है – रूप वैधता (Face validity), तार्किक वैधता (Logical validity), प्रतिदर्शज वैधता (Sampling validity) तथा अवयवात्मक वैधता (factorial validity)। उपलब्धि परीक्षण की वैधता विषयगत वैधता के माध्यम से सुनिश्चित की जाती है।
- ii. **आनुभाविक वैधता (Empirical validity)** : जब परीक्षण व्यवहार (Test behaviour) तथा निकष व्यवहार (Criterion behaviour) के मध्य संबंध को ज्ञात करके परीक्षण द्वारा मापी जा रही विशेषता या योग्यता के संबंध में प्रमाण एकत्रित किए जाते हैं तो इसे आनुभाविक वैधता या निकष वैधता (Criterion Validity) कहते हैं। यदि परीक्षण प्राप्तांकों तथा निकष प्राप्तांकों में घनिष्ठ संबंध होता है तो परीक्षण को वैध परीक्षण स्वीकार किया जाता है। निकष दो प्रकार के – तात्कालिक निकष (Immediate criterion) तथा भावी निकष (Future criterion) हो सकते हैं। तात्कालिक निकष की स्थिति में परीक्षण के प्राप्तांक तथा निकष पर प्राप्तांक दोनों ही साथ-साथ प्राप्त कर लिए जाते हैं तथा इनके बीच सह-संबंध की गणना कर लेते हैं जिसे समवर्ती वैधता (concurrent

validity) कहते हैं। परीक्षण प्राप्तांकों तथा भावी निकष प्राप्तांकों के संबंध को पूर्वकथन वैधता (Predictive Validity) कहते हैं।

- iii. **अन्वय वैधता (Construct Validity)** – जब मानसिक शीलगुणों की उपस्थिति के आधार पर परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है तब इसे अन्वय वैधता कहते हैं।

6.8.3 वैधता ज्ञात करने की विधियाँ (Methods of Estimating validity) –

परीक्षण की वैधता ज्ञात करने के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न विधियों को दो मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है –

1. **तार्किक विधियाँ या आंतरिक कसौटी पर आधारित विधियाँ (Rational Method or based on Internal Criterion)** : इसके अन्तर्गत तर्कों के आधार पर परीक्षण की वैधता को सुनिश्चित किया जा सकता है। इस विधि से प्राप्त वैधता को रूप वैधता (Face Validity), विषयवस्तु वैधता (Content Validity), तार्किक वैधता (Logical Validity) या कारक वैधता (Factorial Validity) जैसे नामों से भी संबोधित किया जा सकता है। तार्किक विधियों से परीक्षण की वैधता का निर्णय परीक्षण निर्माता अथवा परीक्षण प्रयोगकर्ता स्वयं भी कर सकता है तथा विशेषज्ञों के द्वारा भी करा सकता है। विशेषज्ञों के द्वारा परीक्षण के विभिन्न पक्षों की रेटिंग कराई जा सकती है जिसके आधार पर परीक्षण की वैधता स्थापित की जा सकती है। परीक्षण के लिए इसे विशेषज्ञ वैधता (Expert Validity) भी कहते हैं।
2. **सांख्यिकीय विधियाँ (Statistical methods)** : किसी परीक्षण की वैधता ज्ञात करने के लिए सहसंबंध गुणांक, टी परीक्षण, कारक विश्लेषण, द्वीपंक्तिक सहसंबंध (Biserial), चतुष्कोष्ठिक सहसंबंध (Tetra choric correlation), बहु सहसंबंध (Multiple correlation) जैसी सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग भी किया जाता है। पूर्व कथित वैधता (Predictive validity), समवर्ती वैधता (Concurrent validity) तथा अन्वय वैधता (Construct validity) सांख्यिकीय

आधार पर ही स्थापित की जाती है। इन विधियों में किसी बाह्य कसौटी के आधार पर ही वैधता गुणांक स्थापित की जाती है। इसलिए इस प्रकार की वैधता को बाह्य कसौटी पर आधारित वैधता भी कहा जाता है।

6.8.4 वैधता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Validity) :

किसी परीक्षण की वैधता अनेक कारकों पर निर्भर करती है। इसको प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारक निम्नवत हैं –

- i. यदि परीक्षार्थियों को परीक्षण के संबंध में दिए गए निर्देश अस्पष्ट होते हैं तो परीक्षण वैधता कम हो जाती है।
- ii. परीक्षार्थियों की अभिव्यक्ति का माध्यम यदि उनकी मातृभाषा में है तो परीक्षण की वैधता अधिक हो जाती है।
- iii. प्रश्नों की सरल भाषा एवं आसान शब्दावली परीक्षण की वैधता को बढ़ा देती है।
- iv. अत्यधिक सरल या कठिन प्रश्नों वाले परीक्षण की वैधता प्रायः कम हो जाती है।
- v. प्रायः वस्तुनिष्ठ परीक्षण, निबंधात्मक परीक्षण की तुलना में अधिक वैध होते हैं।
- vi. प्रकरणों का अवांछित भार परीक्षण की वैधता को प्रायः कम कर देती है।
- vii. परीक्षण की लंबाई बढ़ने से उसकी वैधता बढ़ जाती है।

6.8.5 विश्वसनीयता तथा वैधता में संबंध (Relationship between Reliability and Validity) :

किसी परीक्षण की विश्वसनीय तथा वैधता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। परीक्षण के वैध होने के लिए उसका विश्वसनीय होना आवश्यक है। यदि किसी परीक्षण से प्राप्त अंक विश्वसनीय नहीं होते हैं तो उनके वैध होने का प्रश्न ही नहीं उठता है। परंतु इसके विपरीत विश्वसनीयता के लिए वैधता का होना कोई पूर्वशर्त नहीं है। अर्थात् विश्वसनीयता का होना वैधता के लिए तो आवश्यक शर्त है,

परन्तु पर्याप्त शर्त नहीं है। विश्वसनीय परीक्षण का वैध होना अपने आप में आवश्यक नहीं है, परन्तु वैध परीक्षण अवश्य ही विश्वसनीय होगा। सांख्यिकीय दृष्टिकोण से किसी भी परीक्षण की वैधता का अधिकतम संभाव्य मान उसकी विश्वसनीयता के वर्गमूल के बराबर ही हो सकता है। अर्थात् परीक्षण का वैधता गुणांक उसके विश्वसनीयता गुणांक के वर्गमूल से अधिक नहीं हो सकता है। विश्वसनीयता गुणांक शून्य होने पर वैधता गुणांक स्वतः शून्य हो जाएगी। अतः अविश्वसनीय परीक्षण किसी भी दशा में वैध नहीं हो सकता है, जबकि एक वैधता विहीन परीक्षण विश्वसनीय भी हो सकता है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

11. वैध परीक्षण अवश्य ही होगा।
12. सांख्यिकीय दृष्टिकोण से किसी भी परीक्षण की वैधता का अधिकतम संभाव्य मान उसकी विश्वसनीयता केके बराबर होता है।
13.वह सीमा है, जिस सीमा तक परीक्षण वही मापता है, जिसके लिए इसका निर्माण किया गया है।
14. मानसिक शीलगुणों की उपस्थिति के आधार पर परीक्षण की वैधता कोकहते हैं।
15. वैधता किसी भी परीक्षण का बाह्य कसौटी के साथको दर्शाता है।

6.9 परीक्षण का मानक (Norms of test) :

परीक्षण निर्माण (test construction) का अगला चरण परीक्षण के लिए मानक तैयार करने का होता है। किसी प्रतिनिधिक प्रतिदर्श (representative sample) द्वारा परीक्षण पर प्राप्त औसत प्राप्तांक या अंक (average score) को मानक कहा जाता है। परीक्षण निर्माणकर्ता मानक इसलिए तैयार करता है। ताकि वह परीक्षण पर आये अंक की अर्थपूर्ण [ग] से व्याख्या कर सके। शैक्षिक परीक्षणों के लिए अक्सर जिन मानकों का प्रयोग किया जाता है उनमें आयु मानक (age norms) ग्रेड मानक (grade norms) शतमक मानक (percentile norms) तथा प्रमाणिक प्राप्तांक मानक (standard score norms) आदि प्रधान हैं। परीक्षण के स्वरूप को ध्यान में रखते हुए परीक्षण निर्माणकर्ता इन मानकों में से

कोई उपर्युक्त मानक (appropriate norms) का निर्माण करता है। मानक ज्ञात करने के लिए सामान्यतः एक बड़े प्रतिदर्श (sample) का चयन किया जाता है।

6.10 मैनुअल तैयार करना तथा परीक्षण का पुनरूपादन करना (Preparation of manual and reproduction of test) :

सच्चे अर्थ में यह अंतिम कदम या चरण परीक्षण निर्माण के दायरे से बाहर है। इस चरण के पहले परीक्षण निर्माणकर्ता परीक्षण की जरूरतों को मद्देनजर रखते हुए निश्चित संख्या में परीक्षण की कापियाँ छपवाता है तथा एक पुस्तिका (booklet) तैयार करता है। जिसमें वह परीक्षण के मनोभौतिकी गुणों (Psychometric properties) व अन्य तकनीकी गुणों जैसे एकांश विश्लेषण संबंधी सूचना, विश्वसनीयता गुणांक (reliability coefficient) वैधता गुणांक (validity coefficient) मानक (norms) क्रियान्वयन करने के लिए निर्देश (instruction) के बारे में संक्षिप्त में सूचकांकों को उजागर करता है। इन पुस्तिका को मैनुअल कहा जाता है। बाद में कोई भी शोधकर्ता मैनुअल में निर्देश (instruction) के ही अनुसार परीक्षण का क्रियान्वयन करता है तथा व्यक्ति द्वारा प्राप्त अंकों का विश्लेषण करता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि किसी भी शैक्षिक शोध उपकरण के रूप में परीक्षण के निर्माण में यही प्रमुख सात चरण हैं जिनका यदि कठोरता से पालन किया जाता है, तो एक उत्तम परीक्षण या शोध उपकरण का निर्माण संभव हो पाता है।

6.11 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में शैक्षिक शोध उपकरण के रूप में परीक्षण (test) निर्माण के प्रमुख चरणों (Steps) को स्पष्ट किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य शैक्षिक शोध उपकरणों के निर्माण में भी यही सामान्य सिद्धांत को ध्यान में रखा जाता है।

विश्वसनीयता प्राप्त करने की पाँच मुख्य विधियाँ हैं –

- परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता विधि (Test-retest reliability)
- समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता (Equivalence forms Reliability)
- अर्द्धविच्छेद विश्वसनीयता (Split-Halves Reliability)
- तार्किक समतुल्यता विश्वसनीयता (Rational-Equivalence Reliability)

v. होयट विश्वसनीयता (Hoyt Reliability)

कालिक संगति ज्ञात करने के लिए परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता विधि का प्रयोग किया जाता है। किसी उपयुक्त प्रतिदर्श (sample) पर सामान्यतः 14 दिन के अंतराल पर परीक्षण को दोबारा क्रियान्वयन (administer) किया जाता है। इस तरह से परीक्षण प्राप्तांकों (test scores) के दो सेट हो जाते हैं और उन दोनों में सहसंबंध गुणांक (correlation coefficient) ज्ञात कर कालिक संगति गुणांक (temporal consistency coefficient) ज्ञात कर लिया जाता है। यह गुणांक जितना ही अधिक होता है (जैसे 0.87, 0.92 आदि) परीक्षण की विश्वसनीयता उतनी ही अधिक समझी जाती है। आंतरिक संगति ज्ञात करने के लिए किसी उपयुक्त प्रतिदर्श (appropriate sample) पर परीक्षण को एक बार क्रियान्वयन कर लिया जाता है। उसके बाद परीक्षण के सभी एकांशों को दो बराबर या लगभग भागों में बाँट दिया जाता है। इस प्रकार से प्रत्येक व्यक्ति का कुल प्राप्तांक (total score) दो-दो हो जाते हैं। जैसे, यदि परीक्षण के सभी सम संख्या वाले एकांश (even numbered items) को एक तरफ तथा सभी विषय संख्या वाले एकांशों (odd numbered items) की दूसरी तरफ कर दिया जाए तो सभी सम संख्या वाले एकांश पर एक कुल प्राप्तांक (total score) आएगा तथा सभी विषय संख्या वाले एकांशों पर दूसरा कुल प्राप्तांक (total score) आएगा। इस तरह से कुल प्राप्तांकों का दो सेट हो जाएगा जिसे आपस में सहसंबंधित (correlate) किया जाएगा इसे आंतरिक संगति गुणांक (internal consistency coefficient) कहा जाता है। यह गुणांक जितना ही अधिक होगा, परीक्षण की विश्वसनीयता (reliability) भी उतनी ही अधिक होगी इन दोनों उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि विश्वसनीयता का पता लगाने में परीक्षण (test) को एक तरह से अपने-आप से सह संबंधित किया जाता है। यही कारण है कि विश्वसनीयता को परीक्षण का स्वसहसंबंध (self-correlation) कहा जाता है।

6.12 शब्दावली

विश्वसनीयता (Reliability): यदि किसी परीक्षण का प्रयोग बार-बार उन्हीं छात्रों पर किया जाये तथा वे छात्र बार-बार समान अंक प्राप्त करें, तो परीक्षण को विश्वसनीय कहा जाता है। यदि परीक्षण से प्राप्त अंकों में स्थायित्व है तो परीक्षण को विश्वसनीय परीक्षण के रूप में स्वीकार किया जाता है।

परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता विधि (Test-retest reliability): इस विधि में परीक्षण को दो बार छात्रों के किसी समूह पर प्रशासित किया जाता है, जिससे प्रत्येक छात्र के लिए दो

प्राप्तांक प्राप्त हो जाते हैं। परीक्षण के प्रथम प्रशासन तथा परीक्षण के द्वितीय प्रशासन से प्राप्त अंकों के बीच सहसंबंध गुणांक की गणना कर ली जाती है। यह सहसंबंध गुणांक (r) ही परीक्षण के लिए परीक्षण-पुनःपरीक्षण विश्वसनीयता गुणांक कहलाता है। इस प्रकार से प्राप्त विश्वसनीयता गुणांक को स्थिरता गुणांक (coefficient of stability) भी कहा जाता है।

समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता (Equivalence forms Reliability): यदि किसी परीक्षण की दो से अधिक समतुल्य प्रतियाँ इस $[r]$ से तैयार की जाती है कि उन पर प्राप्त अंक एक दूसरे के समतुल्य हों, तब समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता की गणना की जाती है।

अर्द्धविच्छेद विश्वसनीयता (Split Halves Reliability) : किसी भी परीक्षण को दो समतुल्य भागों में विभक्त करके विश्वसनीयता गुणांक ज्ञात किया जाता है।

तार्किक समतुल्यता विश्वसनीयता (Rational-Equivalence Reliability): यह विधि परीक्षण की सजातीयता का मापन करती है इसलिए कूडर रिचार्डसन विधि से विश्वसनीयता गुणांक को सजातीयता गुणांक या आन्तरिक संगति गुणांक भी कहा जाता है। विश्वसनीयता गुणांक निकालने के लिए कूडर रिचार्डसन ने अनेक सूत्रों का प्रतिपादन किया, जिनमें से दो सूत्र के०आर० 20 तथा के०आर० 21 अधिक प्रचलित है।

होय्ट विश्वसनीयता (Hoyt Reliability): होय्ट ने प्रसरण (Variance) को विश्वसनीयता गुणांक निकालने का आधार माना है। प्रसरण विश्लेषण सांख्यिकीय तकनीक का प्रयोग कर होय्ट विश्वसनीयता को ज्ञात की जा सकती है।

मापक की मानक त्रुटि (Standard Error of Measurement) : त्रुटि प्राप्तांकों के मानक विचलन को मापक की मानक त्रुटि कहते हैं तथा इसे σ_e से व्यक्त करते हैं।

विश्वसनीयता सूचकांक (Index of Reliability) : परीक्षण पर प्राप्त कुल अंकों (X) तथा सत्य प्राप्तांकों (T) के बीच सहसंबंध गुणांक को विश्वसनीयता सूचकांक कहते हैं। उसका मान विश्वसनीयता गुणांक के वर्गमूल के बराबर होता है।

परीक्षण वैधता (Test Validity): वैधता का सीधा संबंध परीक्षण के उद्देश्यपूर्णता से है। जब परीक्षण अपने उद्देश्य की पूर्ति करता है, तब ही उसे वैध परीक्षण कहते हैं तथा परीक्षण की इस विशेषता को वैधता कहते हैं।

विषयगत वैधता (Content Validity) – जब परीक्षण की वैधता स्थापित करने के लिए परीक्षण परिस्थितियों तथा परीक्षण व्यवहार का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करके परीक्षण द्वारा मापी जा रही विशेषता/योग्यता के संबंध में प्रमाण एकत्रित किए जाते हैं तो इसे विषयगत वैधता कहते हैं।

आनुभाविक वैधता (Empirical validity) : जब परीक्षण व्यवहार (Test behaviour) तथा निकष व्यवहार (Criterion behaviour) के मध्य संबंध को ज्ञात करके परीक्षण द्वारा मापी जा रही विशेषता या योग्यता के संबंध में प्रमाण एकत्रित किए जाते हैं तो इसे आनुभाविक वैधता या निकष वैधता (Criterion Validity) कहते हैं।

मैन्यूअल (Manual) : निर्देश (instruction) पुस्तिका जिसके अनुसार शोधकर्ता परीक्षण का क्रियान्वयन करता है तथा परीक्षण पर प्राप्त अंकों का विश्लेषण करता है।

6.13 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर

1. एकांश की वैधता
2. विभेदी सूचकांक (discriminatory index)
3. कठिनाई सूचकांक
4. विभेदन सूचकांक
5. एकांश
6. 0.60
7. विश्वसनीयता सूचकांक
8. गति परीक्षण (Speed Test)
9. अधिक
10. अधिक
11. विश्वसनीय
12. वर्गमूल
13. वैधता
14. अन्वय वैधता
15. सहसंबंध

6.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री

1. सिंह, ए०के० (2007) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास |
2. गुप्ता, एस०पी० (2008) : मापन एवं मूल्यांकन, इलाहाबाद, शारदा पब्लिकेशन|
3. राय, पारसनाथ (2001) : अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स
4. Best, John W. & Kahn (2008). Research in Education, New Delhi, PHI.

6.15 निबंधात्मक प्रश्न

1. शोध उपकरणों के निर्माण के सामान्य सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।
2. शोध उपकरणों के निर्माण हेतु प्रयुक्त प्रमुख पदों का मूल्यांकन कीजिए।
3. विश्वसनीयता की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. वैधता के संप्रत्यय की व्याख्या कीजिए तथा विश्वसनीयता व वैधता के मध्य संबंधों का वर्णन कीजिए।
5. विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।
6. वैधता को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।
7. विश्वसनीयता के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

इकाई संख्या 07: मापन के पैमाने: नामित स्तर, क्रमित स्तर, अंतरित स्तर एवं आनुपातिक स्तर, प्रदत्तों का संयोजन- सरणी, समूहबद्ध वितरण। (Scale of Measurement : Nominal, Ordinal, Interval and Ratio, Organization of Data: Array, Grouped distribution)

इकाई की रूपरेखा

- 7.1 प्रस्तावना
- 7.2 उद्देश्य
- 7.3 आंकड़ों के प्रकार
- 7.4 मापन के पैमाने
- 7.5 आंकड़े संग्रहण के उपकरण एवं तकनीकें
 - 7.5.1 अवलोकन तकनीक
 - 7.5.2 परीक्षण

-
- 7.5.3 साक्षात्कार
 - 7.5.4 अनुसूची
 - 7.5.5 प्रश्नावली
 - 7.5.6 निर्धारण मापनी
 - 7.6.7 प्रक्षेपीय तकनीक
 - 7.6 सारांश
 - 7.7 शब्दावली
 - 7.8 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
 - 7.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री
 - 7.10 निबंधात्मक प्रश्न
-

7.1 प्रस्तावना:

शैक्षिक शोध में परिमाणात्मक व गुणात्मक आंकड़ों के माध्यम से किसी नए सिद्धांत का निर्माण और पुराने सिद्धांत की पुष्टि की जाती है। शैक्षिक शोध चरों के विश्लेषण पर आधारित कार्य है। चरों की विशेषताओं को आंकड़ों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। चरों के गुणों को वर्गों या मात्राओं में व्यक्त किया जा सकता है, जिसे आंकड़े की संज्ञा दी जाती है। इस दृष्टि से आंकड़े दो प्रकार के यथा गुणात्मक आंकड़े (Quantitative Data) तथा मात्रात्मक आंकड़े (Qualitative Data) हो सकते हैं। इन आंकड़ों को मापन के विभिन्न पैमानों या स्तरों पर व्यक्त किया जाता है। मापन के इन चार स्तरों को मापन के चार पैमाने अर्थात् नामित पैमाना (Nominal Scale), क्रमित पैमाना (Ordinal Scale), अन्तरित पैमाना (Interval Scale) तथा अनुपाती पैमाना ((Ratio Scale) कहा जाता है। शोध कार्य में चरों का विश्लेषण करने हेतु आंकड़ों का संग्रहण एक चुनौती भरा कार्य होता है। गुणात्मक आंकड़े (Quantitative Data) तथा मात्रात्मक आंकड़े (Qualitative Data) का संग्रहण विभिन्न शोध उपकरणों के माध्यम से किया जाता है। प्रस्तुत इकाई में आप आंकड़ों के प्रकार यथा गुणात्मक आंकड़े तथा मात्रात्मक आंकड़े, आंकड़े संग्रहण के उपकरण एवं तकनीकें, मापन के चारों पैमाने यथा नामित स्तर, क्रमित स्तर, अन्तरित स्तर, तथा आनुपातिक स्तर का अध्ययन करेंगे।

7.2 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- आंकड़ों के प्रकार को स्पष्ट कर सकेंगे।
- आंकड़ों के प्रकारों में विभेद कर सकेंगे।
- मापन के चारों पैमानों की व्याख्या कर सकेंगे।
- नामित स्तर, क्रमित स्तर, अन्तरित स्तर, तथा आनुपातिक स्तर में विभेद कर सकेंगे।
- आंकड़े संग्रहण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न तकनीकों को वर्गीकृत कर सकेंगे।
- आंकड़े (Qualitative Data) संग्रहण हेतु विभिन्न शोध उपकरणों की व्याख्या कर सकेंगे।

7.3 आंकड़ों के प्रकार (Types of Data) :

आंकड़ों के प्रकार को समझने से पहले चर व चरों (variables) की प्रकृति को समझना आवश्यक है। मापन के द्वारा वस्तुओं या व्यक्तियों के समूहों की विभिन्न विशेषताओं या गुणों का अध्ययन किया जाता है। इन विशेषताओं अथवा गुणों को चर राशि या चर कहते हैं। अतः कोई चर वह गुण या विशेषता है जिसमें समूह के सदस्य परस्पर कुछ न कुछ भिन्न होते हैं। उदाहरण के लिये किसी समूह के सदस्य भार, लम्बाई, बुद्धि या आर्थिक स्थिति आदि में भिन्न भिन्न होते हैं। इसलिए भार, लम्बाई, बुद्धि या आर्थिक स्थिति को चर कहा जायेगा। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि चर के आधार पर किसी समूह के सदस्यों को कुछ उपसमूहों में बाँटा जा सकता है। यहाँ पर यह बात ध्यान रखने की है कि चर राशि पर समूह के समस्त सदस्यों का एक दूसरे से भिन्न होना आवश्यक नहीं है। यदि समूह का केवल एक सदस्य भी किसी गुण के प्रकार या मात्रा में अन्यो से भिन्न है तब भी इस गुण को चर के नाम से संबोधित किया जाएगा। चरों के गुणों को वर्गों या मात्राओं में व्यक्त किया जा सकता है, जिसे आंकड़े की संज्ञा दी जाती है। इस दृष्टि से आंकड़े दो प्रकार के यथा गुणात्मक आंकड़े (Quantitative Data) तथा मात्रात्मक आंकड़े (Qualitative Data) होते हैं।

1. गुणात्मक आंकड़े (Qualitative Data) : गुणात्मक आंकड़े गुण के विभिन्न प्रकारों को इंगित करते हैं। गुणात्मक आंकड़े, गुणात्मक चरों से सम्बन्धित होते हैं। उनके आधार पर समूह को कुछ स्पष्ट वर्गों या श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति इनमें से किसी एक वर्ग या श्रेणी का सदस्य होता है। जैसे व्यक्तियों के किसी समूह को लिंगभेद के आधार पर पुरुष या महिला वर्गों में, छात्रों को उनके अध्ययन विषयों के आधार पर कला, विज्ञान या वाणिज्य वर्गों में अथवा किसी शहर के निवासियों को उनके धर्म के आधार पर हिन्दू, मुस्लिम, सिख व ईसाई वर्गों में बाँटा जा

सकता है। इन उदाहरणों में लिंगभेद, अध्ययन वर्ग व धर्म गुणात्मक प्रकार के चर हैं तथा इनके सम्बन्धित गुणों को वर्गों या गुणात्मक आंकड़ों के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है।

2. मात्रात्मक आंकड़े (Quantitative Data): चर के गुणों की मात्रा को मात्रात्मक आंकड़ों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। इन आंकड़ों का संबंध मात्रात्मक चरों पर समूह के विभिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न मात्रा में मान प्राप्त कर सकते हैं। जैसे छात्रों के किसी समूह के लिए परीक्षा प्राप्तांक, स्कूलों के किसी समूह के लिए छात्र संख्या अथवा व्यक्तियों के किसी समूह के लिए मासिक आय को संख्याओं द्वारा इंगित किया जाता है। इन उदाहरणों में प्राप्तांक, छात्र संख्या व मासिक आय मात्रात्मक आंकड़े हैं क्योंकि ये सम्बन्धित गुण की मात्राओं को बताते हैं।

(i) **सतत् आंकड़े (Continuous Data):** सतत् आंकड़े वे आंकड़े हैं जिनके लिए किन्हीं भी दो मानों के बीच का प्रत्येक मान धारण करना संभव होता है। जैसे भार व लम्बाई सतत् चर का उदाहरण है जिसके मान को सतत् आंकड़ों के रूप में व्यक्त किया जाता है। व्यक्तियों का भार कुछ भी हो सकता है। भार के लिए यह आवश्यक नहीं है कि यह पूर्णांक में ही हो। अतः किसी व्यक्ति का भार 68.76 कि० ग्रा० (अथवा इससे भी अधिक दशमलव अंको में हो सकता है)। इसी प्रकार से लम्बाई को सतत् आंकड़ों में व्यक्त किया जा सकता है। स्पष्ट है कि सतत् चर (आंकड़े) किसी एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु के बीच कोई भी मान प्राप्त कर सकता है।

(ii) **असतत् आंकड़े (Discrete Data):** असतत् चर को असतत् आंकड़ों के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है। असतत् चर को खण्डित चर भी कहते हैं। यह वह चर है जिसके लिए किन्हीं दो मानों के बीच के प्रत्येक मान धारण करना सम्भव नहीं होता है। जैसे परिवार में बच्चों की संख्या पूर्णांकों में ही हो सकती है। किसी परिवार में बच्चों की संख्या 2.5 या 3.5 नहीं हो सकता। अतः परिवार में बच्चों की संख्या या किताब में पृष्ठों की संख्या को असतत् आंकड़ों में ही व्यक्त किया जा सकता है। स्पष्ट है कि असतत् आंकड़ों को केवल पूर्णांक संख्या में ही व्यक्त किया जा सकता है।

7.4 मापन के पैमाने (Scales of Measurement) :

मापन प्रक्रिया को उसकी विशेषताओं यथा यथार्थता, प्रयुक्त इकाइयों, चरो की प्रकृति, परिणामों की प्रकृति आदि के आधार पर कुछ क्रमबद्ध प्रकारों में बाँटा जा सकता है। एस०एस स्टीबेन्स ने मापन की यथार्थता के आधार पर मापन के चार स्तर बताये हैं। ये चार स्तर (1) नामित स्तर (Nominal Level), (2) क्रमित स्तर (Ordinal Level), (3) अन्तरित स्तर (Interval Level), तथा (4) आनुपातिक स्तर (Ratio Scales) हैं। मापन के इन चार स्तरों को मापन के चार पैमाने अर्थात् नामित

पैमाना(Nominal Scale), क्रमित पैमाना (Ordinal Scale), अन्तरित पैमाना (Interval Scale) तथा अनुपाती पैमाना ((Ratio Scale) भी कहा जाता है।

(1) नामित पैमाना (Nominal Scale) : यह सबसे कम परिमार्जित स्तर का मापन है। इस प्रकार का मापन किसी गुण अथवा विशेषता के नाम पर आधारित होता है। इसमें व्यक्तियों अथवा वस्तुओं को उनके किसी गुण अथवा विशेषता के प्रकार के आधार पर कुछ वर्गों अथवा समूहों में विभक्त कर दिया जाता है। इन वर्गों में किसी भी प्रकार का कोई अन्तर्निहित क्रम अथवा संबंध नहीं होता है। प्रत्येक वर्ग, गुण अथवा विशेषता के किसी एक प्रकार को व्यक्त करता है। विशेषता के प्रकार की दृष्टि से सभी वर्ग एक समान महत्व रखते हैं। गुण के विभिन्न प्रकारों को एक एक नाम, शब्द, अक्षर, अंक या कोई अन्य संकेत प्रदान कर दिया जाता है। जैसे निवास के आधार पर ग्रामीण व शहरी में बॉटना, विषयों के आधार पर स्नातक छात्रों को कला, विज्ञान, वाणिज्य, विधि, इन्जीनियरिंग, चिकित्सा आदि वर्गों में बॉटना, लिंग-भेद के आधार पर बच्चों को लड़के व लड़कियों में बॉटना, फलों को आम, सेब, केला, अंगूर, सन्तरा आदि में वर्गीकृत करना, फर्नीचर को मेज, कुर्सी, स्टूल आदि में बॉटना आदि नामित मापन के कुछ सटीक उदाहरण हैं।

स्पष्टतः नामित मापन एक गुणात्मक मापन है जिसमें गुण के विभिन्न प्रकारों, पहलुओं के आधार पर वर्गों की रचना की जाती है एवं व्यक्तियों/वस्तुओं को इन विभिन्न वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है। मापन प्रक्रिया में केवल यह देखा जाता है कि कोई व्यक्ति/वस्तु किस वर्ग की विशेषता को अपने में समाहित किये हुए है एवं तदनुसार उस व्यक्ति/वस्तु को उस वर्ग का नाम/संकेत/प्रतीक आवंटित कर दिया जाता है। इस प्रकार के मापन में विभिन्न वर्गों में सम्मिलित व्यक्तियों या सदस्यों की केवल गणना ही संभव होती है। वर्गों या समूहों को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले नामों, शब्दों, अक्षरों, अंकों या प्रतीकों के साथ कोई भी गणितीय संक्रिया जैसे जोड़, घटाना, गुणा या भाग आदि सम्भव नहीं होता। केवल प्रत्येक समूह के व्यक्तियों की गिनती की जा सकती है। स्पष्ट है कि नामित स्तर पर किये जाने वाले मापन में गुण विशेषता के विभिन्न पहलुओं के आधार पर वर्गों या समूहों की रचना की जाती है।

(2) क्रमित पैमाना (Ordinal Scale): यह नामित मापन से कुछ अधिक परिमार्जित होता है। यह मापन वास्तव में गुण की मात्रा के आकार पर आधारित होता है। इस प्रकार के मापन में व्यक्तियों अथवा वस्तुओं को उनके किसी गुण के मात्रा के आधार पर कुछ ऐसे वर्गों में विभक्त कर दिया जाता है जिनमें एक स्पष्ट अन्तर्निहित क्रम निहित होता है। उन वर्गों में से प्रत्येक के कोई नाम, शब्द, अक्षर, प्रतीक या अंक प्रदान कर दिये जाते हैं। जैसे छात्रों को उनकी योग्यता के आधार पर श्रेष्ठ, औसत व कमजोर छात्रों के तीन वर्गों में बॉटना क्रमित मापन का एक सरल उदाहरण है। छात्रों के इन तीनों

वर्गों में एक अंतर्निहित सम्बन्ध है। पहले वर्ग के छात्र दूसरे वर्ग के छात्रों से श्रेष्ठ है तथा दूसरे वर्ग के छात्र तीसरे वर्ग के छात्रों से श्रेष्ठ है। क्रमित मापन में यह आवश्यक नहीं की विभिन्न वर्गों के मध्य गुण की मात्रा का अन्तर सदैव ही समान हो। जैसे यदि सोनू, मोनू तथा रामू क्रमशः श्रेष्ठ वर्ग, औसत वर्ग तथा कमजोर वर्ग में है तो उसका अर्थ यह नहीं की सोनू व मोनू के बीच योग्यता में वही अन्तर है जो मोनू तथा रामू के बीच है। छात्रों को परीक्षा प्राप्तांको के आधार पर प्रथम, द्वितीय, तृतीय श्रेणियों या अनुतीर्ण निर्धारित करना, लम्बाई के आधार पर छात्रों को लम्बा, औसत या नाटा कहना, छात्रों को उनके कक्षास्तर के आधार पर प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर, स्नातक स्तर आदि में बाँटना, अभिभावकों को उनके सामाजिक आर्थिक स्तर के आधार पर उच्च, मध्यम व निम्न वर्गों में बाँटना इत्यादि क्रमित मापन के कुछ सरल उदाहरण हैं।

स्पष्ट है कि क्रमित मापन के विभिन्न वर्गों में गुण या विशेषता की उपस्थिति की मात्रा एक दूसरे से भिन्न होती है तथा उन वर्गों को इस आधार पर घटते अथवा बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया जा सकता है। वर्गों को क्रमबद्ध करना सम्भव होने के कारण एक वर्ग के सदस्य अन्य वर्गों के सदस्यों से मापे जा रहे गुण की दृष्टि से श्रेष्ठ अथवा निम्न स्तरीय होते हैं। नामित मापन की तरह से क्रमित मापन में भी केवल प्रत्येक समूह के सदस्यों की गिनती करना सम्भव होता है। समूहों को व्यक्त करने वाले शब्दों, अक्षरों, प्रतीकों या अंको के साथ गणितीय सक्रियाएँ सम्भव नहीं होती है। परन्तु उन वर्गों को घटते क्रम में अथवा बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया जा सकता है।

(3) अन्तरित पैमाना (Interval Scale): यह नामित व क्रमित मापन से अधिक परिमार्जित होता है। अन्तरित मापन गुण की मात्रा अथवा परिमाण पर आधारित होता है। इस प्रकार के मापन में व्यक्तियों अथवा वस्तुओं में विद्यमान गुण की मात्रा को इस प्रकार ईकाइयों के द्वारा व्यक्त किया जाता है कि किन्हीं दो लगातार ईकाइयों में अन्तर समान रहता है। जैसे छात्रों को उनको गणित योग्यता के आधार पर अंक प्रदान करना अन्तरित मापन (Interval Scale) का एक सरल उदाहरण है। यहाँ यह स्पष्ट है कि 35 एवं 36 अंको के बीच ठीक वही अन्तर होता है जो अन्तर 45 व 49 अंकों के बीच होता है। अधिकांश शैक्षिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक चरों का मापन प्रायः अन्तरित स्तर पर ही किया जाता है। समान दूरी पर स्थित अंक ही इस स्तर के मापन की ईकाइयों होती हैं। इन ईकाइयों के साथ जोड़ व घटाने की गणितीय संक्रियाएँ की जा सकती हैं। इस स्तर के मापन में परम शून्य (Absolute Zero) या वास्तविक शून्य (Real Zero) जैसा गुणविहीनता को व्यक्त करने वाला कोई बिन्दु नहीं होता है जिसके कारण इस स्तर के मापन से प्राप्त परिणाम सापेक्षिक (Relative) तो होते हैं परन्तु निरपेक्ष (Absolute) नहीं होते हैं। इस स्तर पर शून्य बिन्दु तो हो सकता है परन्तु यह आभासी होता है। उदाहरण के लिए यदि कोई छात्र गणित परीक्षण पर शून्य अंक प्राप्त करता है तो इसका अभिप्राय यह नहीं है कि वह छात्र गणित विषय में कुछ नहीं

जानता है। इस शून्य का अभिप्राय केवल इतना है कि छात्र प्रयुक्त किये गये गणित परीक्षण के प्रश्नों को सही हल करने में पूर्णतया असफल रहा है परन्तु वह गणित के कुछ अन्य सरल प्रश्नों का सही हल भी कर सकता है। अन्तरित मापन से प्राप्त अंकों के साथ जोड़ तथा घटाने की गणनाएँ की जा सकती हैं। परन्तु गुणा तथा भाग की संक्रियाएँ करना सम्भव नहीं होता है। शिक्षा शास्त्र, समाज शास्त्र तथा मनोविज्ञान में प्रायः अन्तरित स्तर के मापन का ही प्रयोग किया जाता है।

(4) अनुपातिक पैमाना (Ratio Scale): यह मापन सर्वाधिक परिमार्जित स्तर का मापन है। इस प्रकार के मापन में अन्तरित मापन के सभी गुणों के साथ-साथ परम शून्य (Absolute Zero) या वास्तविक शून्य (Real Zero) की संकल्पना निहित रहती है। परम शून्य वह स्थिति है जिस पर कोई गुण पूर्ण रूप से अस्तित्व विहीन हो जाता है। जैसे लम्बाई, भार या दूरी अनुपातिक मापन का उदाहरण है क्योंकि लम्बाई, भार या दूरी को पूर्ण रूप से अस्तित्वहीन होने की संकल्पना की जा सकती है। अनुपातिक मापन की दूसरी विशेषता इस पर प्राप्त मापों की अनुपातिक तुलनीयता है। अनुपातिक मापन द्वारा प्रयुक्त मापन परिणामों को अनुपात के रूप में व्यक्त कर सकते हैं जबकि अन्तरित मापन द्वारा प्राप्त परिणाम गुण के परिणाम के अनुपातों के रूप में व्यक्त करने में असमर्थ होते हैं। जैसे 60 किलोग्राम भार वाले व्यक्ति को 30 किलोग्राम भार वाले व्यक्तियों से दो गुना भार वाला व्यक्ति कहा जा सकता है। परन्तु 140 बुद्धि-लब्धि वाले व्यक्ति को 70 बुद्धि-लब्धि वाले व्यक्ति से दो गुना बुद्धिमान कहना तर्कसंगत नहीं होगा। दरअसल तीस-तीस किलोग्राम वाले दो व्यक्ति भार की दृष्टि से 60 किलोग्राम वाले व्यक्ति के समान हो जायेंगे। परन्तु 70 व 70 बुद्धि-लब्धि वाले दो व्यक्ति मिलकर भी 140 बुद्धि-लब्धि वाले व्यक्ति के समान बुद्धिमान नहीं हो सकते हैं। अधिकांश भौतिकचरों का मापन प्रायः अनुपातिक स्तर पर किया जाता है।

स्पष्ट है कि अनुपातिक स्तर के मापन में परम शून्य या वास्तविक शून्य बिन्दु कोई कल्पित बिन्दु नहीं होता है वरन उसका अभिप्राय गुण की मात्रा का वास्तविक रूप में शून्य होने से होता है। लम्बाई, भार, दूरी जैसे चरों के मापन के समय हम ऐसे शून्य बिन्दु की कल्पना कर सकते हैं जहाँ लम्बाई, भार या दूरी का कोई अस्तित्व नहीं होता है। अनुपातिक मापन से प्राप्त परिणामों के साथ जोड़, घटाना, गुणा व भाग की चारों मूल गणितीय संक्रियाएँ की जा सकती है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. लिंग-भेद के आधार पर बच्चों को लड़के व लड़कियों में बाँटनामापन का उदाहरण है।

2. असतत् चर कोचर भी कहते हैं।
3. भार व लम्बाईचर का उदाहरण है।
4. लम्बाई के आधार पर छात्रों को लम्बा, औसत या नाटा कहनामापन के उदाहरण हैं।
5. गणित योग्यता के आधार पर अंक प्रदान करनामापन का उदाहरण है।
6. नामित स्तर पर शून्य बिन्दु तो होता है परन्तु यहहोता है।
7.पैमाना सर्वाधिक परिमार्जित स्तर का मापन है।
8. छात्रों की लम्बाई तथा भार आदि का मापन करके अंक प्रदान करनास्तर का उदाहरण है।
9. श्रेणी क्रम सहसंबंध का परिकलनस्तर के पैमाने पर किया जा सकता है।
10. भौतिकचरों का मापन प्रायःस्तर पर किया जाता है।

7.5 आंकड़े संग्रहण के उपकरण एवं तकनीकें (Tools and Techniques of Data Collection) :

शैक्षिक शोध में परिमाणात्मक व गुणात्मक आंकड़ों के माध्यम से नवीन सिद्धांत का निर्माण और प्राचीन सिद्धांत की पुष्टि की जाती है। शोध कार्य में चरों का विश्लेषण करने हेतु आंकड़ों का संग्रहण एक जटिल कार्य होता है। गुणात्मक आंकड़े (Quantitative Data) तथा मात्रात्मक आंकड़े (Qualitative Data) के संग्रहण के लिए विभिन्न शोध उपकरणों को प्रयुक्त किया जाता है। इन आंकड़ों के संग्रहण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न तकनीकों को पाँच मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है। ये पाँच भाग निम्नवत हैं-

- (1) अवलोकन तकनीक (Observation Technique)
- (2) स्व-आख्या तकनीक (Self Report Technique)
- (3) परीक्षण तकनीक (Testing Technique)
- (4) समाजमितीय तकनीक (Sociometric Technique)
- (5) प्रक्षेपीय तकनीक (Projective Technique)

इन पाँच तकनीकों का संक्षिप्त वर्णन संक्षेप में आगे प्रस्तुत हैं-

(1) अवलोकन तकनीक: (Observation Technique): अवलोकन तकनीक से अभिप्राय किसी व्यक्ति के व्यवहार को देखकर या अवलोकित करके उसके व्यवहार का मापन करने की प्राविधि से है। अवलोकन को व्यवस्थित एवं औपचारिक बनाने के लिए अवलोकन कर्ता चैक लिस्ट, अवलोकन चार्ट, मापनी परीक्षण, एनकडोटल अभिलेख आदि उपकरणों का प्रयोग कर सकता है। स्पष्ट है कि अवलोकन एक तकनीक के रूप में अधिक व्यापक है जबकि एक उपकरण के रूप में इसका क्षेत्र सीमित रहता है।

(2) स्व-आख्या तकनीक (Self Report Technique): स्व-आख्या तकनीक में मापे जा रहे व्यक्ति से ही उसके व्यवहार के सम्बन्ध में जानकारी पूछी जाती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि व्यक्ति अपने बारे में स्वयं सूचना देता है जिसके आधार पर उसके गुणों को अभिव्यक्त किया जाता है। स्पष्ट है कि इस तकनीक में इस बात का मापन नहीं होता है कि व्यक्ति का क्या गुण है बल्कि इस बात का मापन होता है कि व्यक्ति किस गुणों को स्वयं में होना बताता है। यह तकनीक सामाजिक बांछनीयता से प्रभावित परिणाम देता है। व्यक्ति सामाजिक रूप से बांछनीय गुणों को ही स्वयं में बताता है तथा अवांछनीय गुणों को छिपा लेता है। प्रश्नावली, साक्षात्कार, अभिवृति मापनी इस तकनीक के लिए प्रयोग में आने वाले कुछ उपकरण हैं।

(3) परीक्षण तकनीक (Testing Technique): परीक्षण तकनीक में व्यक्ति को किन्हीं ऐसी परिस्थिति में रखा जाता है जो उसके वास्तविक व्यवहार या गुणों को प्रकट कर दें। मापनकर्ता व्यक्ति के सम्मुख कुछ ऐसी परिस्थितियों या समस्याएँ को रखता है तथा उन पर व्यक्ति के द्वारा की गई प्रतिक्रियाओं के आधार पर उसके गुणों की मात्रा का निर्धारण करता है। विभिन्न प्रकार के परीक्षण जैसे सम्प्रति परीक्षण, बुद्धि परीक्षण, निदानात्मक परीक्षण, अभिरूचि परीक्षण, मूल्य परीक्षण आदि इस तकनीक के उदाहरण हैं।

(4) समाजमितीय तकनीक (Sociometric Technique): समाजमितीय तकनीक सामाजिक सम्बन्धों, समायोजन व अन्तःक्रिया के मापन में काम आती है। इस तकनीक में व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से किस प्रकार के सम्बन्ध रखता है तथा अन्य व्यक्ति उससे कैसे सम्बन्ध रखते हैं, जैसे प्रश्नों पर उनके द्वारा दिये गये प्रत्युत्तरों का विश्लेषण किया जाता है। सामाजिक गतिशीलता के मापन के लिए यह सर्वोत्तम तकनीक है।

(5) प्रक्षेपीय तकनीक (Projective Technique): प्रक्षेपीय तकनीक में व्यक्ति के सम्मुख किसी असंरचित उद्दीपन को प्रस्तुत किया जाता है तथा व्यक्ति उस पर प्रतिक्रिया देता है। इस तकनीक की मान्यता यह है कि व्यक्ति अपनी पसन्द, नापसन्द, विचार, दृष्टिकोण, आवश्यकता आदि को अपनी प्रतिक्रिया में आरोपित कर देता है जिनका विश्लेषण करके व्यक्ति के गुणों को जाना जा सकता है।

रोशा का मसि लक्ष्य परीक्षण (Rorschach Ink Blot Test), टी0ए0टी0 (TAT Test), शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test), पूर्ति परीक्षण (Completion Test) इस तकनीक के प्रयोग के कुछ प्रसिद्ध उदाहरण हैं।

आंकड़े संग्रहित करने के उपकरण (Data Gathering Tools): शोध के क्षेत्र में आंकड़े संग्रहित किये जाने वाले प्रमुख उपकरणों के निम्नवत सूचीबद्ध किया जा सकता है-

1. अवलोकन (Observation)
2. परीक्षण (Test)
3. साक्षात्कार (Interview)
4. अनुसूची (Schedule)
5. प्रश्नावली (Questionnaire)
6. निर्धारण मापनी (Rating Scale)
7. प्रक्षेपीय तकनीक (Projective Techniques)
8. समाजमिति (Sociometry)

इन सभी आंकड़े संग्रहित किये जाने वाले प्रमुख उपकरणों का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है ताकि इन सभी के विशेषताओं के बारे में आप अवगत हो सकें।

7.5.1 अवलोकन (Observation) :

अवलोकन व्यक्ति के व्यवहार के मापन की अत्यन्त प्राचीन विधि है। व्यक्ति अपने आस-पास घटित होने वाली विभिन्न क्रियाओं तथा घटनाओं का अवलोकन करता रहता है। मापन के एक उदाहरण के रूप में अवलोकन का संबंध किसी व्यक्ति अथवा छात्र के बाह्य व्यवहार को देखकर उसके व्यवहार का वर्णन करने से है। अवलोकन को मापन की एक वस्तुनिष्ठ विधि के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता फिर अनेक प्रकार की परिस्थितियों में तथा अनेक प्रकार के व्यवहार के मापन के इस विधि का प्रयोग किया जाता है। छोटे बच्चों के व्यवहार का मापन करने के लिए यह विधि अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती है। छोटे बच्चे मौखिक तथा लिखित परीक्षाओं के प्रति जागरूक नहीं होते हैं जिसकी वजह से मौखिक तथा लिखित परीक्षाओं के द्वारा उनका मापन करना कठिन हो जाता है।

व्यक्तित्व के गुणों का मापन करने के लिए भी अवलोकन का प्रयोग किया जा सकता है। छोटे बच्चों, अनपक्व व्यक्तियों, मानसिक-रोगियों, विकलांगों तथा अन्य भाषा-भाषी लोगों के व्यवहार का मापन करने के लिए अवलोकन एक मात्र उपयोगी विधि है। अवलोकन की सहायता से ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक तीनों ही प्रकार के व्यवहारों का मापन किया जा सकता है।

अवलोकन करने वाले व्यक्ति की दृष्टि से अवलोकन दो प्रकार का हो सकता है- स्वअवलोकन (Self Observation) तथा बाह्य अवलोकन (External Observation)। स्वअवलोकन में व्यक्ति अपने स्वयं के व्यवहार का अवलोकन करता है जबकि बाह्य अवलोकन में अवलोकनकर्ता अन्य व्यक्तियों के व्यवहार का अवलोकन करता है। निःसन्देह स्वयं के व्यवहार का ठीक-ठीक अवलोकन करना एक कठिन कार्य होता है जबकि अन्य व्यक्तियों के व्यवहार को देखना तथा उसका लेखा-जोखा रखना सरल होता है। वर्तमान समय में प्रायः अवलोकन से अभिप्राय दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार के अवलोकन को माना जाता है।

अवलोकन नियोजित भी हो सकता है तथा अनियोजित भी हो सकता है। नियोजित अवलोकन (Planned Observation) किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिये किया जाता है। इसके विपरीत अनियोजित अवलोकन (Unplanned Observation) किसी सामान्य उद्देश्य की दृष्टि से किया जाता है। अवलोकन को प्रत्यक्ष अवलोकन (Direct Observation) तथा अप्रत्यक्ष अवलोकन (Indirect Observation) के रूप में भी बाँटा जा सकता है। प्रत्यक्ष अवलोकन से अभिप्राय किसी व्यवहार को उसी रूप में देखना है जैसाकि वह व्यवहार हो रहा है। इसमें मापनकर्ता या शोधकर्ता व्यवहार का अवलोकन स्वयं करता है। परोक्ष अवलोकन में किसी व्यक्ति के व्यवहार के संबंध में अन्य व्यक्तियों से पूछा जाता है। प्रत्यक्ष अवलोकन दो प्रकार का हो सकता है जिन्हें क्रमशः सहभागिक अवलोकन (Participant Observation) तथा असहभागिक अवलोकन (Non-participant Observation) कहा जाता है। सहभागिक अवलोकन में अवलोकनकर्ता उस समूह का अंग होता है जिसका वह अवलोकन कर रहा होता है जबकि असहभागिक अवलोकन में अवलोकनकर्ता समूह के क्रिया कलापों में कोई भाग नहीं लेता है।

अवलोकन को नियंत्रित अवलोकन (Controlled Observation) तथा अनियंत्रित अवलोकन (Uncontrolled Observation) के रूप में भी बाँटा जा सकता है। नियंत्रित अवलोकन में अवलोकनकर्ता कुछ विशिष्ट परिस्थितियाँ निर्मित करके अवलोकन करता है जबकि अनियंत्रित अवलोकन में वास्तविक परिस्थितियों में अवलोकन कार्य किया जाता है। नियंत्रित अवलोकन में व्यवहार के अस्वाभाविक हो जाने की संभावना रहती है क्योंकि अवलोकन किया जाने वाला व्यक्ति सजग हो जाता है। अनियंत्रित अवलोकन में अवलोकन किए जाने वाले स्वयं के

अवलोकन किये जाने की प्रायः कोई जानकारी नहीं होती जिससे वह अपने स्वाभाविक व्यवहार का प्रदर्शन करता है।

7.5.2 परीक्षण (Tests) :

परीक्षण वे उपकरण हैं जो किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के किसी समूह के व्यवहार का क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित ज्ञान प्रदान करते हैं। परीक्षण से तात्पर्य किसी व्यक्ति को ऐसी परिस्थितियों में रखने से है जो उसके वास्तविक गुणों को प्रकट कर दे। विभिन्न प्रकार के गुणों को मापने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि ज्ञात करने के लिए उपलब्धि परीक्षणों (Achievement Tests) का प्रयोग किया जाता है, व्यक्तित्व को जानने के लिए व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Tests) का प्रयोग किया जाता है, अभिक्षमता ज्ञात करने के लिए अभिक्षमता परीक्षण (Aptitude Test) का प्रयोग किया जाता है, छात्रों की कठिनाइयों को जानने के लिए निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test) का प्रयोग किया जाता है, आदि आदि परीक्षणों को अनेक [ग] से वर्गीकृत किया जा सकता है।

परीक्षण के प्रकृति के आधार पर परीक्षणों को मौखिक परीक्षण (Oral Test), लिखित परीक्षण (Written Test) तथा प्रायोगात्मक परीक्षण (Experimental Test) के रूप में बाँटा जा सकता है। मौखिक परीक्षा में मौखिक प्रश्नोत्तर के द्वारा छात्रों के व्यवहार का मापन किया जाता है। परीक्षक मौखिक प्रश्न ही करता है तथा परीक्षार्थी मौखिक रूप में ही उनका उत्तर प्रदान करता है स्पष्ट है कि मौखिक परीक्षण के द्वारा एक समय में एक ही छात्र के गुणों को मापा जा सकता है। लिखित परीक्षण में प्रश्न लिखित रूप में पूछे जाते हैं तथा छात्र उनका उत्तर लिख कर देता हैं। लिखित परीक्षणों को एक साथ अनेक छात्रों के ऊपर प्रशासित किया जा सकता है। उससे कम समय में अधिक व्यक्तियों की योग्यताओं का मापन सम्भव है। प्रायोगात्मक परीक्षणों में छात्रों को कोई प्रायोगात्मक कार्य करना होता है तथा उस प्रायोगात्मक कार्य के आधार पर उनका मापन किया जाता है। प्रायोगात्मक परीक्षणों को निष्पादन परीक्षण भी कहा जा सकता है।

परीक्षण के प्रशासन के आधार पर परीक्षण को दो भागों व्यक्तिगत परीक्षण (Individual Test) तथा सामूहिक परीक्षण (Group Test) में बाँटा जा सकता है। व्यक्तिगत परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनके द्वारा एक समय में केवल एक ही व्यक्ति की योग्यता का मापन किया जा सकता है। इसके विपरीत सामूहिक परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनके द्वारा एक ही समय में अनेक व्यक्तियों की किसी योग्यता का मापन किया जा सकता है। मौखिक परीक्षण तथा निष्पादन परीक्षण प्रायः व्यक्तिगत

परीक्षण के रूप में प्रशासित किये जाते हैं जबकि लिखित परीक्षण प्रायः सामूहिक परीक्षण के रूप में प्रशासित किये जाते हैं।

परीक्षण में प्रयुक्त सामग्री के प्रस्तुतीकरण के आधार पर भी परीक्षणों को दो भागों शाब्दिक परीक्षण (Verbal Test) तथा अशाब्दिक परीक्षण (Nonverbal Test) में बाँटा जा सकता है। शाब्दिक परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनमें प्रश्न तथा उत्तर किसी भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त किये जाते हैं जबकि अशाब्दिक परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनमें प्रश्न तथा उत्तर दोनों ही (अथवा केवल उत्तर) संकेतों या चित्रों या निष्पादन आदि भाषा रहित माध्यमों की सहायता से प्रस्तुत किये जाते हैं।

परीक्षणों में प्रयुक्त प्रश्नों के शैक्षिक उद्देश्यों के आधार पर भी परीक्षणों के विभिन्न प्रकारों में बाँटा जा सकता है। यदि परीक्षण के अधिकांश प्रश्न केवल शैक्षिक उद्देश्य को मापन कर रहे होते हैं तो परीक्षण को ज्ञान परीक्षण (Knowledge Test) कहा जा सकता है। इसके विपरीत यदि परीक्षण अवबोध का मापन करता है तो उसे बोध परीक्षण (Comprehension Test) कहा जाता है। यदि परीक्षण के द्वारा मुख्यतः छात्रों के कौशलों का मापन होता है तो परीक्षण को कौशल परीक्षण (Skill Test) कहा जाता है। यदि परीक्षण मुख्यतः नई परिस्थितियों में ज्ञान, बोध व कौशल के अनुप्रयोग क्षमता का पता लगाता है तो उसे अनुप्रयोग परीक्षण, कहा जा सकता है। बोध परीक्षण तथा कौशल परीक्षण जहाँ छात्रों की योग्यता का केवल मापन करते हैं वही अनुप्रयोग परीक्षण छात्रों को पूर्णतया नई परिस्थितियों में क्या व कैसे करना है कि परिस्थिति उपलब्ध कराकर उन्हें सीखने का अवसर भी प्रदान करते हैं। इसलिए अनुप्रयोग परीक्षणों को अन्तः अधिगम परीक्षण भी कहा जा सकता है।

परीक्षणों की रचना के आधार पर परीक्षणों को प्रमाणीकृत परीक्षण (Standardised Test) तथा अप्रमाणीकृत परीक्षण (Unstandardised Test) या अध्यापक निर्मित परीक्षण (Teacher-made Test) में बाँटा जा सकता है। प्रमाणीकृत परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनके प्रश्नों का चयन पद-विश्लेषण के आधार पर करते हैं और जिनकी विश्वसनीयता (Reliability), वैधता (Validity) तथा मानक (Norms) उपलब्ध रहते हैं। अप्रमाणीकृत परीक्षण या अध्यापक निर्मित परीक्षण वे हैं जिन्हें कोई अध्यापक अपनी आवश्यकतानुसार तात्कालिक रूप से तैयार कर लेता है।

प्रश्नों के उत्तर के फलांकन के आधार पर भी परीक्षणों को दो भागों निबन्धात्मक परीक्षण (Essay type Test) तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objective Test) में बाँटा जा सकता है। निबन्धात्मक परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनमें परीक्षार्थी प्रश्नों का उत्तर देने के लिए स्वतन्त्र होता है तथा उसे विस्तृत उत्तर प्रदान करना होता है। जबकि वस्तुनिष्ठ परीक्षार्थी को कुछ निश्चित शब्दों या वाक्यांशों की सहायता से ही प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने होते हैं तथा उत्तर देने में छूट कम हो जाती है।

परीक्षण के द्वारा मापे जा रहे गुण के आधार पर भी परीक्षणों को अनेक भागों में बाँटा जा सकता है जैसे उपलब्धि परीक्षण (Achievement Test), निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test), अभिक्षमता परीक्षण (Aptitude Test), बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test), रूचि परीक्षण (Interest Test), व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) आदि। सम्प्रति परीक्षणों की सहायता से विभिन्न विषयों में छात्रों के द्वारा अर्जित योग्यता का मापन किया जाता है। निदानात्मक परीक्षणों की सहायता से विभिन्न विषयों में छात्रों की कठिनाईयों को जानकर उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाता है। बुद्धि परीक्षण के द्वारा व्यक्ति की मानसिक योग्यताओं का पता चलता है। अभिक्षमता परीक्षण विशिष्ट क्षेत्रों में व्यक्ति की मापी क्षमता या योग्यता का मापन करते हैं। रूचि परीक्षणों के द्वारा छात्रों की शैक्षिक तथा व्यावसायिक रूचियों को मापा जाता है। व्यक्तित्व परीक्षण की सहायता से व्यक्ति के व्यक्तित्व की विशेषताओं को जाना जाता है।

परीक्षण के प्रकृति के आधार पर परीक्षणों को दो भागों सार्विक परीक्षण (Omnibus Test) तथा एकाकी परीक्षण (Single Test) में बाँटा जा सकता है। सार्विक परीक्षण एक साथ अनेक गुणों का मापन करता है जबकि एकाकी परीक्षण एक बार में केवल एक ही गुण या योग्यता का मापन करता है।

परीक्षण को पूरा करने में लगने वाले समय के आधार पर परीक्षणों को गति परीक्षण (Speed Test) तथा सामर्थ्य परीक्षण (Power Test) के रूप में भी बाँटा जा सकता है। गति परीक्षणों में सरल प्रश्न अधिक संख्या में दिये होते हैं तथा छात्रों द्वारा निश्चित समय में ही हल किये गये प्रश्नों की संख्या के आधार पर उनकी प्रश्न हल करने की गति का मापन किया जाता है। सामर्थ्य परीक्षण में कुछ कठिन प्रश्न दिये होते हैं तथा छात्रों की प्रश्नों को हल करने की सामर्थ्य का पता लगाया जाता है।

परीक्षणों का चयन परीक्षण (Selection Test) तथा हटाव परीक्षण (Elimination Test) के रूप में भी वर्गीकृत किया जा सकता है। चयन परीक्षणों का उद्देश्य व्यक्ति को सकारात्मक पक्षों अथवा श्रेष्ठ बिन्दुओं को सामने लाकर उसके चयन का मार्ग प्रशस्त करना है। उसके विपरीत हटाव परीक्षणों का उद्देश्य व्यक्ति के नकारात्मक पक्षों अथवा कमजोर बिन्दुओं को जानकर उसे चयनित न करने के प्रभावों को प्रस्तुत करना होता है। औसत कठिनाई वाला परीक्षण प्रायः चयन परीक्षण का कार्य करता है जबकि अत्यन्त कठिनाई वाले प्रश्नों से युक्त परीक्षण प्रायः हटाव परीक्षण का कार्य सम्पादित करता है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

11.परीक्षण वे परीक्षण हैं जिनके प्रश्नों का चयन पद-विश्लेषण के आधार पर करते हैं |
12. प्रमाणीकृत परीक्षण की.....,वैधता (Validity) तथा मानक (Norms) उपलब्ध रहते हैं।
13.परीक्षण वे हैं जिन्हें कोई अध्यापक अपनी आवश्यकतानुसार तात्कालिक रूप से तैयार कर लेता है।
14.अवलोकन में अवलोकनकर्ता उस समूह का अंग होता है जिसका वह अवलोकन कर रहा होता है |
15.अवलोकन में अवलोकनकर्ता समूह के क्रिया कलापों में कोई भाग नहीं लेता है।
16. प्रक्षेपीय तकनीक में व्यक्ति के सम्मुख किसीउद्दीपन को प्रस्तुत किया जाता है तथा व्यक्ति उस पर प्रतिक्रिया देता है।

7.5.3 साक्षात्कार (Interview) :

साक्षात्कार व्यक्तियों से सूचना संकलित करने का सर्वाधिक प्रचलित साधन है। विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में इसका प्रयोग किया जाता रहा है। साक्षात्कार में किसी व्यक्ति से आमने सामने बैठकर विभिन्न प्रश्न पूछे जाते हैं तथा उसके द्वारा दिये गये उत्तर के आधार पर उसकी योग्यताओं का मापन किया जाता है। आमने सामने बैठकर प्रत्यक्ष वार्तालाप करने के कारण साक्षात्कार को प्रत्यक्षालाप के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। शिक्षा संस्थाओं में छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि का मापन करने के लिए जाने वाले साक्षात्कार को मौखिकी के नाम से पुकारा जाता है:-

साक्षात्कार दो प्रकार के हो सकते हैं। ये दो प्रकार क्रमशः प्रमाणीकृत साक्षात्कार (Standardised Interview) तथा अप्रमाणीकृत साक्षात्कार (Unstandardised Interview) हैं।

प्रमाणीकृत साक्षात्कार को संरचित साक्षात्कार (Structured Interview) भी कहते हैं। इस प्रकार के साक्षात्कार में पूछे जाने वाले प्रश्नों, उनके क्रम तथा उनकी भाषा आदि को पहले से ही निश्चित कर लिया जाता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता को प्रश्नों के सम्बन्ध में कुछ (परन्तु अत्यधिक कम) स्वतन्त्रता दी जा सकती है। परन्तु यह स्वतन्त्रता के लिए साक्षात्कार प्रश्नावली को

पहले से ही सावधानी के साथ तैयार कर लिया जाता है। स्पष्टतः प्रमाणीकृत साक्षात्कार में सभी छात्रों में एक से प्रश्न, एक ही क्रम में तथा एक ही भाषा में पूछे जाते हैं।

अप्रमाणीकृत साक्षात्कार को असंरचित साक्षात्कार (Unstructured Interview) भी कहते हैं। इस प्रकार के साक्षात्कार लोचनीय तथा मुक्त होते हैं। यद्यपि इस प्रकार के साक्षात्कार में पूछे जाने वाले प्रश्न काफी सीमा तक मापन के उद्देश्यों के ऊपर निर्भर करता है। फिर भी प्रश्नों का क्रम, उनकी भाषा आदि साक्षात्कारकर्ता के ऊपर निर्भर करता है। उनमें किसी भी प्रकार के साक्षात्कार प्रश्नावली का प्रयोग नहीं किया जाता है। स्पष्टतः अप्रमाणीकृत साक्षात्कार में विभिन्न छात्रों से पूछे गये प्रश्न भिन्न भिन्न हो सकते हैं। कभी कभी परिस्थितियों के अनुसार साक्षात्कार का एक मिश्रित रूप अपनाना पडता है जिसे अर्धप्रमाणीकृत साक्षात्कार (Semi-structured Interview) अथवा अर्धसंरचित साक्षात्कार कहते हैं। इसमें साक्षात्कारकर्ता तात्कालिक परिस्थितियों के अनुरूप निर्णय लेकर पूर्व निर्धारित प्रश्नों के साथ साथ कुछ विकल्पात्मक प्रश्नों का प्रयोग कर सकता है।

उद्देश्य के अनुरूप साक्षात्कार कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे सूचनात्मक साक्षात्कार (Informative Interview), परामर्श साक्षात्कार (Counselling Interview), निदानात्मक साक्षात्कार (Diagnostic Interview), चयन साक्षात्कार (Selection Interview) तथा अनुसंधान साक्षात्कार (Reserch Interview) आदि। कुछ विद्वान साक्षात्कार को औपचारिक साक्षात्कार (Formal Interview) तथा अनौपचारिक साक्षात्कार (Informal Interview) में भी बाँटते हैं जबकि कुछ विद्वान साक्षात्कार को व्यक्तिगत साक्षात्कार (Individual Interview) तथा सामूहिक साक्षात्कार (Group Interview) में बाँटते हैं। व्यक्तिगत साक्षात्कार में एकबार में केवल एक ही व्यक्ति का साक्षात्कार लिया जाता है जबकि सामूहिक साक्षात्कार में एक साथ कई व्यक्तियों को बैठा लिया जाता है। सामूहिक साक्षात्कारों से व्यक्ति द्वारा प्रश्नों के उत्तरों को शीघ्रता से देने का पता चलता है। सामूहिक विचार-विमर्श भी सामूहिक साक्षात्कार का एक प्रकार है।

प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके सूचनायें संकलित करने की दृष्टि से साक्षात्कार अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। साक्षात्कार के द्वारा अनेक ऐसी गुप्त तथा व्यक्तिगत सूचनायें प्राप्त हो सकती हैं जो मापने के अन्य उपकरणों से प्रायः प्राप्त नहीं हो पाती है। किसी व्यक्ति के अतीत को जानने के अथवा उसके गोपनीय अनुभवों की झलक प्राप्त करने के कार्य में साक्षात्कार एक उपयोगी भूमिका अदा करता है। बहुपक्षीय तथा गहन अध्ययन हेतु साक्षात्कार बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त अशिक्षितों तथा बालकों से सूचना प्राप्त करने की दृष्टि से भी साक्षात्कार अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। साक्षात्कार मे साक्षात्कारकर्ता आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकता है जो अन्य मापन उपकरण में सम्भव नहीं होता है।

साक्षात्कार की सम्पूर्ण प्रक्रिया को तीन भागों में (1) साक्षात्कार का प्रारम्भ (2) साक्षात्कार का मुख्य भाग तथा (3) साक्षात्कार का समापन में बाँटा जा सकता है। साक्षात्कार के प्रारम्भ में साक्षात्कार लेने वाला व्यक्ति साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति से आत्मीयता स्थापित करता है। इसके लिए साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति का स्वागत करते हुए परिचय प्राप्त करना होता है तथा यह विश्वास दिलाना होता है कि उसके द्वारा दी गई सूचनायें पूर्णतया गोपनीय रहेंगी। आत्मीयता स्थापित हो जाने के उपरान्त साक्षात्कार का मुख्य भाग आता है जिसमें वांछित सूचनाओं का संकलन किया जाता है।

प्रश्न करते समय साक्षात्कारकर्ता को ध्यान रखना चाहिए कि (1) प्रश्न क्रमबद्ध हों, (2) प्रश्न सरल व स्पष्ट हों, (3) साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति को अपनी अभिव्यक्ति का उचित अवसर मिल सके, तथा (5) साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के द्वारा दिये गये उत्तरों के धैर्य व सहानुभूति के साथ सुना जाये। वांछित सूचनाओं की प्राप्ति के उपरान्त साक्षात्कार को इस प्रकार से समाप्त किया जाना चाहिए कि साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के संतोष का अनुभव साक्षात्कारकर्ता को हो। साक्षात्कार की समाप्ति मधुर वातावरण में धन्यवाद ज्ञापन के साथ करनी चाहिए। किन्हीं बातों के विस्मरण की सम्भावना से बचने के लिए साक्षात्कार के साथ-साथ अथवा तत्काल उपरान्त मुख्य बातों को लिख देना चाहिए एवं साक्षात्कार के उपरान्त यथाशीघ्र साक्षात्कारकर्ता को अपना प्रतिवेदन तैयार कर लेना चाहिए।

7.5.4 अनुसूची (Schedule) :

अनुसूची समक संकलन हेतु बहुतायत से प्रयुक्त होने वाला एक मापन उपकरण है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। सामान्यतः अनुसूची की पूर्ति समक संकलन करने वाला व्यक्ति स्वयं करता है। अनुसंधानकर्ता/मापनकर्ता उत्तरदाता से प्रश्न पूछता है, आवश्यकता होने पर प्रश्न को स्पष्ट करता है तथा प्राप्त उत्तरों को अनुसूची में अंकित करता जाता है। परन्तु कभी कभी अनुसूची की पूर्ति उत्तरदाता से भी कराई जाती है। वेबस्टर के अनुसार, अनुसूची एक औपचारिक सूची (Formal List) केटलॉग अथवा सूचनाओं की सूची होती है। अनुसूची को औपचारिक तथा प्रमाणीकृत जाँच कार्यों में प्रयुक्त होने वाली गणनात्मक प्रविधि के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है जिसका उद्देश्य मात्रात्मक संमकों को संकलन कर व्यवस्थित एवं सुविधाजनक बनाना होता है। अवलोकन तथा साक्षात्कार को वस्तुनिष्ठ व प्रमाणिक बनाने में अनुसूचियों सहायक सिद्ध होती है। ये एक समय में किसी एक बात का अवलोकन या जानकारी प्राप्त करने पर बल देता है जिसके फलस्वरूप अवलोकन से प्राप्त जानकारी अधिक सटीक होती है। अनुसूची काफी सीमा तक प्रश्नावली के समान होती है तथा इन दोनों में विभेद करना एक कठिन कार्य होता है। अनुसूचियों अनेक प्रकार की हो सकती हैं जैसे अवलोकन अनुसूची(Observation Schedule), साक्षात्कार

अनुसूची (Interview Schedule), दस्तावेज अनुसूची (Document Schedule), मूल्यांकन अनुसूची (Evaluation Schedule), निर्धारण अनुसूची (Rating Schedule) आदि। परन्तु यहाँ यह स्पष्ट करना उचित ही होगा कि ये अनुसूचियाँ परस्पर एक दूसरे से पूर्णतया अपवर्जित नहीं हैं। जैसे साक्षात्कार अनुसूची में अवलोकन के आधार पर पूर्ति किये जाने वाले पद भी हो सकते हैं। अवलोकन अनुसूची व्यक्तियों अथवा समूहों की क्रियाओं तथा सामाजिक परिस्थितियों को जानने के लिए एक समान आधार प्रदान करती है। इस प्रकार की अनुसूचियों की सहायता से एक साथ अनेक अवलोकनकर्ता एकरूपता के साथ बड़े समूह से आंकड़े संकलित कर सकते हैं।

साक्षात्कार अनुसूचियों का प्रयोग अर्ध-प्रमाणीकृत तथा प्रमाणीकृत साक्षात्कारों में किया जाता है। ये साक्षात्कार को प्रमाणीकृत बनाने में सहायक होती है।

दस्तावेजों का प्रयोग व्यक्ति इतिहासों से सम्बन्धित दस्तावेजों तथा अन्य सामग्री से संमक संकलित करने हेतु किया जाता है। इस प्रकार की अनुसूचियों में उन्हीं बिन्दुओं/पदों को सम्मिलित किया जाता है जिनके सम्बन्ध में सूचनायें विभिन्न व्यक्ति इतिहासों से समान रूप से प्राप्त हो सके।

अतः अपराधी बच्चों के व्यक्ति इतिहासों का अध्ययन करने के लिए बनायी गयी अनुसूची में उन्हीं बातों को सम्मिलित किया जायेगा जो अध्ययन में सम्मिलित सभी बच्चों के व्यक्ति इतिहासों से ज्ञात हो सकती है। जैसे अपराध शुरू करने की आयु, माता-पिता का शिक्षा स्तर, परिवार का सामाजिक आर्थिक स्तर, अपराधों की प्रकृति व आवृत्ति आदि।

मूल्यांकन अनुसूची (Evaluation Schedule) का प्रयोग एक साथ अनेक स्थानों पर संचालित समान प्रकार के कार्यक्रमों का मूल्यांकन करने के लिए आवश्यक सूचनायें संकलित करने के लिए किया जाता है। जैसे यू0जी0सी द्वारा अनेक विश्वविद्यालयों में एक साथ संचालित एकेडमिक स्टाफ कॉलेज योजना का मूल्यांकन करने के लिए विभिन्न एकेडमिक स्टाफ कॉलेजों के कार्यक्रम सम्बन्धी विभिन्न सूचनाओं को संकलित करने के लिए मूल्यांकन अनुसूची का प्रयोग किया जा सकता है।

निर्धारण अनुसूची (Rating Schedule) का प्रयोग किसी गुण की मात्रा का निर्धारण करने अथवा अनेक गुणों की तुलनात्मक उपस्थिति को निर्धारित करने के लिए किया जाता है। निर्धारण अनुसूची वास्तव में निर्धारण मापनी का ही एक रूप है।

7.5.5 प्रश्नावली (Questionnaire) :

प्रश्नावली प्रश्नों का एक समूह है जिसे उत्तरदाता के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है तथा वह उनका उत्तर देता है। प्रश्नावली प्रमाणीकृत साक्षात्कार का लिखित रूप है। साक्षात्कार में एक एक करके प्रश्न

मौखिक रूप में पूछे जाते हैं तथा उनका उत्तर भी मौखिक रूप में प्राप्त होता है जबकि प्रश्नावली प्रश्नों का एक व्यवस्थित संचयन है। प्रश्नावली एक साथ अनेक व्यक्तियों को दी जा सकती है जिसे कम समय, कम व्यय तथा कम श्रम में अनेक व्यक्तियों से प्रश्नों का उत्तर प्राप्त किया जा सकता है।

प्रश्नावली तैयार करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए-

- (1) प्रश्नावली के साथ मुख्यपत्र अवश्य संलग्न करना चाहिए जिसमें प्रश्नावली को प्रशासित करने के उद्देश्य का स्पष्ट उल्लेख किया गया हो।
- (2) प्रश्नावली के प्रारम्भ में आवश्यक निर्देश अवश्य देने चाहिए जिनमें उत्तर को अंकित करने की विधि स्पष्ट की गई हो।
- (3) प्रश्नावली में सम्मिलित प्रश्न आकार की दृष्टि से छोटे और बोधगम्य होने चाहिए।
- (4) प्रत्येक प्रश्न में केवल एक ही विचार को प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
- (5) प्रश्नावली में प्रयुक्त तकनीकी/जटिल शब्दों के अर्थ को स्पष्ट कर देना चाहिए।
- (6) प्रश्न में एक साथ दुहरी नकारात्मकता का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- (7) प्रश्नों के उत्तर देने में उत्तरदाता को सरलता होनी चाहिए।
- (8) प्रश्नावली में सम्मिलित प्रश्नों के उत्तरों का स्वरूप इस प्रकार का होना चाहिए कि उनका संख्यात्मक विश्लेषण किया जा सके।
- (9) प्रश्नावली का आकार बहुत अधिक बड़ा नहीं होना चाहिए।

प्रश्नावली प्रत्यक्ष संपर्क के द्वारा भी प्रशासित की जा सकती है तथा डाक द्वारा भेजकर भी आवश्यक सूचनायें प्राप्त की जा सकती हैं। उत्तर प्रदान करने के आधार पर प्रश्नावली दो प्रकार की हो सकती है। ये दो प्रकार प्रतिबंधित प्रश्नावली तथा मुक्त प्रश्नावली हैं। प्रतिबंधित प्रश्नावली में दिए गए कुछ उत्तरों में से किसी एक उत्तर का चयन करना होता है जबकि मुक्त प्रश्नावली में उत्तरदाता को अपने शब्दों में तथा अपने विचारानुकूल उत्तर देने की स्वतंत्रता होती है। जब प्रश्नावली में दोनों ही प्रकार के प्रश्न होते हैं तब उसे मिश्रित प्रश्नावली कहते हैं।

7.5.6 निर्धारण मापनी (Rating Scale) :

निर्धारण मापनी किसी व्यक्ति के गुणों का गुणात्मक विवरण प्रस्तुत करती है। निर्धारण मापनी की सहायता से व्यक्ति में उपस्थित गुणों की सीमा अथवा गहनता या आवृत्ति को मापने का प्रयास किया जाता है। निर्धारण मापनी में उत्तर की अभिव्यक्ति के लिए कुछ संकेत(अथवा अंक) होते हैं। ये संकेत (अथवा अंक) कम से अधिक अथवा अधिक से कम के सातत्य में क्रमबद्ध रहते हैं। उत्तरकर्ता को मापे जाने वाले गुण के आधार पर इन संकेतों (अथवा अंको) में किसी एक ऐसे संकेत का चयन करना होता है जो छात्र में उपस्थित उस गुण की सीमा को अभिव्यक्त कर सके। निर्धारण मापनी अनेक प्रकार के हो सकती है ये प्रकार क्रमशः चैकलिस्ट (Check List) , आंकिक मापनी(Numerical Scale) , ग्राफिक मापनी (Graphical Scale), क्रमिक मापनी (Ranking Scale), स्थानिक मापनी (Position Scale) तथा बाह्य चयन मापनी (Forced-choice Scale) हैं।

जब किसी व्यक्ति में गुण की उपस्थिति या अनुपस्थिति का ज्ञान करना होता है तब चैकलिस्ट (Check List) का प्रयोग किया जाता है। चैकलिस्ट में कुछ कथन दिये होते हैं जो गुण की उपस्थिति/ अनुपस्थिति को इंगित करते हैं। निर्णायक को कथनों के सही या गलत होने की स्थिति को सही या गलत का चिन्ह लगाकर बताना होता है। निर्णायक के उत्तरों के आधार पर व्यक्ति में मौजूद गुण की मात्रा का पता लगाया जाता है।

आंकिक मापनी (Numerical Scale) में दिये गये कथनों के हाँ या नहीं के रूप में उत्तर नहीं होते हैं बल्कि प्रत्येक कथन के लिए कुछ बिन्दुओं (जैसे 3, 5, या 7 आदि) पर कथन के प्रति प्रयोज्यकर्ता की सहमति या असहमति की सीमा ज्ञात की जाती है। इस प्रकार से निर्णयकर्ता से प्रत्येक कथन के प्रति उसकी सहमति/असहमति की सीमा को जान लिया जाता है तथा इन सबका योग करके गुण की मात्रा को ज्ञात कर लिया जाता है।

ग्राफिक मापनी (Graphical Scale) वस्तुतः आंकिक मापनी के समान होती है। इसमें सहमति/असहमति की सीमाओं को कुछ बिन्दुओं से प्रकट न करके एक क्षैतिज रेखा जिसे सातत्य कहते हैं तथा जो सहमति/असहमति के दो छोरों को बताती है, पर निशाना लगाकर अभिव्यक्त किया जाता है इन क्षैतिज रेखाओं पर निर्णयकर्ता के द्वारा लगाये गये निशानों की स्थिति के आधार पर गुण की मात्रा का ज्ञान हो जाता है।

क्रमिक मापनी (Ranking Scale) में निर्णयकर्ता से किसी गुण की मात्रा के विषय में जानकारी न लेकर उपगुणों को क्रमबद्ध किया जाता है। व्यक्ति में उपस्थित गुणों की मात्रा के आधार

पर इन गुणों को क्रमबद्ध किया जाता है। कभी-कभी इस मापनी की सहायता से विभिन्न वस्तुओं या गुणों के सापेक्षिक महत्व को भी जाना जाता है।

स्थानिक मापनी (Position Scale) की सहायता से विभिन्न वस्तुओं व्यक्तियों या कथनों को किसी समूह विशेष के संदर्भ में स्थानसूचक मान जैसे दशांक या शतांक आदि प्रदान किये जाते हैं।

बाह्य चयन मापनी (Forced-choice Scale) में प्रत्येक प्रश्न के लिए दो या दो से अधिक उत्तर होते हैं तथा व्यक्ति को इनमें से किसी एक उत्तर का चयन अवश्य करना पड़ता है।

7.5.7 प्रक्षेपीय तकनीक (Projective Technique) :

प्रक्षेपीय तकनीक की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता व्यक्ति के अचेतन पक्ष का मापक है। प्रक्षेपण से अभिप्राय उस अचेतन प्रक्रिया से है जिसमें व्यक्ति अपने मूल्यों, दृष्टिकोणों, आवश्यकताओं, इच्छाओं, संवेगों आदि को अन्य वस्तुओं अथवा अन्य व्यक्तियों के माध्यम से अपरोक्ष [ग] से व्यक्त करता है। प्रक्षेपीय तकनीक में व्यक्ति के सम्मुख किसी ऐसी उद्दीपक परिस्थिति को प्रस्तुत किया जाता है जिसमें वह अपने विचारों, दृष्टिकोणों, संवेगों, गुणों, आवश्यकताओं आदि को उस परिस्थिति में आरोपित करके अभिव्यक्त कर दे। प्रक्षेपीय तकनीक में प्रस्तुत किए जाने वाले उद्दीपन अंशरचित प्रकृति के होते हैं तथा इन पर व्यक्ति के द्वारा की गयी क्रियाएं सही या गलत न होकर व्यक्ति की सहज व्याख्यायें होती हैं। प्रक्षेपीय तकनीकों में व्यक्ति द्वारा दी जाने वाली प्रतिक्रिया के आधार पर उन्हें पाँच भागों साहचर्य तकनीकें (Association Technique), रचना तकनीकें (Construction Technique), पूर्ति तकनीकें (Completion Technique) तथा अभिव्यक्त तकनीकें (Expression Technique) में बाँटा जा सकता है।

साहचर्य तकनीक (Association Technique) में व्यक्ति के सम्मुख कोई उद्दीपक प्रस्तुत किया जाता है तथा व्यक्ति को उस उद्दीपक से सम्बन्धित प्रतिक्रिया देखी होती है। व्यक्ति के द्वारा इस प्रकार से प्रस्तुत की गयी प्रतिक्रियाओं के विश्लेषण से उससे व्यक्तित्व को जाना जाता है। उद्दीपकों के आधार पर साहचर्य तकनीकें कई प्रकार की हो सकती हैं, जैसे शब्द साहचर्य तकनीक, चित्र साहचर्य तकनीक, तथा वाक्य साहचर्य तकनीक में क्रमशः शब्दों चित्रों या वाक्यों को प्रस्तुत किया जाता है तथा उसके ऊपर व्यक्ति की प्रतिक्रिया प्राप्त की जाती है।

रचना तकनीक (Construction Technique) में व्यक्ति के सामने कोई उद्दीपन प्रस्तुत कर दिया जाता है तथा उससे कोई रचना बनाने के लिए कहा जाता है। व्यक्ति के द्वारा तैयार की गयी रचना

का विश्लेषण करके उसके व्यक्तित्व को जाना जाता है। प्रायः उद्दीपन के आधार पर कहानी लिखाकर या चित्र बनाकर इस तकनीक का प्रयोग किया जाता है।

पूर्ति तकनीक (Completion Technique) में किसी अधूरी रचना के उद्दीपन की तरह से प्रस्तुत किया जाता है तथा व्यक्ति को उस अधूरी रचना को पूरा करना होता है। व्यक्ति के द्वारा अधूरी रचना में पूर्ति में प्रयुक्त किये जाने वाले शब्द या भावों को विश्लेषण कर उसके व्यक्तित्व का अनुमान लगाया जाता है। वाक्यपूर्ति या चित्रपूर्ति इस तकनीक के प्रयोग के कुछ [ग] हैं।

क्रम तकनीक में व्यक्ति के समक्ष उद्दीपन के रूप में कुछ शब्द, कथन, भावविचार, चित्र, वस्तुएं आदि रख दी जाती हैं तथा उससे उन्हें किसी क्रम में व्यवस्थित करने के लिए कहा जाता है। व्यक्ति के द्वारा बनाये गये क्रम के विश्लेषण से उसके सम्बन्ध में जानकारी मिलती है।

अभिव्यक्त तकनीक (Expression Technique) के अन्तर्गत व्यक्ति को प्रस्तुत किये गये उद्दीपन पर अपनी प्रतिक्रिया विस्तार से अभिव्यक्त करनी पड़ती है। व्यक्ति के द्वारा प्रस्तुत की गयी अभिव्यक्ति के विश्लेषण से उसके व्यक्तित्व व अन्य गुणों का पता चल जाता है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

17.सामाजिक पसन्द तथा समूहगत विशेषताओं के मापन की एक विधि है।
18. प्रक्षेपीय तकनीक की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता व्यक्ति केपक्ष का मापक है।
19.प्रमाणीकृत साक्षात्कार का लिखित रूप है।
20.की पूर्ति संमक संकलन करने वाला व्यक्ति स्वयं करता है।

7.6 सारांश

गुणात्मक आंकड़े (Qualitative Data) : गुणात्मक आंकड़े गुण के विभिन्न प्रकारों को इंगित करते हैं। गुणात्मक आंकड़े, गुणात्मक चरों से सम्बन्धित होते हैं। उनके आधार पर समूह को कुछ स्पष्ट वर्गों या श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति इनमें से किसी एक वर्ग या श्रेणी का सदस्य होता है।

मात्रात्मक आंकड़े (Quantitative Data): चर के गुणों की मात्रा को मात्रात्मक आंकड़ों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। इन आंकड़ों का संबंध मात्रात्मक चरों पर समूह के विभिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न मात्रा में मान प्राप्त कर सकते हैं।

सतत् आंकड़े: सतत् आंकड़े वे आंकड़े हैं जिनके लिए किन्हीं भी दो मानों के बीच का प्रत्येक मान धारण करना संभव होता है।

अनुपातिक पैमाना (Ratio Scale): यह मापन सर्वाधिक परिमार्जित स्तर का मापन है। इस प्रकार के मापन में अन्तरित मापन के सभी गुणों के साथ-साथ परम शून्य (Absolute Zero) या वास्तविक शून्य (Real Zero) की संकल्पना निहित रहती है।

आंकड़े के संग्रहण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न तकनीकों को पाँच मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है। ये पाँच भाग निम्नवत हैं-

- (1) अवलोकन तकनीक (Observation Technique)
- (2) स्व-आख्या तकनीक (Self Report Technique)
- (3) परीक्षण तकनीक (Testing Technique)
- (4) समाजमितीय तकनीक (Sociometric Technique)
- (5) प्रक्षेपीय तकनीक (Projective Technique)

अवलोकन: अवलोकन व्यक्ति के व्यवहार के मापन की अत्यन्त प्राचीन विधि है। व्यक्ति अपने आस-पास घटित होने वाली विभिन्न क्रियाओं तथा घटनाओं का अवलोकन करता रहता है। मापन के एक उदाहरण के रूप में अवलोकन का संबंध किसी व्यक्ति अथवा छात्र के बाह्य व्यवहार को देखकर उसके व्यवहार का वर्णन करने से है।

परीक्षण: परीक्षण वे उपकरण हैं जो किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के किसी समूह के व्यवहार का क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित ज्ञान प्रदान करते हैं। परीक्षण से तात्पर्य किसी व्यक्ति को ऐसी परिस्थितियों में रखने से है जो उसके वास्तविक गुणों को प्रकट कर दे। विभिन्न प्रकार के गुणों को मापने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

साक्षात्कार : साक्षात्कार व्यक्तियों से सूचना संकलित करने का सर्वाधिक प्रचलित साधन है। विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में इसका प्रयोग किया जाता रहा है। साक्षात्कार में किसी व्यक्ति से

आमने सामने बैठकर विभिन्न प्रश्न पूछे जाते हैं तथा उसके द्वारा दिये गये उत्तर के आधार पर उसकी योग्यताओं का मापन किया जाता है।

अनुसूची : अनुसूची समंक संकलन हेतु बहुतायत से प्रयुक्त होने वाला एक मापन उपकरण है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। सामान्यतः अनुसूची की पूर्ति समंक संकलन करने वाला व्यक्ति स्वयं करता है। अनुसंधानकर्ता/मापनकर्ता उत्तरदाता से प्रश्न पूछता है, आवश्यकता होने पर प्रश्न को स्पष्ट करता है तथा प्राप्त उत्तरों को अनुसूची में अंकित करता जाता है।

प्रश्नावली : प्रश्नावली प्रश्नों का एक समूह है जिसे उत्तरदाता के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है तथा वह उनका उत्तर देता है। प्रश्नावली प्रमाणीकृत साक्षात्कार का लिखित रूप है। साक्षात्कार में एक एक करके प्रश्न मौखिक रूप में पूछे जाते हैं तथा उनका उत्तर भी मौखिक रूप में प्राप्त होता है जबकि प्रश्नावली प्रश्नों का एक व्यवस्थित संचयन है।

निर्धारण मापनी : निर्धारण मापनी किसी व्यक्ति के गुणों का गुणात्मक विवरण प्रस्तुत करती है। निर्धारण मापनी की सहायता से व्यक्ति में उपस्थित गुणों की सीमा अथवा गहनता या आवृत्ति को मापने का प्रयास किया जाता है। निर्धारण मापनी में उत्तर की अभिव्यक्ति के लिए कुछ संकेत (अथवा अंक) होते हैं। ये संकेत (अथवा अंक) कम से अधिक अथवा अधिक से कम के सातत्य में क्रमबद्ध रहते हैं।

7.7 शब्दावली

गुणात्मक आंकड़े (Qualitative Data) : गुणात्मक आंकड़े गुण के विभिन्न प्रकारों को इंगित करते हैं। गुणात्मक आंकड़े, गुणात्मक चरों से सम्बन्धित होते हैं। उनके आधार पर समूह को कुछ स्पष्ट वर्गों या श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति इनमें से किसी एक वर्ग या श्रेणी का सदस्य होता है।

मात्रात्मक आंकड़े (Quantitative Data): चर के गुणों की मात्रा को मात्रात्मक आंकड़ों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। इन आंकड़ों का संबंध मात्रात्मक चरों पर समूह के विभिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न मात्रा में मान प्राप्त कर सकते हैं।

नामित पैमाना (Nominal Scale) : सबसे कम परिमार्जित स्तर का मापन। इसमें व्यक्तियों अथवा वस्तुओं को उनके किसी गुण अथवा विशेषता के प्रकार के आधार पर कुछ वर्गों अथवा समूहों में विभक्त कर दिया जाता है।

क्रमित पैमाना (Ordinal Scale): इस प्रकार के मापन में व्यक्तियों अथवा वस्तुओं को उनके किसी गुण के मात्रा के आधार पर कुछ ऐसे वर्गों में विभक्त कर दिया जाता है जिनमें एक स्पष्ट अन्तर्निहित क्रम निहित होता है।

अन्तरित पैमाना (Interval Scale): नामित व क्रमित मापन से अधिक परिमार्जिता अन्तरित मापन गुण की मात्रा अथवा परिमाण पर आधारित होता है। इस प्रकार के मापन में व्यक्तियों अथवा वस्तुओं में विद्यमान गुण की मात्रा को इस प्रकार ईकाइयों के द्वारा व्यक्त किया जाता है कि किन्हीं दो लगातार ईकाइयों में अन्तर समान रहता है।

अनुपातिक पैमाना (Ratio Scale): सर्वाधिक परिमार्जित स्तर का मापन। इस प्रकार के मापन में अन्तरित मापन के सभी गुणों के साथ-साथ परम शून्य (Absolute Zero) या वास्तविक शून्य (Real Zero) की संकल्पना निहित रहती है।

परीक्षण: परीक्षण से तात्पर्य किसी व्यक्ति को ऐसी परिस्थितियों में रखने से है जो उसके वास्तविक गुणों को प्रकट कर दे। विभिन्न प्रकार के गुणों को मापने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

साक्षात्कार : साक्षात्कार में किसी व्यक्ति से आमने सामने बैठकर विभिन्न प्रश्न पूछे जाते हैं तथा उसके द्वारा दिये गये उत्तर के आधार पर उसकी योग्यताओं का मापन किया जाता है।

अनुसूची : एक मापन उपकरण जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। सामान्यतः अनुसूची की पूर्ति संमक संकलन करने वाला व्यक्ति स्वयं करता है।

प्रश्नावली : प्रश्नावली प्रश्नों का एक समूह है जिसे उत्तरदाता के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। प्रश्नावली प्रश्नों का एक व्यवस्थित संचयन है।

7.8 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर

1. नामित 2. खण्डित 3. सतत् 4. क्रमित 5. अन्तरित 6. आभासी 7. अनुपातिक 8. अनुपातिक 9. क्रमित 10. अनुपातिक 11. प्रमाणीकृत 12. विश्वसनीयता (Reliability) 13. अप्रमाणीकृत 14. सहभागिक 15. असहभागिक 16. असंरचित 17. समाजमिति 18. अचेतन 19. प्रश्नावली 20. अनुसूची

7.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री

1. Van Dalen, Deo Bold V. (1979). Understanding Educational Research, New York MC Graw Hill Book Co.
2. सिंह, ए०के० (2007) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास
3. गुप्ता, एस०पी० (2008) : मापन एवं मूल्यांकन, इलाहाबाद, शारदा पब्लिकेशन
4. शर्मा, आर०ए० (2001) : शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, मेरठ, आर०लाल० पब्लिकेशन्स
5. राय, पारसनाथ (2001) : अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स

7.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. आंकड़ों के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
2. मापन के चारों पैमानों की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।
3. मापन के चारों पैमानों यथा नामित स्तर, क्रमित स्तर, अन्तरित स्तर, तथा आनुपातिक स्तर में विभेद कीजिए।
4. आंकड़े संग्रहण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न तकनीकों को वर्गीकृत कर उनका वर्णन कीजिए।
5. आंकड़े (Qualitative Data) संग्रहण हेतु विभिन्न शोध उपकरणों की व्याख्या कीजिए।

इकाई संख्या 8 : वर्णनात्मक सांख्यिकी: केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक व प्रसार : माध्य, मध्यका, बहुलक, मानक विचलन और चतुर्थान्स विभाजन (Measures of Central Tendency and Dispersion: Mean, Median and Mode, Standered devition and Quartile devition)

इकाई की रूपरेखा

- 8.1 प्रस्तावना
- 8.2 उद्देश्य
- 8.3 सांख्यिकी का अर्थ
- 8.4 वर्णनात्मक सांख्यिकी
- 8.5 केन्द्रीय प्रवृत्ति का अर्थ एवं परिभाषा
- 8.6 केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के उद्देश्य व कार्य
- 8.7 आदर्श माध्य के लक्षण
- 8.8 सांख्यिकीय माध्य के विविध प्रकार
- 8.9 माध्य
- 8.10 माध्य के प्रकार
- 8.11 सरल माध्य ज्ञात करने की विधि

-
- 8.12 मध्यका
 - 8.13 मध्यका की गणना
 - 8.14 मध्यका के सिद्धान्त पर आधारित अन्य माप
 - 8.15 बहुलक
 - 8.16 बहुलक की गणना
 - 8.17 समान्तर माध्य, मध्यका तथा बहुलक के बीच संबंध
 - 8.18 चतुर्थक विचलन या अर्द्ध अन्तर-चतुर्थक विस्तार
 - 8.19 प्रमाप विचलन (Standard Deviation)
 - 8.20 सारांश
 - 8.21 शब्दावली
 - 8.22 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
 - 8.23 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री
 - 8.24 निबंधात्मक प्रश्न
-

8.1 प्रस्तावना :

हमारे जीवन में संख्याओं की भूमिका तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। ज्ञान, विज्ञान, समाज और राजनीति का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जो संख्यात्मक सूचना के प्रवेश से अछूता रह गया हो। ऑकड़ों का संकलन, सूचनाओं का प्रस्तुतीकरण, सम्भावनाओं का पता लगाना तथा इनके आधार पर निष्कर्ष निकालना आधुनिक समाज में एक आम बात हो गई है। शैक्षिक विश्लेषण, शैक्षिक सम्प्राप्ति (उपलब्धि परीक्षण), बुद्धि परीक्षण, व्यक्तित्व मूल्यांकन आदि कुछ ऐसे उदाहरण हैं जिन पर 'सांख्यिकीय' विधियों के प्रयोग के अभाव में विचार करना भी सम्भव नहीं है। इस प्रकार शोध एवं विकास की शायद ही कोई ऐसी शाखा हो, जिसे सांख्यिकीय विधियों के प्रयोग के बिना संचालित किया जा सके। कार्य के आधार पर सांख्यिकी को मुख्यतः दो भागों में बांटा जाता है: वर्णनात्मक सांख्यिकी (Descriptive Statistics) तथा अनुमानिकी सांख्यिकी (Inferential Statistics)। प्रस्तुत इकाई में आप सांख्यिकी का अर्थ तथा वर्णनात्मक सांख्यिकी के रूप में केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों (Measures of Central Tendency) का अध्ययन करेंगे।

11.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययनोपरांत आप-

- सांख्यिकी का अर्थ बता पायेंगे।
- वर्णनात्मक सांख्यिकी का अर्थ बता पायेंगे।
- वर्णनात्मक सांख्यिकी के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
- वर्णनात्मक सांख्यिकी के संप्रत्यय की व्याख्या कर सकेंगे।
- केन्द्रीय प्रवृत्ति के विभिन्न मापकों का परिकलन कर सकेंगे।
- केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों विभिन्न मापकों की तुलना कर सकेंगे।

8.3 सांख्यिकी का अर्थ (Meaning of Statistics):

अंग्रेजी भाषा का शब्द 'स्टैटिस्टिक्स' (Statistics) जर्मन भाषा के शब्द 'स्टैटिस्टिक' (Statistik), लेटिन भाषा के शब्द 'Status' या इटैलियन शब्द 'स्टैटिस्टा' (Statista) से बना है। वैसे 'स्टैटिस्टिक्स' (Statistics) शब्द का प्रयोग सन् 1749 में जर्मनी के प्रसिद्ध गणितज्ञ 'गॉट फ्रायड आकेनवाल' द्वारा किया गया था जिन्हें सांख्यिकी का जन्मदाता भी कहा जाता है।

डा० ए०एल० बाउले (Dr. A.L. Bowley) के अनुसार :- समक किसी अनुसंधान से संबंधित विभाग में तथ्यों का संख्यात्मक विवरण हैं जिन्हें एक दूसरे से संबंधित रूप से प्रस्तुत किया जाता है (Statistics are numerical statement of facts in any department of enquiry placed in relation to each other)।

यूल व कैण्डाल के अनुसार:- "समकों से अभिप्राय उन संख्यात्मक तथ्यों से जो पर्याप्त सीमा तक अनेक कारणों से प्रभावित होत हैं।"

बॉडिंगटन के अनुसार:- "सांख्यिकी अनुमानों और संभावनाओं का विज्ञान है। (Statistics is the Science of estimates and probabilities)

सांख्यिकी के इन परिभाषाओं से निम्नलिखित विशेषताएँ प्रकट होती हैं:-

-
- (i) "सांख्यिकी गणना का विज्ञान है। (Statistics is the science of counting)"
- (ii) "सांख्यिकी को सही अर्थ में माध्यों का विज्ञान कहा जा सकता है। (Statistics may rightly be called the science of Averages)"
- (iii) "सांख्यिकी समाजिक व्यवस्था को सम्पूर्ण मानकर उनके सभी प्रकटीकरणों में माप करने का एक विज्ञान है। (Statistics is the science of measurement of social organism regarded as a whole in all its manifestations) "

8.4 वर्णनात्मक सांख्यिकी (Descriptive Statistics) :

इनसे किसी क्षेत्र के भूतकाल तथा वर्तमान काल में संकलित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है और इनका उद्देश्य विवरणात्मक सूचना प्रदान करना होता है। अतः ये समंक ऐतिहासिक महत्व रखते हैं। केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप, विवरणात्मक या वर्णनात्मक सांख्यिकी के उदाहरण हैं।

8.5 केन्द्रीय प्रवृत्ति का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Central Tendency) :

एक समंक श्रेणी की केन्द्रीय प्रवृत्ति का आशय उस समंक श्रेणी के अधिकांश मूल्यों की किसी एक मूल्य के आस-पास केन्द्रित होने की प्रवृत्ति से है, जिसे मापा जा सके और इस प्रवृत्ति के माप को ही माध्य कहते हैं। माध्य को केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप इसलिए कहा जाता है क्योंकि व्यक्तिगत चर मूल्यों का जमाव अधिकतर उसी के आस-पास होता है। इस प्रकार माध्य सम्पूर्ण समंक श्रेणी का एक प्रतिनिधि मूल्य होता है और इसलिए इसका स्थान सामान्यतः श्रेणी के मध्य में ही होता है। दूसरे शब्दों में, सांख्यिकीय माध्य को केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह समग्र के उस मूल्य को दर्शाता है, जिसके आस-पास समग्र की शेष इकाईयों के केन्द्रित होने की प्रवृत्ति पायी जाती है।

यूल व केण्डाल (Yule and Kendal) के शब्दों में:- "किसी आवृत्ति वितरण की अवस्थिति या स्थिति के माप माध्य कहलाते हैं।"

(Measures of location or position of a frequency distribution are called averages)

क्रॉक्सटन एवं काउडेन (Croxtan and Cowden) के अनुसार:- "माध्य समकों के विस्तार के अन्तर्गत स्थित एक ऐसा मूल्य है जिसका प्रयोग श्रेणी के सभी मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने के लिये किया जाता है। समंक श्रेणी के विस्तार के मध्य में स्थित होने के कारण ही माध्य को केन्द्रीय मूल्य का माप भी कहा जाता है।"

(An average is single value within the range at the data which is used to represent all the values in the series. Since an average is somewhere within the range of the data, it is some times called a measure of central value)

डा० बाउले के अनुसार:- "सांख्यिकी को वास्तव में माध्यों का विज्ञान कहा जा सकता है।" (Statistics may rightly be called the science of average)

8.6 केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के उद्देश्य व कार्य (Objectives and functions of Measures of Central Tendency) :

केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के उद्देश्य एवं कार्य निम्न प्रकार हैं-

1. **सामग्री को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना:-** माध्य द्वारा हम संग्रहीत सामग्री को संक्षेप में प्रस्तुत करते हैं, जिसे एक समान व्यक्ति शीघ्रता व सरलता से समझ कर स्मरण रख सकता है।
2. **तुलनात्मक अध्ययन:-** माध्यों का प्रयोग दो या दो से अधिक समूहों के संबंध में निश्चित सूचना देने के लिए किया जाता है। इस सूचना के आधार पर हम उन समूहों का पारस्परिक तुलनात्मक अध्ययन सरलता से कर सकते हैं। उदाहरणार्थ: हम दो कक्षाओं के छात्रों की अंकों की तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर उनकी उपलब्धि की तुलना का सकते हैं।
3. **समूह का प्रतिनिधित्व:-** माध्य द्वारा सम्पूर्ण समूह का चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है। एक संख्या (माध्य) द्वारा पूर्ण समूह की संरचना के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो सकती है। प्रायः व्यक्तिगत इकाइयाँ अस्थिर व परिवर्तनशील होती है जबकि औसत इकाइयाँ अपेक्षाकृत स्थिर होती है।

4. **अंक गणितीय क्रियाएँ:-** दो विभिन्न श्रेणियों के संबंध को अंकगणित के रूप में प्रकट करने हेतु माध्यों की सहायता अनिवार्य हो जाती है और इन्हीं के आधार पर अन्य समस्त क्रियाएँ सम्पन्न की जाती हैं।
5. **भावी योजनाओं का आधार:-** हमें माध्यों के रूप में समूह का एक ऐसा मूल्य प्राप्त होता है जो हमारी भावी योजनाओं के लिए आधार का कार्य करता है।
6. **पारस्परिक संबंध:-** कभी-कभी दो समंक समूहों के पारस्परिक संबंध की आवश्यकता होती है, जैसे- दो समूहों में परिवर्तन एक ही दिशा में है या विपरीत दिशा में। यह जानने के लिए माध्य ही सबसे सरल मार्ग है।

8.7 आदर्श माध्य के लक्षण (Essential Characteristics of an Ideal Average) :

किसी भी आदर्श माध्य में निम्नलिखित गुण होनी चाहिए:-

1. **प्रतिनिधि:-** माध्य द्वारा समग्र का प्रतिनिधित्व किया जाना चाहिए, जिससे समग्र की अधिकाधिक विशेषताएँ माध्य में पायी जा सकें। माध्य ऐसा हो कि समग्र के प्रत्येक मद से उसकी अधिक निकटता प्राप्त हो सके।
2. **स्पष्ट एवं स्थिर:-** माध्य सदैव स्पष्ट एवं स्थिर होना चाहिए ताकि अनुसंधान कार्य ठीक [ग] से सम्पन्न किया जा सके। स्थिरता से आशय है कि समग्र की इकाईयों में कुछ और इकाईयों जोड़ देने या घटा देने से माध्य कम से कम प्रभावित हो।
3. **निश्चित निर्धारण:-** आदर्श माध्य वही होता है जो निश्चित रूप में निर्धारित किया जा सकता हो। अनिश्चित संख्या निष्कर्ष निकालने में भ्रम उत्पन्न कर देती है। यदि माध्य एक संख्या न होकर एक वर्ग आये तो इसे अच्छा माध्य नहीं कहेंगे।
4. **सरलता व शीघ्रता:-** आदर्श माध्य में सरलता व शीघ्रता का गुण भी होना चाहिए जिससे किसी भी व्यक्ति द्वारा इसकी गणना सरलता व शीघ्रता से की जा सके तथा वह समझने में किसी प्रकार की कठिनाई अनुभव न करे।
5. **परिवर्तन का न्यूनतम प्रभाव:-** आदर्श माध्य की यह विशेषता होनी चाहिए कि न्यादर्श में होने वाले परिवर्तनों का माध्य पर कम से कम प्रभाव पड़े। यदि न्यादर्श में परिवर्तन से माध्य भी परिवर्तित हो जाता है तो उसे माध्य नहीं कहा जा सकता।
6. **निरपेक्ष संख्या:-** माध्य सदैव निरपेक्ष संख्या के रूप में ही व्यक्त किया जाना चाहिए। उसे प्रतिशत में या अन्य किसी सापेक्ष रीति से व्यक्त किया हुआ नहीं होना चाहिए।

7. **बीजगणित एवं अंकगणित विधियों का प्रभाव:-** एक आदर्श माध्य में यह गुण भी आवश्यक है कि उसे सदैव अंकगणित एवं बीजगणित विवेचन में प्रयोग होने की व्यवस्था होनी चाहिए।
8. **माध्य का आकार:-** आदर्श माध्य वह होता है जो श्रृंखला या श्रेणी के समस्त मूल्यों के आधार पर ज्ञात किया गया हो।
9. **श्रेणी के मूल्यों पर आधारित:-** माध्य संख्या यदि श्रेणी में वास्तव में स्थित हो तो उचित है अन्यथा माध्य अनुमानित ही सिद्ध होगा।

8.8 सांख्यिकीय माध्य के विविध प्रकार (Different kinds of Statistical Averages) :

सांख्यिकीय में मुख्यतः निम्न माध्यों का प्रयोग होता है:-

- I. स्थिति सम्बन्धी माध्य (Averages of position)
 - a. बहुलक (Mode)
 - b. मध्यका (Median)

केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के रूप में आप यहाँ समान्तर माध्य (Arithmetic Mean), मध्यका (Median) व बहुलक (Mode) का ही अध्ययन करेंगे।

8.9 समान्तर माध्य (Arithmetic Mean) :

समान्तर माध्य गणितीय माध्यों में सबसे उत्तम माना जाता है और यह केन्द्रीय प्रवृत्ति का सम्भवतः सबसे अधिक लोकप्रिय माप है। क्रॉक्सटन तथा काउडेन के अनुसार- " किसी समंक श्रेणी का समान्तर माध्य उस श्रेणी के मूल्यों को जोड़कर उसकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है।" होरेस सेक्रिस्ट के मतानुसार- "समान्तर माध्य वह मूल्य है जो कि एक श्रेणी के योग में उनकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होती है।"

8.11 समान्तर माध्य ज्ञात करने की विधि (Method of Computing Arithmetic Mean) :

समान्तर माध्य की गणना करने के लिए दो रीतियों का प्रयोग किया जाता है:-

- i. प्रत्यक्ष रीति (Direct Method)
- ii. लघु रीति (Short-cut Method)

अवर्गीकृत तथ्यों या व्यक्तिगत श्रेणी में समान्तर माध्य की गणना:-

1. **प्रत्यक्ष रीति (Direct Method):-** प्रत्यक्ष रीति में (i) समस्त मदों के मूल्यों का योग किया जाता है। (ii) प्राप्त मूल्यों के योग में मदों की संख्या का भाग देकर समान्तर माध्य ज्ञात किया जाता है। यह विधि उस समय उपयुक्त होती है जब चर मूल्यों की संख्या कम हो तथा वे दशमलव में हों।

सूत्रानुसार –
$$\bar{X} = \frac{X_1 + X_2 + X_3 + \dots + X_n}{N}$$

$$\frac{\text{पदों का योग (Total Value of)}}{\text{पदों की संख्या}} \quad \text{अथवा} \quad \bar{X} = \frac{\sum X}{N}$$

यहाँ \bar{X} = समान्तर माध्य (Mean)

N = मदों की कुल संख्या (No. of Items)

Σ = योग (Sum or Total)

X = मूल्य या आकार (Value or Size)

उदाहरण:- निम्नलिखित सारणी में कक्षा IX के छात्रों के गणित का अंक प्रस्तुत किया गया है। समान्तर माध्य का परिकलन प्रत्यक्ष रीति द्वारा करें।

S.N.	Marks
1.	57

2.	45
3.	49
4.	36
5.	48
6.	64
7.	58
8.	75
9.	68
योग (Total)	500

सूत्रानुसार $\bar{X} = \frac{\sum x}{N}$

$$\sum X = 500$$

$$N = 9$$

$$\bar{X} = \frac{500}{9} = 55.55$$

माध्य (Mean) = 55.55

2. लघु रीति (Short Cut Method):- इस रीति का प्रयोग उस समय किया जाता है, जबकि समंक्र श्रेणी में मदों की संख्या बहुत अधिक हो। इस रीति का प्रयोग करते समय निम्नलिखित क्रियायें की जाती हैं:-

- i. **कल्पित माध्य (A):-** श्रेणी में किसी भी संख्या को कल्पित माध्य मान लेते हैं। यह संख्या चाहे उस श्रेणी में हो अथवा नहीं, परन्तु श्रेणी के मध्य की किसी संख्या को कल्पित माध्य मान लेने से गणना क्रिया सरल हो जाती है।
- ii. **विचलन (dx) की गणना:-** उपयुक्त कल्पित माध्य से समूह के विभिन्न वास्तविक मूल्यों का विचलन धन (+) तथा ऋण (-) के चिन्हों को ध्यान में रखते हुए ज्ञात करते हैं। ($dx = X - A$)
- iii. **विचलनों का योग ($\sum dx$):-** व्यक्तिगत श्रेणी में सभी विचलनों को जोड़ लेते हैं। ऐसा करते समय धनात्मक और ऋणात्मक चिन्हों को ध्यान में रखा जाता है।
- iv. **मदों की संख्या (N) से भाग देना:-** उपयुक्त प्रकार से प्राप्त योग में मदों की संख्या का भाग दे दिया जाता है।
- v. **माध्य (\bar{X}) ज्ञात करना:-** विचलन के योग में मदों की संख्या का भाग देने पर जो भागफल प्राप्त हो, उसे कल्पित माध्य में जोड़कर अथवा घटाकर माध्य ज्ञात करते हैं। भागफल यदि धनात्मक हो तो उसे कल्पित माध्य में जोड़ देते हैं और यदि यह ऋणात्मक हो तो उसे कल्पित माध्य में से घटा देते हैं। इस प्रकार प्राप्त होने वाली संख्या समान्तर माध्य कहलायेगी। यह रीति इस तथ्य पर आधारित है कि वास्तविक समान्तर माध्य से विभिन्न मदों के विचलन का योग शून्य होता है।

सूत्रानुसार:- $\bar{X} = A + \frac{\sum dx}{N}$

यहाँ \bar{X} = समान्तर माध्य (Arithmetic mean)

A = कल्पित माध्य (Assumed mean) $\sum dx$ =
कल्पित माध्य से लिये गये मूल्यों के विचलनों का योग

(Sum of deviations from Assumed mean)

N = मदों की संख्या (Total No. Items)

उदाहरण:- निम्नलिखित सारणी में कक्षा IX के 10 छात्रों को विज्ञान विषय के अधिकतम प्राप्तांक 20 में से निम्न अंक प्राप्त हुए हैं, इन छात्रों का विज्ञान विषय में समान्तर माध्य की गणना लघु रीति से करें।

अंक – 15, 13, 09, 18, 17, 08, 12, 14, 11, 10

समान्तर माध्य की गणना (Calculation):

<i>S. N.</i>	<i>Marks</i>	<i>Deviation</i>
1.	15	- 2
2.	13	- 4
3.	09	- 8
4.	18	+ 1
5.	17	0
6.	08	- 9
7.	12	- 5
8.	14	- 3
9.	11	- 6
10.	10	- 7
N= 10		योग =- 44+1
		$\Sigma dx = - 43$

$$\bar{X} = A + \frac{\Sigma dx}{N}$$

$$= 17 + \frac{-43}{10}$$

$$= 17 + (-4.3)$$

= 12.7

8.12 मध्यका (Median) :

मध्यका एक स्थिति संबंधी माध्य है। यह किसी समंक माला का वह मूल्य है जो कि समंक माला को दो समान भागों में विभाजित करता है। दूसरे शब्दों में मध्यका अवरोही या आरोही क्रम में लिखे हुए विभिन्न मदों के मध्य का मूल्य होता है। जिसके ऊपर व नीचे समान संख्या में मद मूल्य स्थित होते हैं। डॉ ए0एल0 बाउले के अनुसार "यदि एक समूह के पदों को उनके मूल्यों के आधार पर क्रमबद्ध किया जाय तो लगभग बीच का मूल्य ही मध्यका होता है।" कॉनर के अनुसार- "मध्यका समंक श्रेणी का वह चर मूल्य है जो समूह को दो बराबर भागों में विभाजित करता है, जिसमें एक भाग में मूल्य मध्यका से अधिक और दूसरे भाग में सभी मूल्य उससे कम होते हैं।"

8.13 मध्यका की गणना (Computation of Median) :

मध्यका की गणना के लिए सर्वप्रथम श्रेणी को व्यवस्थित करना चाहिए। मदों को किसी मापनीय गुण के आधार पर आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करते समय मूल्यों से संबंधित सूचना समय, दिन, वर्ष, नाम, स्थान, रोल नम्बर आदि को मूल्यों के आधार पर बदल लिया जाना चाहिए। आरोही क्रम में सबसे पहले छोटे मद को और उसके बाद उससे बड़े को और इसी क्रम में अंत में सबसे बड़े मद को लिखते हैं और अवरोही क्रम से सबसे बड़े मद को, फिर उससे छोटे को और अंत में सबसे छोटे मद को लिखा जाता है।

मध्यका की गणना विधि: व्यक्तिगत श्रेणी (Individual Series):- इसमें मध्यका की गणना की विधि इस प्रकार है:-

- श्रेणी के पदों को आरोही अथवा अवरोही क्रम में रखते हैं।
- इसके पश्चात् निम्न सूत्र का प्रयोग कर मध्यका ज्ञात करते हैं:-

$$M = \text{Size of } \frac{(N+1)}{2} \text{ th item}$$

विषम संख्या होने पर (Odd Numbers):-

उदाहरण:- निम्न समकों की सहायता से मध्यका की गणना कीजिए:-

9 10 68 11

हल: श्रेणी के पदों को आरोही क्रम में रखने पर

6 8 9 10 11

$$\text{मध्यका} = \frac{(5+1)}{2} \text{ वां पद का आकार}$$

अर्थात् तीसरा पद ही मध्यका का मान होगा = 9

सम संख्या होने पर (Even Numbers):- उपयुक्त उदाहरण में संख्या विषम थी। अतः मध्य बिन्दु सरलता से ज्ञात कर लिया गया परन्तु यदि संख्या सम हो तो उसमें एक संख्या जोड़ने पर ऐसी संख्या बन जायेगी जिसमें दो का भाग देने पर हमें सम्पूर्ण संख्या प्राप्त होगी। ऐसी स्थिति में सूत्र का प्रयोग करके वास्तविक स्थिति ज्ञात कर लेनी चाहिए। ततपश्चात् जिन दो संख्याओं के बीच मध्यका हो, उन संख्याओं के मूल्यों को जोड़कर दो से भाग देना चाहिए। इससे प्राप्त संख्या मध्यका का वास्तविक मूल्य होगा।

उदाहरण:- निम्न समकों की सहायता से मध्यका की गणना कीजिए:-

10 11 6 8 9

हल: श्रेणी के पदों को आरोही क्रम में रखने पर

6 8 9 10 11 15

$$\text{मध्यका} = \frac{(9+10)}{2} = 9.5$$

खण्डित श्रेणी (Discrete Series):- खण्डित श्रेणी में मध्यका ज्ञात करने के लिए निम्न कार्य करना होता है:-

1. पद मूल्यों (Size) को अवरोही अथवा आरोही क्रम में व्यवस्थित करना।
2. श्रेणी में दी गई आवृत्तियों की संचयी आवृत्ति ज्ञात करना।
3. मध्यका अंक ज्ञात करने के लिए $\frac{N+1}{2}$ सूत्र का प्रयोग करना, यहाँ 'N' का अर्थ आवृत्तियों की कुल संख्या से है।
4. मध्यका पद को संचयी आवृत्ति से देखना है। मध्यका पद जिस संचयी आवृत्ति में आता है, उसके सामने वाला पद-मूल्य ही मध्यका कहलाता है।

उदाहरण:- निम्न समकों की सहायता से मध्यका की गणना कीजिए:-

छात्रों की संख्या -	6	8	9	10	11	15	16	20	25
अंक	28	20	27	21	22	26	23	24	25

हल : मध्यका ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम श्रेणी को व्यवस्थित करेंगे। फिर सूत्र का प्रयोग किया जायेगा।

Marks	No. of Student	Cumulative Frequency
20	8	8
21	10	18
22	11	29
23	16	45
24	20	65
25	25	90
26	15	105
27	9	114
28	6	120

$$\begin{aligned} \text{मध्यका (Median)} &= \frac{N+1}{2} \text{ वां पद का आकार} \\ &= \frac{120+1}{2} \\ &= 60.5 \end{aligned}$$

अतः 60.5 वाँ पद 65 संचयी आवृत्ति के सामने अर्थात् 24 रू0 है मध्यका मजदूरी = 24 रू0 है।

सतत् श्रेणी (Continuous Series) :- सतत् श्रेणी में मध्यका ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित क्रिया विधि अपनायी जाती है:-

1. सबसे पहले यह देखना चाहिए की श्रेणी अपवर्जी है अथवा समावेशी। यदि श्रेणी समावेशी दी गई है तो उसे अपवर्जी में परिवर्तन करना चाहिए।
2. इसके बाद साधारण आवृत्तियों की सहायता से संचयी आवृत्तियों (C.F.) ज्ञात करना चाहिए।
3. इसके पश्चात् $N/2$ की सहायता से मध्यका मद् ज्ञात की जाती है।
4. मध्यका मद् जिस संचयी आवृत्ति में होती है उसी से संबंधित वर्गान्तर मध्यका वर्ग (Median group) कहलाता है।
5. मध्यका वर्ग में मध्यका निर्धारण का आन्तर्गणन निम्न सूत्र की सहायता से किया जाता है:-

$$M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c) \text{ or } M = L_1 + \frac{L_z - L_1}{f}(m - c)$$

M = मध्यका (Median)

L_1 = मध्यका वर्ग की निम्न सीमा L_z = मध्यका वर्ग की उच्च सीमा
 f = मध्यका वर्ग की आवृत्ति
 $m =$ मध्यका मद् $(\frac{N}{2})$

C = मध्यका वर्ग से पहले वाले वर्ग की संचयी आवृत्ति

i = मध्यका वर्ग का वर्ग विस्तार

6. यदि श्रेणी अवरोही क्रम में दी गई है तो निम्न सूत्र का प्रयोग करेंगे:-

$$M = L_2 - \frac{i}{f}(m - c)$$

8.14 मध्यका के सिद्धान्त पर आधारित अन्य माप:-

1. **चतुर्थक (Quartiles):-** यह एक अत्यधिक महत्वपूर्ण माप है जो सबसे अधिक प्रयोग में आता है। जब किसी अनुविन्यासित श्रेणी को चार समान भागों में बाँटा जाना हो तो उसमें तीन चतुर्थक होंगे। प्रथम चतुर्थक को निचला चतुर्थक (Lower Quartile), दूसरे चतुर्थक को मध्यका तथा तृतीय चतुर्थक को उच्च चतुर्थक (Upper Quartile) कहते हैं।

8.15 बहुलक (Mode) :

किसी श्रेणी का वह मूल्य जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक होती है, बहुलक कहलाता है।

8.16 बहुलक की गणना (Calculation of Mode) :

व्यक्तिगत श्रेणी (Individual Series) :- अवर्गीकृत तथ्यों के संबंध में बहुलक ज्ञात करने की तीन विधियाँ हैं:-

- i. निरीक्षण विधि।
- ii. व्यक्तिगत श्रेणी को खण्डित या सतत श्रेणी में परिवर्तित करके।
- iii. माध्यों के अंतर्संबंध द्वारा।

निरीक्षण द्वारा (By Inspection) :- अवर्गीकृत तथ्यों का निरीक्षण करके यह निश्चित किया जाता है कि कौन सा मूल्य सबसे अधिक बार आता है अर्थात् कौन सा मूल्य सबसे अधिक प्रचलित है। जो मूल्य सबसे अधिक प्रचलित होता है, वही इन तथ्यों का बहुलक मूल्य होता है।

उदाहरण:- निम्नलिखित संख्याओं के समूहों के लिए बहुलक ज्ञात कीजिए।

- i. 3, 5, 2, 6, 5, 9, 5, 2, 8, 6, 2, 3, 5, 4, 7
- ii. 51.6, 48.7, 53.3, 49.5, 48.9, 51.6, 52, 54.6, 54, 53.3,

iii. 80, 110, 40, 30, 20, 50, 100, 60, 40, 10, 100, 80, 120, 60, 50,
70

हल :- उपरोक्त संख्याओं को निरीक्षण करने से ज्ञात होता है कि –

- i. 5 संख्या सबसे अधिक बार (चार बार) आया है, अतः बहुलक = 5 है।
- ii. 53.3 व 51.6 दोनों ही संख्याएँ दो-दो बार आवृत्त हुआ है, अतः यहाँ पर दो बहुलक (53.3 व 51.6) हैं। इस श्रेणी को द्वि-बहुलक (Bi-Modal) श्रेणी कहते हैं।
- iii. 40, 50, 60, 80, 100 संख्याएँ दो-दो बार आवृत्त होती है। हम यह कह सकते हैं कि यहाँ पर पाँच बहुलक हैं। इसे बहु-बहुलक (Multi Modal) श्रेणी कहते हैं। इस स्थिति में यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि बहुलक विद्यमान नहीं है।

अवर्गीकृत तथ्यों का वर्गीकरण करके:- यदि प्रस्तुत मूल्यों की संख्या बहुत अधिक होती है तो बहुलक का निरीक्षण द्वारा निर्धारण करना सरल नहीं होता है। ऐसी स्थिति में व्यक्तिगत मूल्यों को आवृत्ति वितरण के रूप में खण्डित या सतत् श्रेणी में परिवर्तित कर लेते हैं। तत्पश्चात् खण्डित या सतत् श्रेणी से बहुलक निर्धारित करते हैं। बहुलक ज्ञात करने की यह रीति अधिक विश्वसनीय एवं तर्क संगत है।

बहुलक की प्रमुख विशेषताएँ (Principal Characteristics of Mode) :-

1. बहुलक मूल्य पर असाधारण इकाईयों का प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात् इस माध्य पर श्रेणी के उच्चतम व निम्नतम अंकों का बहुत कम प्रभाव पड़ता है।
2. वास्तविक बहुलक के निर्धारण के लिए पर्याप्त गणना की आवश्यकता होती है। यदि आवृत्ति वितरण अनियमित है तो बहुलक का निर्धारण करना भी कठिन होता है।
3. बहुलक सर्वाधिक घनत्व वाला बिन्दु होता है, अतः श्रेणी के वितरण का अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है।
4. बहुलक के लिए बीजगणितय विवेचन करना संभव नहीं होता।
5. सन्निकट बहुलक आसानी से ज्ञात किया जा सकता है।

बहुलक के गुण (Advantages of Mode) :-

- i. **सरलता:-** बहुलक को समझना व प्रयोग करना दोनों सरल हैं। कभी-कभी इसका पता निरीक्षण द्वारा ही लगाया जा सकता है।

- ii. **श्रेष्ठ प्रतिनिधित्व:-** बहुलक मूल्य के चारों ओर समंक श्रेणी के अधिकतम मूल्य केन्द्रित होते हैं। अतः समग्र के लक्षणों तथा रचना पर भी कुछ प्रकाश पड़ता है।
- iii. **थोड़े मर्दों की जानकारी से भी बहुलक गणना सम्भव:-** बहुलक को गणना के लिए सभी मर्दों की आवृत्तियों जानना आवश्यक नहीं केवल बहुलक वर्ग के पहले और बाद वाले वर्ग की आवृत्तियों ही पर्याप्त हैं।
- iv. **बिन्दु रेखीय प्रदर्शन सम्भव:-** बहुलक का प्रदर्शन रेखा चित्र से संभव है।
- v. **चरम मूल्यों से कम प्रभावित:-** इसके मूल्य पर चरम मर्दों का प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि यह सभी मूल्यों पर आधारित नहीं होता है।
- vi. **सर्वाधिक उपयोगी मूल्य:-** बहुलक एक व्यावहारिक माध्य है, जिसका सार्वभौमिक उपयोग है।
- vii. **विभिन्न न्यादर्शों में समान निष्कर्ष:-** समग्र से सदैव निदर्शन द्वारा चाहे जितना न्यादर्श लिये जाय उनसे प्राप्त बहुलक समान रहता है।

बहुलक के दोष:-

1. **अनिश्चित तथा अस्पष्ट:-** बहुलक ज्ञात करना अनिश्चित तथा अस्पष्ट रहता है। कभी-कभी एक ही समंकमाला से एक से अधिक बहुलक उपलब्ध होते हैं।
2. **चरम मूल्यों का महत्व नहीं:-** बहुलक में चरम मूल्यों को कोई महत्व नहीं दिया जाता।
3. **बीजगणितीय विवेचन कठिन:-** बहुलक का बीजगणितीय विवेचन नहीं किया जा सकता, अतः यह अपूर्ण है।
4. **वर्ग विस्तार का अधिक प्रभाव:-** बहुलक की गणना में वर्ग विस्तार का बहुत प्रभाव पड़ता है। भिन्न-भिन्न वर्ग विस्तार के आधार पर वर्गीकरण करने पर बहुलक भी भिन्न-भिन्न आते हैं।
5. **कुल योग प्राप्त करना कठिन:-** बहुलक को यदि मर्दों की संख्या से गुणा कर दिया जाय तो मर्दों के कुल मूल्यों का योग प्राप्त नहीं किया जा सकता।
6. **क्रमानुसार रखना:-** इसमें मर्दों को क्रमानुसार रखना आवश्यक है, इसके बिना बहुलक ज्ञात करना सम्भव नहीं होता है।

8.17 समान्तर माध्य, मध्यका तथा बहुलक के बीच संबंध:-

एक सममित श्रेणी (Symmetrical Series) ऐसी श्रेणी होती है, जिसमें समान्तर माध्य, मध्यका व बहुलक का एक ही मूल्य होता है। एक विषम श्रेणी में तीनों माध्य समान नहीं होते हैं, परन्तु विषम श्रेणी में भी मध्यका, समान्तर माध्य व बहुलक के बीच की दूरी की औसतन एक तिहाई होती है।

इसका सूत्र इस प्रकार है:-

$$Z = \bar{X} - 3(\bar{X} - M) \text{ or } Z = 3M - 2\bar{X}$$

$$M = Z + \frac{2}{3}(\bar{X} - Z)$$

$$\bar{X} = \frac{1}{2}(3M - Z)$$

8.18 चतुर्थक विचलन या अर्द्ध अन्तर-चतुर्थक विस्तार (Quartile Deviation or Semi Inter-Quartile Range) :

चतुर्थक विचलन श्रेणी के चतुर्थक मूल्यों पर आधारित अपकिरण का एक माप है। यह श्रेणी के तृतीय व प्रथम चतुर्थक के अन्तर का आधा होता है। इसलिए इसे अर्द्ध अन्तर-चतुर्थक विस्तार भी कहते हैं। यदि कोई श्रेणी नियमित अथवा सममितीय हो तो मध्यक (M), तृतीय चतुर्थक (Q₃) तथा प्रथम चतुर्थक (Q₁) के ठीक बीच होगा। इसके लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation or Q.D.)} = \frac{Q_3 - Q_1}{2}, \quad Q_3 = \text{तृतीय चतुर्थक}$$

$$Q_1 = \text{प्रथम चतुर्थक}$$

चतुर्थक विचलन का गुणांक (Coefficient of Quartile Deviation)

$$\text{Coefficient of Q.D.} = \frac{Q_3 - Q_1}{2} \times \frac{2}{Q_3 + Q_1} = \frac{Q_3 - Q_1}{Q_3 + Q_1}$$

उदाहरण 04 :- निम्न समकों के आधार पर चतुर्थक विचलन एवं उसका गुणांक ज्ञात कीजिए।
From the following data find Quartile Deviation and its Coefficient

अंक (X)	4	6	8	10	12	14	16
बारंबारता (f)	2	4	5	3	2	1	4
संचयी बारंबारता (cf)	2	6	11	14	16	17	21

हल:-

$$\begin{aligned} Q_1 &= \frac{N+1}{4} \text{ वॉ पद} \\ &= \frac{21+1}{4} \text{ वॉ पद} \\ &= 5.5 \text{ वॉ पद} \\ &= 6 \end{aligned}$$

$$Q.D. = \frac{Q_3 - Q_1}{2} = \frac{14 - 6}{2} = 4$$

$$Q.D. \text{ गुणांक} = \frac{14 - 6}{14 + 6} = 0.40$$

$$\begin{aligned} Q_3 &= \frac{D(N+1)}{4} \text{ वॉ पद} \\ &= \frac{3(21+1)}{4} \text{ वॉ पद} \\ &= 16.5 \text{ वॉ पद} \\ &= 17 \end{aligned}$$

वर्गीकृत आंकड़ों का Q.D. निकालने के लिए शतमक या दशमक विस्तार की तरह ही प्रक्रिया अपना कर निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$Q_1 = L_1 + \frac{i}{f}(q_1 - C)$$

$$Q_3 = L_1 + \frac{i}{f}(q_3 - C)$$

$$Q.D. = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

चतुर्थांक विचलन के गुण (Merits of QR):-

1. चतुर्थक विचलन की गणना सरल है तथा इसे शीघ्रता से समझा जा सकता है, क्योंकि इसकी गणना में जटिल गणितीय सूत्रों का प्रयोग नहीं करना पड़ता है।
2. यह श्रेणी के न्यूनतम 25% तथा अधिकतम 25% मूल्यों को छोड़ देता है। अतः यह अपकिरण के अन्य मापों की अपेक्षा चरम मूल्यों द्वारा कम प्रभावित होता है।
3. यद्यपि यह श्रेणी की बनावट पर प्रकाश नहीं डालता फिर भी श्रेणी के उन 50% मूल्यों का विस्तार परिष्कृत रूप से प्रस्तुत करता है, जो चरम मूल्यों से प्रभावित नहीं होते हैं।

चतुर्थांक विचलन के दोष (Demerits of QR):-

1. यह पदों के बिखराव का प्रदर्शन करने में असमर्थ है।
2. यह चरम मूल्यों को महत्व नहीं देता है।
3. इसके आधार पर बीजगणितीय रीतियों का प्रयोग करके विश्लेषण करना संभव नहीं है।
4. निदर्शन के उच्चावचनों (Fluctuations) से यह बहुत अधिक प्रभावित होता है।

इन दोषों को दूर करने के उद्देश्य से ही माध्य विचलन और प्रमाप विचलन की गणना की जाती है।

8.19 प्रमाप विचलन (Standard Deviation) :-

प्रमाप विचलन के विचार का प्रतिपादन कार्ल पियर्सन ने 1893 ई० में किया था। यह अपकिरण को मापने की सबसे अधिक लोकप्रिय और वैज्ञानिक रीति है। प्रमाप विचलन की गणना केवल समान्तर माध्य के प्रयोग से ही की जाती है। किसी समंक समूह का प्रमाप विचलन निकालने हेतु उस समूह के समान्तर माध्य से विभिन्न पद मूल्यों के विचलन ज्ञात किये जाते हैं। माध्य विचलन की भाँति विचलन लेते समय बीजगणितीय चिन्हों को छोड़ा नहीं जाता है। इन विचलनों के वर्ग ज्ञात कर लिए जाते हैं। प्राप्त वर्गों के योग में कुल मदों की संख्या का भाग देकर वर्गमूल निकाल लेते हैं। इस प्रकार जो अंक प्राप्त होता है उसे प्रमाप विचलन कहते हैं। वर्गमूल से पूर्व जो मूल्य आता है, उसे अपकिरण की द्वितीय घात या विचरणांक अथवा प्रसरण (Variance) कहते हैं। अतः प्रमाप विचलन समान्तर माध्य से समंक श्रेणी के विभिन्न पद मूल्यों के विचलनों के वर्गों के माध्य का वर्गमूल होता है। (Standard Deviation is the square root of the Arithmetic Mean of

the squares of all deviations being measured from the Arithmetic mean of the observations).

प्रमाप विचलन का संकेताक्षर ग्रीक भाषा का छोटा अक्षर (Small Sigma) σ होता है। प्रमाप विचलन को मध्यक विभ्रम (Mean Error), मध्यक वर्ग विभ्रम (Mean Square Error) या मूल मध्यक वर्ग विचलन (Root Mean Square Deviation) आदि अनेक नामों से भी सम्बोधित किया जाता है।

प्रमाप विचलन का गुणांक (Coefficient of Standard Deviation) दो श्रेणियों की तुलना के लिए प्रमाप विचलन का सापेक्ष माप (Relative Measure of Standard Deviation) ज्ञात किया जाता है जिसे प्रमाप विचलन गुणांक (Coefficient of Standard Deviation) कहते हैं। प्रमाप विचलन में समान्तर माध्य (\bar{X}) से भाग देने से प्रमाप विचलन का गुणांक प्राप्त हो जाता है।

$$\text{प्रमाप विचलन का गुणांक (Coefficient of S.D.)} = \frac{\sigma}{\bar{X}} \text{ or } \frac{S.D.}{\text{Mean}}$$

प्रमाप विचलन की परिगणना (Calculation of Standard Deviation):-

- i. खण्डित श्रेणी में प्रमाप विचलन की गणना (Calculation of S.D. in Discrete Series)
 - a. प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2}{N}}$$

- b. लघु रीति (Short-cut Method) = $\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2x}{N} - \left(\frac{\sum fdx}{N}\right)^2}$

उदाहरण 06:- निम्न समकों से प्रमाप विचलन की परिगणना कीजिए।

अंक (X)	1	2	3	4	5	6	7	Total
बांरबारता (f)	1	5	11	15	13	4	1	50

हल:- प्रत्यक्ष विधि से प्रमाप विचलन की परिगणना

अंक X	बारंबारता (f)	4 से विचलन D	विचलन का वर्ग d^2	विचलन का वर्ग व बारंबारता का गुणन fd^2	अंक व बारंबारता का गुणन fx
1	1	-3	9	9	1
2	5	-2	4	20	10
3	11	-1	1	11	33
4	15	0	0	0	60
5	13	1	1	13	65
6	4	2	4	16	24
7	1	3	9	9	7
Total	50		28	78	200

$$X = \frac{\sum fx}{N} = \frac{200}{50} = 4$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2}{N}} \text{ or } \sqrt{\frac{78}{50}} = 1.50 = 1.25 \text{ अतः SD}=1.25$$

लघु रीति (Short-cut Method) से प्रमाप विचलन की परिगणना :

X	F	dx(A=3)	Fdx	fdx X dx (fdx ²)
1	1	-2	-2	4
2	5	-1	-5	5
3	11	0	0	0
4	15	+1	15	15
5	13	+2	26	52
6	4	+3	12	36
7	1	+4	4	16
Total	50		50	120

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2 x}{N} - \left(\frac{\Sigma fdx}{N}\right)^2}$$

$$= \sqrt{\frac{120}{50} - \left(\frac{50}{50}\right)^2}$$

$$= \sqrt{2.56 - (1)^2}$$

$$= \sqrt{2.56 - 1}$$

$$= 1.25$$

सतत श्रेणी में (Continuous Series) में प्रमाप विचलन

(A) प्रत्यक्ष रीति = $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}}$

(B) लघु रीति = $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2 x}{N} - \left(\frac{\Sigma fdx}{N}\right)^2}$

उदाहरण 07:- निम्न समकों से प्रमाप विचलन तथा उनके गुणांक की परिगणना कीजिए।

कुल अंकों में प्राप्तांक:- 0-2 2-4 4-6 6-8 8-10 Total

छात्रों की संख्या:- 2 5 15 7 1 30

Marks	No. of Students	M.V.	Deviation from $\bar{X} = s$	Square of Deviations	Product of $f \times d^2$	frequency X Value	Square of M.V.	Product of $f \text{ and } X^2$
X	F	X	d	d^2	fd^2	fX	X^2	fx^2
0-2	2	1	-4	16	32	2	1	2
2-4	5	3	-2	4	20	15	9	45
4-6	15	5	0	0	0	75	25	375
6-8	7	7	2	4	28	49	49	343
8-10	1	9	4	16	16	9	81	81
Total	30	-	-	40	96	150	165	846

$$X = \frac{\sum fx}{N} = \frac{150}{30} = 5 \text{ Marks}; \sigma = \sqrt{\frac{\sum fd^2}{N}} = \sqrt{\frac{96}{30}} = 1.79$$

$$\text{Coefficient of } \sigma = \frac{\sigma}{X} = \frac{1.79}{5} = \text{or } 0.36$$

लघु रीति से प्रमाप विचलन का परिकलन

X	M.V. (X)	No. of f	Dx A=7	$f d x$	$fdx Xdx$	X^2	fX^2
0-2	1	2	-6	-12	72	1	2
2-4	3	5	-4	-20	80	9	45
4-6	5	15	-2	-30	60	25	375
6-8	7	7	0	0	0	49	343
8-10	9	1	2	2	4	81	81
Total	-	30	-10	-60	216	165	846

$$\bar{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N} = 7 + \frac{-60}{30} = 7 - 2 = 5 \text{ Marks}$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2x}{N} - \left(\frac{\Sigma fdx}{N}\right)^2} = \sqrt{\frac{216}{30} - \left(\frac{-60}{30}\right)^2}$$

$$= \sqrt{7.20 - (-2)^2} = \sqrt{3.2} = 1.79 \text{ Marks}$$

अपनी अधिगम प्रगति जानिए

1. एकश्रेणी (Series) में समान्तर माध्य, मध्यका व बहुलक का एक ही मूल्य होता है।
- 2.....किसी आवृत्ति वितरण का वह मूल्य है जिसके चारों ओर मर्दों के केन्द्रित होने की प्रवृत्ति बहुत अधिक होती है।
3. सौ बराबर भागों में बॉटने वाले मूल्यकहलाता है।
4.समंक श्रेणी का वह चर मूल्य है जो समूह को दो बराबर भागों में विभाजित करता है।
5. चार भागों में बॉटने वाला मूल्यकहलाता है।

8.20 सारांश (Summary) :

प्रस्तुत इकाई में आपने सांख्यिकी का अर्थ तथा वर्णनात्मक सांख्यिकी के रूप में केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों (Measures of Central Tendency) में समान्तर माध्य, मध्यका व बहुलक का अध्ययन किया। इन सभी अवधारणाओं के बारे में संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

सांख्यिकी अनुमानों और संभावनाओं का विज्ञान है तथा यह गणना का विज्ञान है। सांख्यिकी को सही अर्थ में माध्यों का विज्ञान कहा जा सकता है।

वर्णनात्मक सांख्यिकी, किसी क्षेत्र के भूतकाल तथा वर्तमान काल में संकलित तथ्यों का अध्ययन करता है और इनका उद्देश्य विवरणात्मक सूचना प्रदान करना होता है। केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप, विवरणात्मक या वर्णनात्मक सांख्यिकी के उदाहरण हैं।

एक समंक श्रेणी की केन्द्रीय प्रवृत्ति का आशय उस समंक श्रेणी के अधिकांश मूल्यों की किसी एक मूल्य के आस-पास केन्द्रित होने की प्रवृत्ति से है, जिसे मापा जा सके और इस प्रवृत्ति के माप को ही माध्य कहते हैं।

केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के उद्देश्य एवं कार्य हैं- सामग्री को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना, तुलनात्मक अध्ययन के लिए, समूह का प्रतिनिधित्व, अंक गणितीय क्रियाएँ, भावी योजनाओं का आधार, माध्यों के मध्य पारस्परिक संबंध ज्ञात करने के लिए आदि।

8.21 शब्दावली (Glossary) :

सांख्यिकी (Statistics): सांख्यिकी अनुमानों और संभावनाओं का विज्ञान है तथा यह गणना का विज्ञान है। सांख्यिकी को सही अर्थ में माध्यों का विज्ञान कहा जाता है।

वर्णनात्मक सांख्यिकी (Descriptive Statistics): वर्णनात्मक सांख्यिकी संकलित तथ्यों का विवरणात्मक सूचना प्रदान करना होता है। केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप, विवरणात्मक या वर्णनात्मक सांख्यिकी के उदाहरण हैं।

केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप (Measures of Central Tendency): एक समंक श्रेणी की केन्द्रीय प्रवृत्ति का आशय उस समंक श्रेणी के अधिकांश मूल्यों की किसी एक मूल्य के आस-पास केन्द्रित होने की प्रवृत्ति से है, जिसे मापा जा सके और इस प्रवृत्ति के माप को माध्य भी कहते हैं।

मध्यका (Median): मध्यका समंक श्रेणी का वह चर मूल्य है जो समूह को दो बराबर भागों में विभाजित करता है।

चतुर्थक (Quartiles): चार भागों में बाँटने वाला मूल्य चतुर्थक (Quartiles)।

बहुलक (Mode): बहुलक किसी आवृत्ति वितरण का वह मूल्य है जिसके चारों ओर मदों के केन्द्रित होने की प्रवृत्ति बहुत अधिक होती है।

8.22 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर:

1. सममित 2. बहुलक 3. शतमक (Percentiles) 4. मध्यका 5. चतुर्थक (Quartiles)

8.22 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री (References/ Useful Readings) :

1. सिंह, ए०के० (2007) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास
2. गुप्ता, एस०पी० (2008) : मापन एवं मूल्यांकन, इलाहाबाद, शारदा पब्लिकेशन
3. शर्मा, आर०ए० (2001) : शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, मेरठ, आर०लाल० पब्लिकेशन्स

8.23 निबंधात्मक प्रश्न

1. सांख्यिकी का अर्थ बताइए तथा वर्णनात्मक सांख्यिकी के महत्व का वर्णन कीजिए।
2. केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों विभिन्न मापकों की तुलना कीजिए।
3. केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों के महत्व का वर्णन कीजिए।

इकाई 9: सहसंबंध: प्रोडक्ट मोमेंट सहसंबंध (Correlation: Product Moment Correlation:

इकाई की रूपरेखा

- 9.1 प्रस्तावना
- 9.2 उद्देश्य
- 9.3 सहसंबंध का अर्थ व परिभाषाएं
- 9.4 सहसंबंध व कारण-कार्य संबंध
- 9.5 सहसंबंध का महत्व
- 9.6 सहसंबंध के प्रकार
- 9.7 सहसंबंध का परिमाण
- 9.8 सहसंबंध के रूप में r की विश्वसनीयता
- 9.9 सरल सहसंबंध ज्ञात करने की विधियाँ
- 9.10 कार्ल पियर्सन के सहसंबंध गुणांक की गणना
- 9.11 सारांश
- 9.12 शब्दावली
- 9.13 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर
- 9.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री
- 9.15 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना:

मानव जीवन से संबंधित सामाजिक शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं वैज्ञानिक आदि सभी क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की समंक श्रेणियों में आपस में किसी न किसी प्रकार संबंध पाया जाता है। उदाहरण के लिए- दुश्चिंता के बढ़ने से समायोजन में कमी, अधिगम बढ़ने से उपलब्धि में वृद्धि गरीबी बढ़ने से जीवन स्तर में कमी आदि। इन स्थितियों में सांख्यिकीय विश्लेषण

के लिए सहसंबंध ज्ञात किया जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सहसंबंध दो अथवा अधिक चरों के मध्य संबंध का अध्ययन करता है एवं उस संबंध की मात्रा को मापता है। यहाँ पर आप सहसंबंध का अर्थ, परिभाषा, प्रकृति व इसके मापने के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन करेंगे।

9.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययनोपरांत आप-

- सहसंबंध का अर्थ बता पायेंगे।
- सहसंबंध के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- सहसंबंध के विभिन्न मापकों का परिकलन कर सकेंगे।
- सहसंबंध के विभिन्न मापकों की तुलना कर सकेंगे।
- सहसंबंध गुणांक का अर्थापन कर सकेंगे।
- कार्ल पियर्सन के सहसंबंध गुणांक की गणना कर सकेंगे।
- द्विपंक्तिक सहसंबंध गुणांक का परिकलन कर सकेंगे।
- बिंदु द्विपंक्तिक सहसंबंध गुणांक की गणना कर सकेंगे।

9.3 सहसंबंध (Correlation) का अर्थ व परिभाषाएं :

जब दो या अधिक तथ्यों के मध्य संबंध को अंकों में व्यक्त किया जाय तो उसे मापने एवं सूक्ष्म रूप में व्यक्त करने के लिए जो रीति प्रयोग में लायी जाती है उसे सांख्यिकी में सहसंबंध कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, दो या दो से अधिक चरों के मध्य अन्तर्संबंध को सहसंबंध की संज्ञा दी जाती है। सहसंबंध के परिमाण को अंकों में व्यक्त किया जाता है, जिसे सहसंबंध गुणांक (Coefficient of Correlation) कहा जाता है। विभिन्न विद्वानों ने सहसंबंध की अनेक परिभाषाएँ दी हैं-

प्रो० किंग "यदि यह सत्य सिद्ध हो जाता है कि अधिकांश उदाहरणों में दो चर-मूल्य (Variables) सदैव एक ही दिशा में या परस्पर विपरीत दिशा में घटने-बढ़ने की प्रवृत्ति रखते हैं तो ऐसी स्थिति में यह समझा जाना चाहिए कि उनमें एक निश्चित संबंध है। इसी संबंध को सहसंबंध कहते हैं। (If it is proved true that in a large number of instances, two variables tend always to fluctuate in the same or in opposite direction, we consider that the fact is established and relationship exists. This relationship is called correlation)."

बाउले- " जब दो संख्याएँ इस प्रकार सम्बन्धित हों कि एक का परिवर्तन दूसरे के परिवर्तन की सहानुभूति में हो, जिसमें एक की कमी या वृद्धि, दूसरे की कमी या वृद्धि से संबंधित हो या विपरीत हो और एक में परिवर्तन की मात्रा दूसरे के परिवर्तन की मात्रा के समान हो, तो दोनों मात्राएँ सहसंबंध कहलाती है।" इस प्रकार सहसंबंध दो या दो से अधिक संबंधित चरों के बीच संबंध की सीमा के माप को कहते हैं।

9.4 सहसंबंध व कारण-कार्य संबंध (Causation and Correlation) :

जब दो समंक श्रेणियाँ एक दूसरे पर निर्भर/आश्रित हों तो इस पर निर्भरता को सहसंबंध के नाम से जाना जाता है। अतः एक समंक श्रेणी में परिवर्तन कारण होता है तथा इसके परिणामस्वरूप दूसरी श्रेणी में होने वाला परिवर्तन प्रभाव या कार्य कहलाता है। कारण एक स्वतंत्र चर होता है तथा प्रभाव इस पर आश्रित है। कारणों में परिवर्तनों से प्रभाव परिवर्तित होता है न कि प्रभाव के परिवर्तन से कारण। सहसंबंध की गणना से पूर्व चरों की प्रकृति को अच्छी तरह समझना चाहिए अन्यथा गणितीय विधि से चरों के मध्य सहसंबंध की निकाली गयी मात्रा बहुत ही भ्रामक हो सकता है। गणितीय विधि से किसी भी दो या दो से अधिक चरों के मध्य सहसंबंध की मात्रा का परिकलन किया जा सकता है और इन चरों के मध्य कुछ न कुछ सहसंबंध की मात्रा भी हो सकती है, लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं लगाना चाहिए कि उन चरों के मध्य कारण- कार्य का संबंध विद्यमान है। प्रत्येक कारण-कार्य संबंध का अर्थ सहसंबंध होता है, लेकिन प्रत्येक सहसंबंध से कारण-कार्य संबंध को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि अभिप्रेरणा की मात्रा में परिवर्तन के फलस्वरूप अधिगम पर पढ़ने वाले प्रभाव के बीच सहसंबंध गुणांक का परिकलन किया जाता है तो निश्चित रूप से उस सहसंबंध गुणांक के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इन दोनों चरों के मध्य कारण-कार्य संबंध है। लेकिन यदि भारत में पुस्तकों के मूल्यों में परिवर्तन का न्यूनार्क में सोने के मूल्यों में परिवर्तन के समकों से सहसंबंध गुणांक का परिकलन किया जाय तो इस गुणांक से प्राप्त परिणाम तर्कसंगत नहीं हो सकते, क्योंकि पुस्तकों के मूल्य व सोने के मूल्यों के मध्य कोई कारण-कार्य का संबंध सुनिश्चित नहीं किया जा सकता।

अतः इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रत्येक सहसंबंध गुणांक कारण-कार्य संबंध को सुनिश्चित नहीं करता।

9.5 सहसंबंध का महत्व (Importance) :

सहसंबंध का व्यावहारिक विज्ञान व भौतिक विज्ञान विषयों में बहुत महत्व है। इसे निम्न तरीके से समझा जा सकता है:-

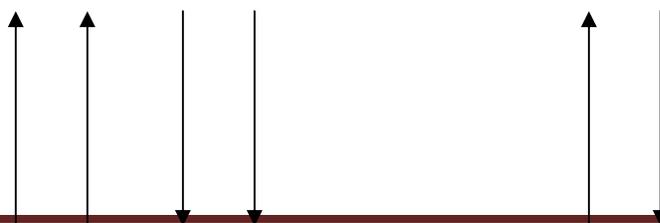
- सहसंबंध के आधार पर दो संबंधित चर-मूल्यों में संबंध की जानकारी प्राप्त होती है।
- सहसंबंध विश्लेषण शोध कार्यों में सहायता प्रदान करता है।
- सहसंबंध के सिद्धान्त पर विचरण अनुपात (Ratio of Variation) तथा प्रतीपगमन (Regression) की धारणाएँ आधारित है, जिसकी सहायता से दूसरी श्रेणी के संभावित चर-मूल्यों का विश्वसनीय अनुमान लगाया जा सकता है।
- सहसंबंध का प्रभाव भविष्यवाणी की अनश्चितता के विस्तार को कम करता है।
- व्यावहारिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दो या अधिक घटनाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने एवं उनमें पारस्परिक संबंध का विवेचन करके पूर्वानुमान लगाने में सहसंबंध बहुत उपयोगी सिद्ध होता है।

9.6 सहसंबंध के प्रकार (Types of Correlation) :

सहसंबंध को हम दिशा, अनुपात, तथा चर-मूल्यों की संख्या के आधार पर कई भागों में विभक्त कर सकते हैं।

i. **धनात्मक एवं ऋणात्मक सहसंबंध (Positive and Negative Correlation) :-**

यदि दो पद श्रेणियों या चरों में परिवर्तन एक ही दिशा में हो तो उसे धनात्मक सहसंबंध कहेंगे। जैसे- अधिगम की मात्रा में वृद्धि से शैक्षिक उपलब्धि का बढ़ना। इसके विपरीत यदि एक चर के मूल्यों में एक दिशा परिवर्तन होने से दूसरे चर के मूल्यों में विपरीत दिशा में परिवर्तन हो तो ऐसा सहसंबंध ऋणात्मक सहसंबंध कहलाएगा। इसके अन्तर्गत एक चर-मूल्य में वृद्धि तथा दूसरे चर-मूल्य में कमी होती है तथा एक के मूल्य घटने से दूसरे के मूल्य बढ़ने लगते हैं। धनात्मक एवं ऋणात्मक सहसंबंध को निम्न रेखाचित्र की मदद से समझा जा सकता है:-



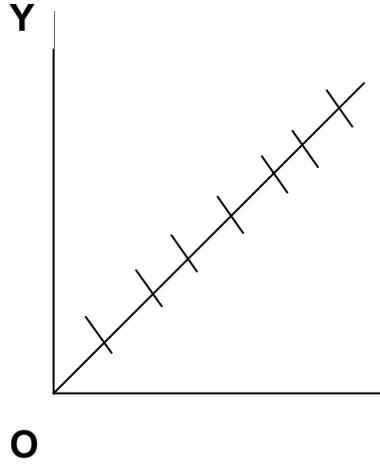
उत्तराखण्ड

धनात्मक सहसंबंध

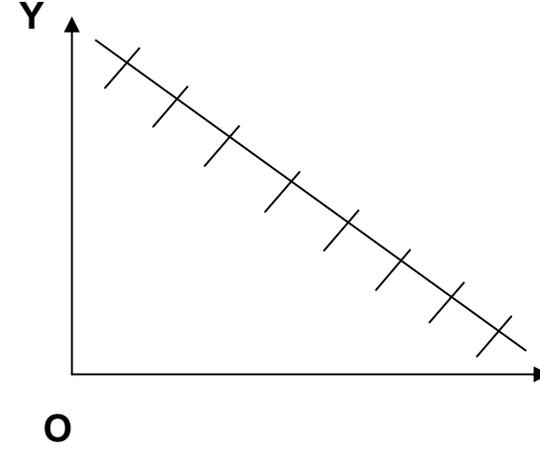
मुक्त

ऋणात्मक सहसंबंध

अग्रांकित रेखाचित्र में पूर्ण धनात्मक तथा पूर्ण ऋणात्मक सह संबंध को प्रदर्शित किया गया है।



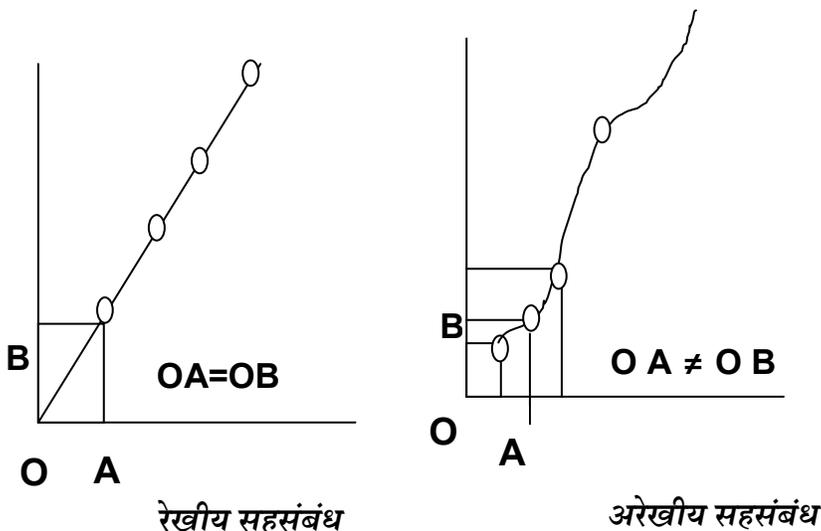
पूर्ण धनात्मक सह संबंध



पूर्ण ऋणात्मक सह संबंध

- ii. **रेखीय तथा अ-रेखीय सहसंबंध (Linear or Non-Linear Correlation):-**
 परिवर्तन अनुपात की सममितता के आधार पर सहसंबंध रेखीय अथवा अ-रेखीय हो सकता है। रेखीय सहसंबंध में परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान होता है अर्थात् यदि इन चर-मूल्यों को बिन्दु-रेखीय पत्र पर अंकित किया जाय तो वह रेखा एक सीधी रेखा के रूप में होगी जैसे- यदि छात्रावास से छात्रों की संख्या को दुगुनी कर दी जाय फलस्वरूप यदि खाद्यान्न की मात्रा भी दुगुनी दर से खपत हो तो इसे रेखीय सहसंबंध (Linear Correlation) कहेंगे। इसके विपरीत जब परिवर्तन का अनुपात स्थिर नहीं होता तो ऐसे सहसंबंध को अरेखीय सहसंबंध कहेंगे। जैसे- छात्रों की संख्या दुगुनी होने पर खाद्यान्नों की मात्रा का दुगुनी दर से खपत नहीं होना उससे अधिक या कम मात्रा में खपत होना, अर्थात् दोनों चरों के परिवर्तन के अनुपात में स्थायित्व का अभाव हो, ऐसी स्थिति को यदि बिन्दु

रेखीय पथ पर प्रदर्शित किया जाय तो यह रेखा, वक्र के रूप में बनेगी। रेखीय व अरेखीय सहसंबंधों को निम्न रेखाचित्रों के माध्यम से भलीभाँति समझा जा सकता है:-

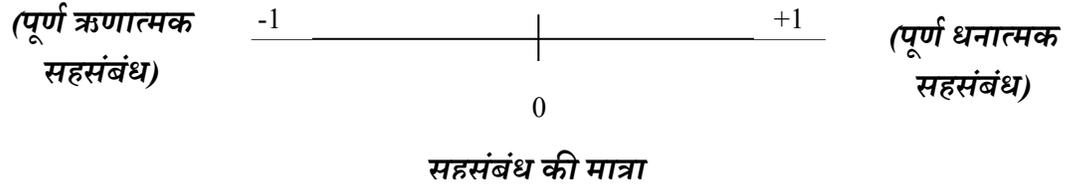


- iii. सरल, आंशिक तथा बहुगुणी सहसंबंध (Simple, Partial and Multiple Correlation):- दो चर मूल्यों (जिनमें एक स्वतंत्र तथा एक आश्रित हो) के आपसी सहसंबंध को सरल सहसंबंध कहते हैं। तीन अथवा अधिक चर-मूल्यों के मध्य पाये जाने वाला सहसंबंध आंशिक अथवा बहुगुणी हो सकता है। तीन चरों में से एक स्वतंत्र चर को स्थिर मानते हुए दूसरे स्वतंत्र चर मूल्य का आश्रित चर-मूल्य से सहसंबंध ज्ञात किया जाता है तो उसे आंशिक सहसंबंध कहेंगे। उदाहरणार्थ- यदि रूचि को स्थिर मानकर शैक्षिक उपलब्धि पर अभिक्षमता की मात्रा के प्रभाव का अध्ययन किया जाय तो यह आंशिक सहसंबंध कहलायेगा, जबकि बहुगुणी सहसंबंध के अन्तर्गत तीन या अधिक चर मूल्यों के मध्य सहसंबंध स्थापित किया जाता है। इसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक स्वतंत्र चर-मूल्य होते हैं एवं एक आश्रित चर होता है। उदाहरणार्थ- यदि बुद्धि, रूचि दोनों का शैक्षिक उपलब्धि पर सामूहिक प्रभाव का अध्ययन किया जाय तो यह बहुगुणी सहसंबंध कहलायेगा।

9.7 सहसंबंध का परिमाण (Degree of Correlation) :-

सहसंबंध का परिकलन सहसंबंध गुणांक (Coefficient of Correlation) के रूप में किया जाता है। इसके आधार पर धनात्मक (Positive) एवं ऋणात्मक (Negative) सहसंबंध के निम्न परिमाण हो सकते हैं:-

- i. **पूर्ण धनात्मक अथवा पूर्ण ऋणात्मक सहसंबंध (Perfect Positive or Perfect Negative Correlation):-** जब दो पद श्रेणियों में परिवर्तन समान अनुपात एवं एक ही दिशा में हो तो उसे पूर्ण धनात्मक सहसंबंध कहेंगे। ऐसी स्थिति में सहसंबंध गुणांक (+1) होगा। इसके विपरीत जब दो मूल्यों में परिवर्तन समान अनुपात में ठीक विपरीत दिशा में हो तो उसे पूर्ण ऋणात्मक सहसंबंध कहेंगे। ऐसी स्थिति में सहसंबंध गुणांक (-1) होगा। सहसंबंध गुणांक का मूल्य हर दशा में 0 तथा ±1 के मध्य



सहसंबंध गुणांक का मान व इसका अर्थापन

सहसंबंध परिमाण (Degree of Correlation)	धनात्मक सहसंबंध (Positive Correlation)	ऋणात्मक सहसंबंध (Negative Correlation)
पूर्ण (Perfect)	+1	-1
उच्च स्तरीय (High Degree)	+ .75 से +1 के बीच	-.75 से -1 के मध्य
मध्यम स्तरीय (Moderate Degree)	+ .25 से +.75 के बीच	-.25 से -.75 के मध्य
निम्न स्तरीय (Low Degree)	0 से +.25 के मध्य	0 से -.25
सहसंबंध का पूर्णतः अभाव (No Correlation)	0	0

9.9 सहसंबंध ज्ञात करने की विधियाँ (Methods of Determining Correlation) :-

कार्ल पियर्सन सहसंबंध गुणांक:

सहसंबंध गुणांक ज्ञात करने के लिए यह विधि सर्वश्रेष्ठ समझी जाती है। इस विधि में सहसंबंध की दिशा तथा संख्यात्मक मात्रा का माप भी किया जाता है। यह सहसंबंध गुणांक **माध्य एवं प्रमाप विचलन** पर आधारित है। अतः इसमें गणितीय दृष्टि से पूर्ण शुद्धता पायी जाती है। इस रीति का प्रयोग सर्वप्रथम कार्ल पियर्सन ने 1890 में जीवशास्त्र की समस्याओं के अध्ययन में किया था। इस रीति के अन्तर्गत दो चरों के मध्य सहसंबंध गुणांक (Coefficient Correlation) ज्ञात करते हैं, जिसे संकेताक्षर 'r' से संबोधित किया जाता है। इस विधि की मुख्य विशेषताएँ निम्नवत हैं :-

1. इस विधि से सहसंबंध की दिशा का पता चलता है कि वह धनात्मक (+) है या ऋणात्मक (-)।
2. इस विधि के सहसंबंध गुणांक से मात्रा व सीमाओं (-1 से 0 से +1) का ज्ञान सरलता से हो जाता है।
3. इसमें श्रेणी के समस्त पदों को महत्व दिये जाने के कारण इसे सह-विचरण (Covariance) का एक अच्छा मापक माना जाता है।

$$\text{सूत्रानुसार (Covariance)} = \frac{\sum xy}{N} \quad \begin{array}{l} x = X - \bar{X} \\ y = Y - \bar{Y} \end{array}$$

4. सहसंबंध गुणांक चरों के मध्य सापेक्ष संबंध की माप हैं अतः इसमें इकाई नहीं होती।
5. सहसंबंध गुणांक पर मूल बिन्दु तथा पैमाने से परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
6. सह-विचरण से कार्ल पियर्सन के सहसंबंध की गणना की जा सकती है।

$$\text{जैसे } r = \frac{\text{Covariance}}{\sqrt{\sigma_x^2 \cdot \sigma_y^2}}$$

9.11 कार्ल पियर्सन के सहसंबंध गुणांक की गणना:

कार्ल पियर्सन का सहसंबंध गुणांक ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम सह-विचरण (Covariance) ज्ञात करते हैं। इसे सहसंबंध गुणांक में परिवर्तन करने के लिए दोनों श्रेणियों के प्रमाप विचलनों के गुणनफल से भाग दे दिया जाता है। इस प्रकार प्राप्त परिणाम ही कार्ल पियर्सन का सहसंबंध गुणांक कहलाता है।

$$\text{सूत्रानुसार:- } r = \frac{\Sigma xy}{N\sigma_x\sigma_y}$$

व्यक्तिगत (Individual Series):- व्यक्तिगत श्रेणी में सहसंबंध गुणांक ज्ञात करने की दो विधियाँ हैं:-

- i. **प्रत्यक्ष विधि (Direct Method):-** प्रत्यक्ष विधि से सहसंबंध गुणांक निम्न सूत्रों में से किसी एक के द्वारा ज्ञात किया जा सकता है:-

$$\text{प्रथम सूत्र :- } r = \frac{\text{Covariance}}{\sigma_x \cdot \sigma_y}$$

$$\text{द्वितीय सूत्र:- } \frac{\Sigma xy}{N\sigma_x\sigma_y} \quad \text{तृतीय सूत्र:- } r = \frac{\Sigma xy}{N\sqrt{\frac{\Sigma x^2}{N} \cdot \frac{\Sigma y^2}{N}}}$$

$$\text{चतुर्थ सूत्र:- } \frac{\Sigma xy}{\sqrt{\Sigma x^2 \cdot \Sigma y^2}}$$

- r = सहसंबंध गुणांक
- Σxy = दोनों श्रेणियों के माध्यों से विचलनों के गुणनफल का योग। Σx^2
= X श्रेणी के माध्य से विचलन वर्गों का योग।
- Σy^2 = Y श्रेणी के माध्य से विचलन वर्गों का योग।
- σ_x = X श्रेणी का प्रमाप विचलन σ_y = Y श्रेणी
का प्रमाप विचलन

N = पदों की संख्या

उपर्युक्त चारों ही सूत्र मूल रूप से एक ही हैं अतएव किसी भी सूत्र से सहसंबंध गुणांक की गणना करने पर परिणाम एक ही होगा।

उदाहरण:- अग्र समकों के आधार पर प्रत्यक्ष रीति द्वारा कार्ल पियर्सन का सहसंबंध गुणांक ज्ञात कीजिए।

X	10	20	30	40	50	60	70
Y	5	4	2	10	20	25	04

हल:- Calculation of the Coefficient of Correlation

X	$\bar{X} = 40$ से विचलन = x	विचलन का वर्ग x^2	Y	$\bar{Y} = 10$ से विचलन = y	y^2	xY
10	-30	900	05	-5	25	150
20	-20	400	04	-6	36	120
30	-10	100	02	-8	64	80
40	0	0	10	0	0	0
50	10	100	20	10	100	100
60	20	400	25	15	225	300
70	30	900	04	-06	36	-180
$\Sigma X = 280$ $N = 7$		$\Sigma x^2 = 2800$	$\Sigma Y = 70$ $N = 7$		$\Sigma y^2 = 616$	$\Sigma xy = 570$

$$\bar{X} = \frac{\Sigma X}{N} = \frac{280}{7} = 40$$

$$\bar{Y} = \frac{\Sigma Y}{N} = \frac{70}{7} = 10$$

$$\sigma_x = \sqrt{\frac{\Sigma x^2}{N}} = \sqrt{\frac{2800}{7}} = \sqrt{400} = 20$$

$$\sigma_y = \sqrt{\frac{\Sigma y^2}{N}} = \sqrt{\frac{616}{7}} = 9.38$$

प्रथम सूत्र के अनुसार:- $r = \frac{\text{Covariance}}{\sigma_x \cdot \sigma_y} = \frac{\Sigma xy / N}{\sigma_x \cdot \sigma_y} = \frac{570 \div 7}{20 \times 9.38} = \frac{81.42}{187.6} = 0.434$

निष्कर्ष:- X तथा Y चरों में मध्यम स्तरीय धनात्मक सहसंबंध है।

- ii. **सहसंबंध गुणांक ज्ञात करने की लघु रीति (short-cut method of calculating Coefficient of Correlation):-** इस विधि में किसी भी पूर्णांक मूल्यों को कल्पित माध्य मानकर उससे प्रदत्त मूल्यों के विचलन ($X - A_x = dx$ तथा $Y - A_y = dy$) ज्ञात कर लेने चाहिए। तत्पश्चात् इन विचलनों के वर्ग (d^2x तथा d^2y) ज्ञात कर लेते हैं। अन्त में दोनों श्रेणियों के विचलनों का गुणनफल $d_x d_y$ ज्ञात कर लेते हैं। इन सभी मूल्यों का योग ज्ञात करने के पश्चात् निम्न मूल्य ज्ञात हो जाते हैं :- N , Σdx , Σdy , Σd^2x , Σd^2y , तथा $\Sigma dx dy$

इनके आधार पर अग्रलिखित में किसी एक सूत्र का प्रयोग करके सहसंबंध गुणांक ज्ञात किया जा सकता है।

प्रथम सूत्र :- $r = \frac{\Sigma dx dy - N(\bar{X} - A_x)(\bar{Y} - A_y)}{N\sigma_x \sigma_y}$

$\Sigma dx dy =$ कल्पित माध्यों से लिए गए विचलनों के गुणनफलों का योग

द्वितीय सूत्र:-

$$\frac{\Sigma dx dy - N \left[\frac{\Sigma dx}{N} \right] \left[\frac{\Sigma dy}{N} \right]}{N \sqrt{\frac{\Sigma d^2 x}{N} - \left[\frac{\Sigma dx}{N} \right]^2} \times \sqrt{\frac{\Sigma d^2 y}{N} - \left[\frac{\Sigma dy}{N} \right]^2}}$$

तृतीय सूत्र:- $= \frac{\Sigma dx dy \cdot N - (\Sigma dx)(\Sigma dy)}{\sqrt{\Sigma d^2 x \cdot N - (\Sigma dx)^2} \times \sqrt{\Sigma d^2 y \cdot N - (\Sigma dy)^2}}$

चतुर्थ सूत्र:-
$$r = \frac{\sum dxdy - \left(\frac{\sum dx \cdot \sum dy}{N}\right)}{\sqrt{\sum d^2x - \frac{(\sum dx)^2}{N}} \sqrt{\sum d^2y - \frac{(\sum dy)^2}{N}}}$$

टिप्पणी:- उपर्युक्त चारों सूत्र एक ही सूत्र के विभिन्न रूप हैं। इनमें से किसी के भी प्रयोग द्वारा सह-संबंध गुणांक का उत्तर एक ही आता है। लेकिन सुविधा की दृष्टि से आपको तृतीय सूत्र का ही प्रयोग करना चाहिए।

उदाहरण:- निम्न समकों से सहसंबंध गुणांक का परिकलन कीजिए।

X	10	20	30	40	50	60	70
Y	2	4	8	5	10	15	14

हल:- सहसंबंध गुणांक का परिकलन (Calculation of the Coefficient of Correlation)

X	A=40 से विचलन (X-A)=dx	d ² _x	Y	A=5 से विचलन (X-5)=dy	d ² _y	dx dy
10	-30	900	2	-3	9	90
20	-20	400	4	-1	1	20
30	-10	100	8	3	9	-30
40	0	0	5	0	0	0
50	10	100	10	5	25	50
60	20	400	15	10	100	200
70	30	900	14	9	81	270
N=7	∑dx=0	∑d ² x=2800	N=7	∑dy=23	∑d ² y=325	∑dxdy=600

$$r = \frac{\Sigma dx dy . N - (\Sigma dx)(\Sigma dy)}{\sqrt{\Sigma d^2 x . N - (\Sigma dx)^2} \sqrt{\Sigma d^2 y . N - (\Sigma dy)^2}}$$

$$= \frac{600 \times 7 - 0 \times 23}{2800 \times 7 - (0)^2} \frac{\sqrt{325 \times 7 - (23)^2}}{\sqrt{19600 \times 7 - (23)^2}} = \frac{4200}{140 \times 41.785} = \frac{4200}{5849.923} = 0.717$$

अतः दोनों चरों में उच्च मध्य स्तरीय सहसंबंध है।

अपनी अधिगम प्रगति जानिए:

1. यदि $r = 0.06$ हो तो इसका निश्चयन गुणांक..... होगा।
2.का तात्पर्य है, आश्रित चर में होने वाले परिवर्तनों के लिए स्वतंत्र चर कितना उत्तरदायी है।
3. कुल विचरण को 1 मानने पर 1 में से निश्चयन गुणांक को घटाने परज्ञात किया जा सकता है।
4. = $1 - r^2$
5. SE of = $\frac{1 - r^2}{\sqrt{N}}$
6. सहसंबंध गुणांक की विश्वसनीयता जाँच करने हेतुका प्रयोग किया जाता है।
7. तीन चरों में से एक स्वतंत्र चर को स्थिर मानते हुए दूसरे स्वतंत्र चर मूल्य का आश्रित चर-मूल्य से सहसंबंध ज्ञात किया जाता है तो उसेसहसंबंध कहते हैं।
8. जब दो पद श्रेणियों में परिवर्तन समान अनुपात एवं एक ही दिशा में हो तो उसेसहसंबंध कहते हैं।
9. यदि एक चर के मूल्यों में एक दिशा में परिवर्तन होने से दूसरे चर के मूल्यों में विपरीत दिशा में परिवर्तन हो तो ऐसा सहसंबंधकहलाता है।
10. जब दो चरों में परिवर्तन का अनुपात स्थिर नहीं होता तो ऐसे सहसंबंध कोसहसंबंध कहते हैं।

9.14 सारांश (Summary) :

दो या दो से अधिक चरों के मध्य अन्तर्संबंध को सहसंबंध की संज्ञा दी जाती है। सहसंबंध के परिमाण को अंकों में व्यक्त किया जाता है, जिसे सहसंबंध गुणांक (Coefficient of Correlation) कहा जाता है।

धनात्मक एवं ऋणात्मक सहसंबंध (Positive and Negative Correlation) :- यदि दो पद श्रेणियों या चरों में परिवर्तन एक ही दिशा में हो तो उसे धनात्मक सहसंबंध कहेंगे। इसके विपरीत यदि एक चर के मूल्यों में एक दिशा परिवर्तन होने से दूसरे चर के मूल्यों में विपरीत दिशा में परिवर्तन हो तो ऐसा सहसंबंध ऋणात्मक सहसंबंध कहलाएगा।

रेखीय तथा अ-रेखीय सहसंबंध (Linear or Non-Linear Correlation):- परिवर्तन अनुपात की सममितता के आधार पर सहसंबंध रेखीय अथवा अ-रेखीय हो सकता है। रेखीय सहसंबंध में परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान होता है अर्थात् यदि इन चर-मूल्यों को बिन्दु-रेखीय पत्र पर अंकित किया जाय तो वह रेखा एक सीधी रेखा के रूप में होगी। इसके विपरीत जब परिवर्तन का अनुपात स्थिर नहीं होता तो ऐसे सहसंबंध को अरेखीय सहसंबंध कहेंगे।

9.15 शब्दावली (Glossary)

सहसंबंध (Correlation): दो या दो से अधिक चरों के मध्य अन्तर्संबंध को सहसंबंध की संज्ञा दी जाती है।

सहसंबंध गुणांक (Coefficient of Correlation): सहसंबंध के परिमाण को अंकों में व्यक्त किया जाता है, जिसे सहसंबंध गुणांक (Coefficient of Correlation) कहा जाता है।

धनात्मक सहसंबंध (Positive Correlation): यदि दो पद श्रेणियों या चरों में परिवर्तन एक ही दिशा में हो तो उसे धनात्मक सहसंबंध कहते हैं।

ऋणात्मक सहसंबंध (Negative Correlation): यदि एक चर के मूल्यों में एक दिशा में परिवर्तन होने से दूसरे चर के मूल्यों में विपरीत दिशा में परिवर्तन हो तो ऐसा सहसंबंध ऋणात्मक सहसंबंध कहलाता है।

रेखीय सहसंबंध (Linear Correlation): रेखीय सहसंबंध के अन्तर्गत दो चरों में परिवर्तन का अनुपात स्थायी रूप से समान होता है अर्थात् यदि चर-मूल्यों को बिन्दु-रेखीय पत्र पर अंकित किया जाय तो वह रेखा एक सीधी रेखा के रूप में होती है।

अ-रेखीय सहसंबंध (Non-Linear Correlation): जब दो चरों में परिवर्तन का अनुपात स्थिर नहीं होता तो ऐसे सहसंबंध को अरेखीय सहसंबंध कहते हैं।

सरल सहसंबंध (Simple Correlation): दो चर मूल्यों (जिनमें एक स्वतंत्र तथा एक आश्रित हो) के आपसी सहसंबंध को सरल सहसंबंध कहते हैं।

आंशिक सहसंबंध (Partial Correlation): तीन चरों में से एक स्वतंत्र चर को स्थिर मानते हुए दूसरे स्वतंत्र चर मूल्य का आश्रित चर-मूल्य से सहसंबंध ज्ञात किया जाता है तो उसे आंशिक सहसंबंध कहते हैं।

बहुगुणी सहसंबंध (Multiple Correlation): तीन या अधिक चर मूल्यों के मध्य सहसंबंध को बहुगुणी सहसंबंध कहते हैं।

कार्ल पियर्सन सहसंबंध गुणांक: यह सहसंबंध गुणांक **माध्य एवं प्रमाप विचलन** पर आधारित है। इस रीति के अन्तर्गत दो चरों के मध्य सहसंबंध गुणांक (Coefficient Correlation) ज्ञात करते हैं, जिसे संकेताक्षर 'r' से संबोधित किया जाता है।

9.16 अपनी अधिगम प्रगति जानिए से संबंधित प्रश्नों के उत्तर

1. $(r)^2 = 0.36$ 2. निश्चयन गुणांक 3. अनिश्चयन गुणांक 4. K^2 5. r 6. प्रमाप विभ्रम
7. आंशिक 8. पूर्ण धनात्मक 9. ऋणात्मक सहसंबंध 10. अरेखीय

9.17 संदर्भ ग्रन्थ सूची/ पाठ्य सामग्री (References/ Useful Readings)

1. सिंह, ए०के० (2007) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास
2. गुप्ता, एस०पी० (2008) : मापन एवं मूल्यांकन, इलाहाबाद, शारदा पब्लिकेशन
3. राय, पारसनाथ (2001) : अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स

4. Best, John W. & Kahn (2008). Research in Education, New Delhi, PHI.
5. Good, Carter, V. (1963). Introduction to Educational Research, New York, Rand Mc Nally and company.

9.18 निबंधात्मक प्रश्न

1. सहसंबंध का अर्थ बताईये व इसके विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट कीजिये।
2. सहसंबंध के विभिन्न मापकों का परिकलन कर सकेंगे।
3. सहसंबंध के विभिन्न मापकों की तुलना कर सकेंगे।
4. सहसंबंध गुणांक का अर्थापन कर सकेंगे।

इकाई 10: प्रदत्तों का चित्रात्मक प्रतिरूप (*Graphic Representation of Data*)

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 चित्रात्मक प्रतिरूप से अभिप्राय

10.4 प्रदत्तों से अभिप्राय

10.5 एक लेखाचित्र की विशेषताएं

10.6 लेखाचित्र के प्रकार

10.7 प्रमुख आरेख

10.8 सारांश

10.9 लघु उत्तरीय प्रश्न-

10.1 प्रस्तावना - किसी सूचना का किसी दृश्य-तकनीक के अनुसार द्विविमीय (2D) ज्यामिति में सांकेतिक अभिव्यक्ति सरेखी, या आरेख (diagram) कहलाता है। कभी-कभी इसे ग्राफ नाम से भी पुकारते हैं। आरेख वह चित्र है जिसके विभिन्न भागों के परस्पर सम्बन्ध आरेख से निरूपित वस्तुओं के परस्पर सम्बन्ध को स्पष्ट करते हैं तथा उन सम्बन्धों को जो चित्र से आरेखी रीति से अभिव्यक्त नहीं होते, चित्र में अंकित संख्याओं अथवा अन्य प्रविष्टियों द्वारा दिखाते हैं। किसी आरेख का अभिप्राय उन मुख्य सम्बन्धों को नेत्रों के समक्ष स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करना है जिनपर ध्यान आकर्षित करना हो और कभी-कभी आरेख से अभिव्यक्त वस्तु से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण राशियों के यथार्थ संख्यात्मक मान को, चित्र पर माप द्वारा, दिखाना है।

10.2 उद्देश्य-

1. चित्रात्मक प्रतिरूप का बालकों को ज्ञान कराना
2. प्रदत्तों का बालकों को ज्ञान कराना।
3. एक लेखाचित्र की विशेषताओं से परिचित कराना। -

10.3 चित्रात्मक प्रतिरूप से अभिप्राय :-

एक लेखाचित्र (चार्ट), आंकड़ों का आलेखीय प्रस्तुतीकरण है, जिसमें "आंकड़ों को प्रतीक द्वारा दर्शाया जाता है, जैसे बार चार्ट में बार के रूप में, रेखा चार्ट में रेखाओं के रूप में, या पाइ चार्ट में टुकड़ों के रूप में". एक चार्ट में सारणीबद्ध सांख्यिक आंकड़ों, प्रकार्यों या किसी प्रकार की गुणात्मक संरचनाओं को प्रदर्शित किया जाता है। एक डेटा चार्ट एक प्रकार का आरेख या ग्राफ है, जो एक संख्यात्मक या गुणात्मक आंकड़ों के सेट को प्रबंधित और प्रस्तुत करता है। जिन मानचित्रों को किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए कुछ अतिरिक्त जानकारी के साथ सजाया जाता है उन्हें अक्सर लेखाचित्र (चार्ट) कहते हैं, जैसे कि समुद्री चार्ट या वैमानिक चार्ट. अन्य विषय विशिष्ट निर्माणों को कभी-कभी चार्ट कहा जाता है, जैसे कि संगीत अंकन में कॉर्ड चार्ट या एलबम लोकप्रियता के लिए रिकॉर्ड चार्ट. चार्ट का उपयोग अक्सर आंकड़ों की अत्यधिक मात्रा को समझने और उन आंकड़ों के कुछ हिस्सों के बीच रिश्तों को जानने के लिए किया जाता है। लेखाचित्र को आमतौर पर उन कच्चे आंकड़ों की तुलना में अधिक तेजी से पढ़ा जा सकता है जिनके आधार पर उस लेखाचित्र का निर्माण किया गया है। विविध क्षेत्रों में उनका एक व्यापक उपयोग किया जाता है और उन्हें हाथ से बनाया जा सकता है (अक्सर ग्राफ पेपर पर) या चार्ट अनुप्रयोग का उपयोग करते हुए कंप्यूटर द्वारा बनाया जा सकता है। किसी दिए गए डेटा सेट को प्रदर्शित करने के लिए चार्ट के कुछ विशेष प्रकार, अन्य की तुलना में अधिक उपयोगी होते हैं। उदाहरण के लिए, जो आंकड़ें अलग-अलग समूहों में प्रतिशत दर्शाते हैं, (जैसे कि "संतुष्ट, असंतुष्ट, अनिश्चित") उन्हें अक्सर पाई चार्ट में प्रदर्शित किया

जाता है, लेकिन जब उन्हें एक क्षैतिज बार चार्ट में प्रस्तुत किया जाता है, तो उन्हें समझना आसान होता है।⁴ दूसरी ओर, जो आंकड़ें ऐसी संख्याओं को प्रदर्शित करते हैं जो समय के साथ बदलते हैं

10.4 प्रदत्तों से अभिप्राय : - गुणात्मक या मात्रात्मक चर के मानों के समुच्चय को आँकड़ा, दत्त या डेटा (Data) कहते हैं। आँकड़े मापे जाते हैं, एकत्र किये जाते हैं, रिपोर्ट किये जाते हैं तथा उनका विश्लेषण किया जाता है। विश्लेषण के पश्चात आँकड़ों को ग्राफ या छबि (इमेज) के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। आँकड़े अपने आप में 'सूचना' नहीं होते, उनका प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) करके उनसे सूचना निकाली जाती है। आँकड़ा विज्ञान (data science) आँकड़ों का विश्लेषण करके उनसे ज्ञान (जानकारी) बाहर निकालता है। आँकड़ा विज्ञान गणित, सांख्यिकी, सूचना सिद्धान्त, सूचना प्रौद्योगिकी आदि अनेकों क्षेत्रों के सिद्धान्तों तथा तकनीकों का प्रयोग करता है। वे विधियाँ जो विशाल आँकड़ों के लिये भी काम करती हैं वे आँकड़ा विज्ञान के क्षेत्र में विशेष महत्व रखती हैं। कृत्रिम बुद्धि की मशीन अधिगम (machine learning) नामक शाखा के विकास से इस क्षेत्र के विकास को नयी गति और महत्व मिला है। सांख्यिकी, गणित की वह शाखा है जिसमें आँकड़ों का संग्रहण, प्रदर्शन, वर्गीकरण और उसके गुणों का आकलन का अध्ययन किया जाता है। सांख्यिकीय तरीकों को डेटा के संग्रह के संग्रहण अथवा वर्णन के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। इसे वर्णनात्मक सांख्यिकी (descriptive statistics) कहा जाता है। इसके अतिरिक्त, डेटा में पैटर्न को इस तरह से मॉडल किया जा सकता है कि वह निष्कर्षों की यादृच्छिकता और अनिश्चितता का कारण बने और फिर इस प्रक्रिया को उस विधि, या जिस जनसंख्या का अध्ययन किया जा रहा हो, उसके बारे में अनुमान लगाने के लिए किया जाता है। इसे अनुमानित सांख्यिकी (inferential statistics) कहा जाता है। वर्णनात्मक तथा अनुमानित सांख्यिकी, दोनों में व्यावहारिक सांख्यिकी सम्मिलित है। एक और विद्या है - गणितीय सांख्यिकी (mathematical statistics), जो विषय के

सैद्धान्तिक आधार से सम्बन्ध रखती है। आप किरण किसी श्रेणी में पदों के बेकरार को प्रदर्शित करता है जबकि विषमता का संबंध उसकी आकृति की विशिष्टताओं से होता है अन्य शब्दों में अवकरण हमें श्रेणी की संरचना के बारे में बताता है जबकि विषमता हमें वक्र की आकृति के बारे में बताता है अपकिरण हमें श्रेणी के पदों के मानक रूप में स्वीकृत अन्य किसी पद के व्यक्तिगत अंतरों की ओर संकेत करता है विषमता विचलनों की दशा की ओर संकेत करता है अब करण द्वितीय श्रेणी के माध्यम पर आधारित है।

10.5 एक लेखाचित्र की विशेषताएं-

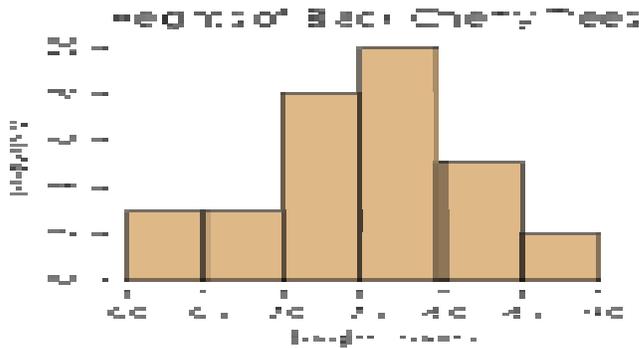
एक चार्ट विभिन्न प्रकार के रूप धारण कर सकता है, जिसकी कुछ विशेषताएं हैं जो चार्ट को ऐसी क्षमता प्रदान करती हैं जिससे वह आंकड़ों से अर्थ निकालने में सक्षम होता है।

1. आम तौर पर एक चार्ट चित्रमय होता है, जिसमें पाठ बहुत कम शामिल होते हैं, क्योंकि मनुष्य आम तौर पर पाठ की तुलना में चित्रों से अर्थ निकालने में सक्षम होते हैं।
2. ग्राफ में पाठ का अधिक महत्वपूर्ण उपयोग उसके शीर्षक में है। एक ग्राफ का शीर्षक आमतौर पर मुख्य चित्र के ऊपर प्रदर्शित होता है और इस बात का एक संक्षिप्त विवरण प्रदान करता है कि ग्राफ में आंकड़ें किन चीजों को संदर्भित करते हैं।
3. आंकड़ों में आयाम को अक्सर अक्षों पर प्रदर्शित किया जाता है। अगर एक द्वैतिज और एक अनुलंब अक्ष का उपयोग किया जाता है, तो उन्हें आम तौर पर क्रमशः x-अक्ष और y-अक्ष के रूप में संदर्भित किया जाता है।

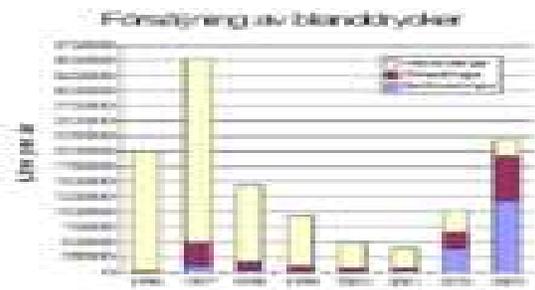
4. प्रत्येक अक्ष का एक पैमाना होगा, जो आवधिक क्रमागति द्वारा चिह्नित होगा और आमतौर पर संख्यात्मक या सुस्पष्ट संकेत के साथ होगा. प्रत्येक अक्ष में आमतौर पर उसके बाहर या बगल में एक लेबल प्रदर्शित होगा, जो प्रदर्शित आयाम का संक्षिप्त वर्णन करेगा |.
5. यदि पैमाना संख्यात्मक है, तो उस पैमाने की इकाई कोष्ठक में होगी जिसके पीछे वह लेबल होगा. उदाहरण के लिए, "तय की गई दूरी (m)" एक ठेठ x-अक्ष लेबल है और उसका अर्थ होगा कि मीटर में तय की गई दूरी, आंकड़ों की क्षैतिज स्थिति से संबंधित है।
6. ग्राफ के भीतर, रेखाओं का एक ग्रिड, आंकड़ों के दृश्य संरेखण में सहायता करने के लिए दिखाई दे सकता है। नियमित या महत्वपूर्ण क्रमागति पर रेखाओं को दृश्य रूप में प्रबल बनाते हुए ग्रिड को बढ़ाया जा सकता है। प्रमुख बनाई गई रेखाओं को फिर प्रमुख ग्रिड रेखाएं कहा जाता है और बाकी ग्रिड रेखाओं को गौड़ ग्रिड रेखाएं कहा जाता है।
7. किसी चार्ट के आंकड़ों, व्यक्तिगत लेबल के साथ या बिना, फॉर्मेट के सभी रूपों में प्रस्तुत हो सकते हैं। यह डॉट या आकृतियों, सम्बद्ध या असम्बद्ध और रंगों और पेटर्न के किसी भी संयोजन में प्रदर्शित हो सकते हैं। अनुमान या रूचि के बिंदु को सूचना निष्कर्षण में सहायता के लिए ग्राफ पर प्रत्यक्ष रूप से दर्शाया जा सकता है।
8. जब किसी चार्ट में प्रदर्शित आंकड़ों में एकाधिक चर होते हैं, तो चार्ट में एक लेजेंड शामिल हो सकता है। एक लेजेंड में उन चरों की एक सूची होती है जो चार्ट में प्रदर्शित होते हैं और उनकी उपस्थिति का एक उदाहरण होता है। इस जानकारी से प्रत्येक चर के आंकड़ों को चार्ट में पहचानने की अनुमति मिलती है।

10.6 लेखाचित्र के प्रकार-

चार सबसे आम लेखाचित्र हैं:



हिस्टोग्राम



बार चार्ट



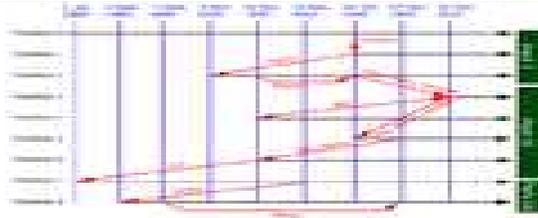
पाइ चार्ट



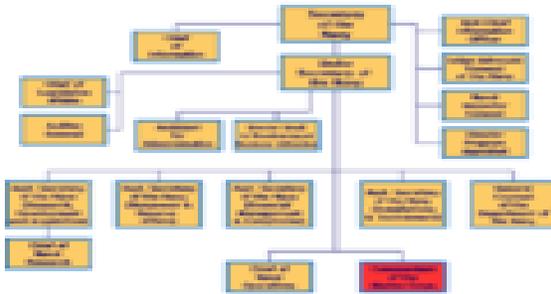
लाइन चार्ट

- एक हिस्टोग्राम आमतौर पर उन अंकों की मात्रा को दर्शाता है जो विभिन्न संख्यात्मक सीमाओं (या बिन) के भीतर पड़ते हैं।
- एक बार चार्ट, विभिन्न श्रेणियों के लिए आवृत्तियों या मूल्यों को दर्शाने के लिए बार का उपयोग करता है।
- एक पाई चार्ट, पाई के एक टुकड़े के रूप में प्रतिशत मान को दिखाता है।
- एक रेखा चार्ट, क्रमवार अवलोकनों का एक दो आयामी स्कैटरप्लॉट है जहां अवलोकन अपने क्रम के अनुसार जुड़े होते हैं।

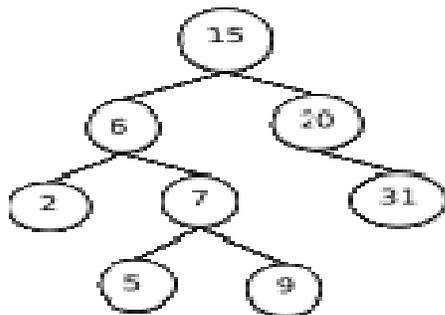
अन्य सामान्य चार्ट-



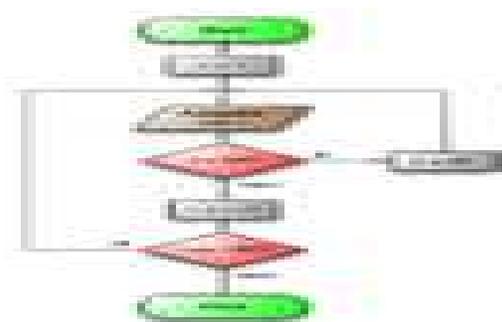
समयरेखा चार्ट



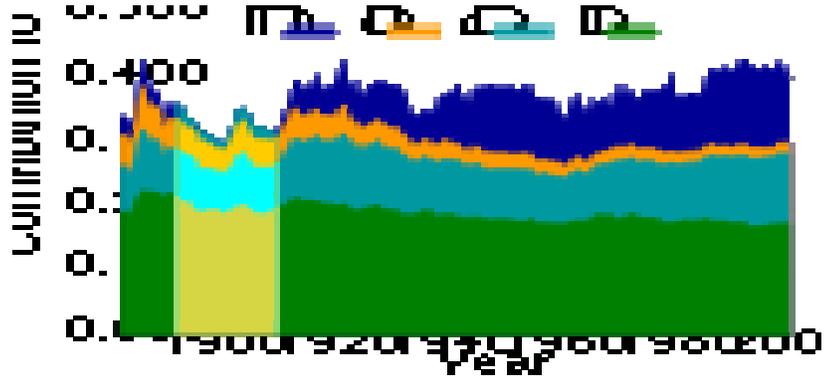
संगठनात्मक चार्ट



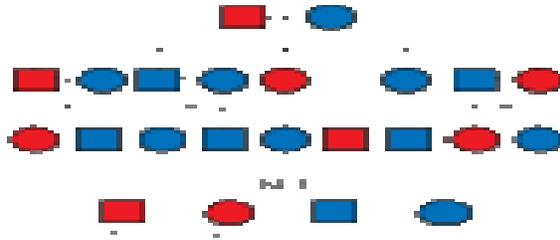
ट्री चार्ट



फ्लो चार्ट



एरिया चार्ट



वंशावली चार्ट

10.7 प्रमुख आरेख-

प्रत्यय की व्यापकता के कारण, आरेख अनेक प्रकार के विशिष्ट अभिप्राय को व्यक्त करने में सहायक होते हैं। कुछ आरेख निम्नलिखित हैं :

- (1) **गणितीय आरेख-** गणितीय लेखों में आरेखों का प्रयोग विशेष रूप से इस कारण किया जाता है कि पाठक को तर्क समझ में आ जाए। एक अच्छा आरेख वह समझा जाता है जो साध्य के मुख्य

लक्षणों को स्पष्ट रूप से प्रकट कर सके। प्रायः गणित में आरेख का वर्णन शब्दों में इतने स्पष्ट [ग] से करते हैं कि पाठक उसको स्वयं भी खींच सकता है। यांत्रिकी में आरेख अधिकतम प्रकार के अभिप्रायों से उपयोग किए जाते हैं। स्थैतिकी में इनका प्रयोग अत्याधिक सुविधाजनक है, क्योंकि किसी स्थैतिक तंत्र के भाग गतिशील नहीं होते।

(2) **रसायन में आरेख**- जॉन डाल्टन ने परमाणु विन्यास सम्बन्धी अपनी संकल्पना में अनेक सामान्य यौगिकों के आरेख प्रकाशित किए। उस समय से इनका प्रयोग रसायनज्ञों द्वारा बहुत मात्रा में किया जा रहा है। इसी भाँति क्रिस्टलकी में क्रिस्टल संरचना की व्याख्या में आरेखों का प्रयोग बहुधा किया जाता है।

(3) **मापक आरेख** - आरेख का प्रयोग मापने में भी करते हैं। इस प्रकार के आरेख का अभिप्राय निदर्शन के अतिरिक्त यथार्थ मापन भी होता है।

(4) **त्रिविमितीय वस्तु आरेख** - किसी दो से अधिक चर राशियों पर निर्भर परिमाणों के कुलक के लेखाचित्र-प्रदर्शन के लिये आरेख पद्धति का प्रयोग सम्भव है। विशेषतः किसी त्रिविमितीय वस्तु के अंगों के परस्पर सम्बन्धों को निरूपित करने के लिये दो अथवा अधिक आरेखों का प्रयोग कर सकते हैं। इस प्रकार की आरेख पद्धति में एक ऐसे निश्चित संकेत की आवश्यकता होती है। जिससे यह ज्ञात होता है कि आरेख किस प्रकार से पूर्ण संरचना से तथा आपस में पृथकतः सम्बन्धित हैं। इमारत और पुल के मानचित्र इसके उदाहरण हैं। ठोस एवं अन्य त्रिविमितीय आकृति को भी एकल आरेख से निरूपित कर सकते हैं।

10.8 सारांश Summary- किसी कम्प्यूटर प्रणाली पर संचित आंकड़े (डेटा) को कम्प्यूटर डेटाबेस कहते हैं। इन आंकड़ों को किसी विशेष पद्धति का अनुसरण करते हुए संग्रह किया जाता है। इन आंकड़ों के आधार एक किसी प्रश्न (जिज्ञासा) का समाधान शीघ्रता से प्राप्त किया जा सकता है। प्रश्न पूछने के लिये एक विशेष कम्प्यूटर भाषा का प्रयोग किया जाता है। जिज्ञासा के समाधान के रूप में प्राप्त आंकड़े सम्यक निर्णय लेने में सहायक होते हैं। ऐसे कम्प्यूटर प्रोग्राम जो कम्प्यूटर पर आंकड़ों को संग्रह करने, उनका प्रबन्धन (आंकड़े जोड़ना, परिवर्तित करना, परिवर्धित करना आदि) करने एवं आंकड़ों पर आधारित प्रश्न पूछने के काम आते हैं, उन्हें डेटाबेस प्रबन्धन प्रणाली (डी बी एम एस) कहते हैं। उदाहरण - किसी संस्था के कर्मचारियों के डेटाबेस पर यह जिज्ञासा की जा सकती है कि कौन-कौन से कर्मचारी ३० वर्ष से कम उम्र के हैं तथा जिनकी आय ३ लाख रुपये वार्षिक से अधिक है। डेटाबेस की सबसे महत्वपूर्ण संकल्पना (कांसेप्ट) यह है कि डेटाबेस रिकॉर्डों (छोटी-छोटी सूचनाओं) का संग्रह है। आज का युग सूचना का युग है। सूचना आंकड़ों पर आधारित होती है। इस कारण वर्तमान युग में डेटाबेस बहुत उपयोगी है। बैंक, रेलवे आरक्षण तथा विभिन्न सरकारी विभाग तरह-तरह के आंकड़ों के आधार पर ही काम करते हैं। कम्प्यूटर की सहायता से, बड़े आकार के आँकड़ों को ग्राफ या किसी अन्य दृश्य रूप में प्रस्तुत करना आँकड़ा चाक्षुषीकरण (Data visualization ; चक्षु-आँख) कहलाता है। बहुत से लोग इसे आज के युग का 'दृश्य संचार' (visual communication) भी मानते हैं। आंकड़ों को दृश्य रूप में प्रस्तुत करने से उनमें छिपी सूचना (जैसे अधिकतम मान, न्यूनतम मान, ट्रेंड आदि) उभरकर सामने आ जाती है और इससे नयी अंतर्दृष्टि (insights) प्राप्त होती है।

10.9 लघु उत्तरीय प्रश्न-

प्रश्न 1 चित्रात्मक प्रतिरूप से आपका क्या अभिप्राय है? चित्रात्मक प्रतिरूप की विशेषताओं का वर्णन कीजिय।

प्रश्न 2 प्रमुख आरेखों का विस्तार से वर्णन कीजिय।

प्रश्न 3 आरेखों से आप क्या समझते हो? प्रमुख आरेखों का विस्तार से वर्णन कीजिय?